हिन्दी रामकाव्य में आञ्जनेय-भक्ति की अभिव्यक्ति

(तुलसी के विशेष परिप्रेक्ष्य में)

(बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झाँसी की पी-एच0डी0 उपाधि हेतु प्रस्तुत)

शोध-प्रबन्ध
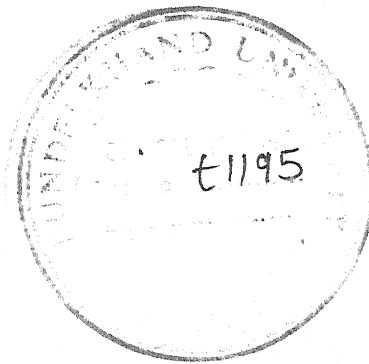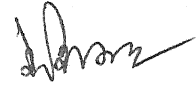
शोध निर्देशक
डॉ0 शशिकान्त अग्निहोत्री
हिन्दी-विभाग
अतर्रा पोस्ट ग्रेजुएट कालेज,
अतर्रा (बाँदा)

शोधकर्त्री
कु0 मनीषा पाण्डेय
अतर्रा (बाँदा)

प्रमाण–पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि कु0 मनीषा पाण्डेय ने 200 दिन रहकर मेरे निर्देशन में "हिन्दी राम काव्य में आंजनेय–भक्ति की अभिव्यक्ति" (तुलसी के विषेश परिप्रेक्ष्य में) शोध–प्रबन्ध प्रस्तुत किया है। यह इनकी मौलिक रचना है।

(डा0 शशिकान्त अग्निहोत्री)

हिन्दी–विभाग

अतर्रा पोस्ट–ग्रेजुएट कालेज

अतर्रा (बांदा)

भूमिका

"जगत प्रकाश प्रकाशक रामू" अखिल लोकनायक सर्वान्तरात्मा रूप में सबमें रमण करने वाले मर्यादा पुरूषोत्तम राम के चरणों का सेवक होना भला किसको ग्राह्य नही होगा। जैसे अयस्कान्त के सानिध्य में लौह में हलचल होती है, वैसे ही भगवान के सानिध्य मात्र से भक्तों को चेतना प्राप्त होती है। जैसे झरोखों में सूर्य के किरणो के सहारे निरन्तर परिभ्रमण करते हुए अपरिगणित त्रसरेणु दिखाई देते है, वैसे ही प्रकृति पार दृश्वा लोकोत्तर पुरूषधौरियो को भगवान के सन्निधान में अनन्त विश्व दिखाई देते है।

'**हरि अनन्त हरि कथा अनन्ता**' महाकवि तुलसीदास की इस अर्द्धाली को साधू , भाष्यकार , साहित्यकार , टीकाकार , विज्ञ, मर्मज्ञ, आलोचक सभी एक स्वर से मुक्तकंठ से स्वीकार करते है। बाल्मीकि से लेकर नरेन्द्र कोहली तक सहस्त्राधिक राम कथा लेखक हुए है, भविष्य में भी राम काव्यो का प्रणयन होता रहेगा। रामकाव्य कारो ने देशकाल परिस्थिति के अनुकूल राम काव्य को ढ़ालने का प्रयास किया है। लालदास का अवध विलास ऐसा ही महाकाव्य है जिसमें युगीन परिस्थितियो के परिप्रेक्ष्य में राम कथा का प्रणयन किया। इसी प्रकार अन्यान्य रामकाव्य इसी धारा में चले। लेकिन तुलसी का राम काव्य अपने ढ़ंग का एक अनूठा काव्य है। गहन अध्ययन के लिए तुलसीदास का सम्पूर्ण साहित्य गीता के समान ही मूल्यवान है किन्तु उनकी भक्ति के प्रभाव के मुकाबले कोई भी विद्वान अपने चिन्तन की पराकाष्ठा को उद्वेलित नही कर सकता है। कारपेन्टर महोदय ने अंग्रेजी में "**थियोलॉजी ऑफ तुलसीदास**" लिखा है, लेकिन वह एक निबन्ध मात्र है। अन्य विद्वानो ने तुलसी साहित्य के अन्यान्य अंगो एवं विभागों पर प्रकाश डालते हुए गोस्वामी जी के तत्व सिद्धान्तो और मानस के भक्तिरस पर भी थोड़ा प्रकाश डाला है, लेकिन समग्र तुलसी साहित्य में आंजनेय भक्ति की अभिव्यक्ति जो तुलसी

के विशेष परिप्रेक्ष्य में हो इस विषय पर शायद कहीं वर्णन नही मिला राम कथा और काव्य कला तो उस लोकहित की भावना के आवरण रूप है, उस पर आंजनेय भक्ति एक ऐसा सम्पूर्ण मूल है जिसका पार पाना उतना ही दुस्साध्य है जितना पारावर की गहराई की माप करना दुस्साध्य है।

लोकहित की भावना के कारण गोस्वामी जी कुछ ऐसी बाते कह गयें है, जो एकत्र किये जाने पर उनायास ही भक्तिशास्त्र का रूप धारण कर लेती है। तुलसी साहित्य में न केवल बुद्धिवाद ह्रदयवाद का सुन्दर सामंजस्य है, न केवल सनातन हिन्दू धर्म, मानव धर्म के विशुद्ध रूप का परिचय है, वरन् एकदम नकद धर्म कहा जा सकता है। वस्तु स्थिति तो यह है कि गोस्वामी तुलसीदास हमारे देश के महान कवियों की पंक्ति में भी महाकवि है और उनकी सम्पूर्ण काव्य सर्जना ही सद्‌काव्य की भूमिका पर सुश्लिष्ट एवं निबद्ध है। अपने साहित्य का जिसको उन्होने बारह भागो में विभक्त कर अलग अलग नामकरण कर (रामचरित मानस, विनय पत्रिका, गीतावली, कवितावली, दोहावली, रामलला नहछू आदि) भक्ति मार्गो की चर्चा करके धर्म और ज्ञान वैराग्य का विस्तृत विवेचन किया है। मानस का प्रणयन गोस्वामी जी ने इतिवृत्त कथन की प्रेरणा से नही प्रत्युत राम के उदान्त चरित्र के साथ हनुमान के उदान्त चरित्र को काव्य एवं कला भूमि पर प्रतिष्ठित कर उसे सहज ही जन मानस में अवतीर्ण करा देने की अदम्य एवं बलवती आकांक्षा से ही किया है।

सर्वमान्य बात यह है कि गोस्वामी जी असाधारण प्रतिभा के सम्पन्न महाकवि थे। गरीब की झोपड़ी से लेकर राजमहल तक निम्न स्तर के पात्र से लेकर उच्च स्तर के पात्र तक का वर्णन उन्होंने पूरी क्षमता के साथ एवं चमत्कारिक दन्त कथाओ से संयोग से वर्णन कर भाषा भाव आदि सभी दृष्टियों का अनुपम कमाल दिखाया है। इसके साथ – साथ 'नाना पुराण निगमागम' कि हजारो सूक्तियों का प्रसंगानुकूल वर्णन किया है। इसलिए उन्हें संस्कृत का ही

प्रकाण्ड पंडित कहा जाना अतिशयोक्ति पूर्ण नही होगा। शोधार्थी का यह दृढ़ निश्चय है कि गोस्वामी जी केवल एक अनुभवी ही नही, वरन् तत्व ज्ञान के परम आचार्य भी थे।

विषयावतार के रूप में तुलसी के विशेष परिप्रेक्ष्य में वर्णित हिन्दी रामकाव्य में आंजनेय भक्ति की अभिव्यक्ति की साहित्यिक समीक्षा करने का प्रयास करने का साहस शोधार्थिनी द्वारा किया गया है। सुगमता की दृष्टि से शोध प्रबन्ध को छह भागो में विभक्त किया गया है।

प्रथम अध्याय में हिन्दी राम काव्य धारा के विकास के तीन कालो का अध्ययन किया गया है। आदिकाल के राम कथा पात्रों का चरित्र चित्रण किया गया है जिसमें बाल्मीकि रामायण की महत्वपूर्ण भूमिका परिलक्षित होती है। ऐसा नही है कि केवल बाल्मीकि रामायण ही मुख्य है बल्कि आदिकालीन रामकाव्यों में वेद, संहिताए, पुराण आदि की भी महत्वपूर्ण भूमिका है, यद्यपि यह सब तुलसी पूर्वोत्तर साहित्य है लेकिन तुलसी के रामचरित मानस में पूर्णतया मिलता है। साथ मध्यकालिक रामकथा के पात्रों का चरित्र चित्रण प्रस्तुत किया गया है। प्रत्येक पात्र के मूल गुणों के परिप्रेक्ष्य में उसके चित्रित चरित्र का उल्लेख किया गया है। आधुनिक काल की राजनीतिक, धार्मिक एवं सामाजिक तथा साहित्यिक परिस्थितियों का आकलन कर रामकाव्यों की समीक्षा की गयी है।

द्वितीय अध्याय में तुलसीदास की भक्ति भावना के आध्यात्मिक आधार के बारे में एवं भक्ति सम्बन्धी चिन्तन धारा, उनके साहित्य तथा आध्यात्मिक संत के रूप में अध्ययन करने का प्रयास किया गया है। भक्ति तथा भक्ति का आध्यात्मिक आधार तथा भक्ति का आध्यात्मिक लक्ष्य, परा, अपरा, प्रकृति विद्या, अविद्या, जड़ चेतन, सूक्ष्म स्थूल, प्रकृति पुरूष आदि ऐसे तथ्य है जिनका आध्यात्मिक विश्लेषण करने का किंचित अल्प प्रयास किया क्योकि आध्यात्म

एक ऐसी धारा है जिसके बहाव में तमाम मतावरोध है। फिर भी चिरन्तन सत्यों का स्पर्श करने वाली विचार अनूभूति को व्यक्त करने का साहस किया है।

तीसरा अध्याय तुलसी के आध्यात्मिक शिल्पी आंजनेय भक्ति भावना से सम्बन्धित है। इस अध्याय में यह दर्शाने का प्रयास किया है कि रामकथा में अंजनी नंदन आंजनेय को तुलसी किस रूप में देखते है क्योकि राम से जोड़ने का सच्चा मार्ग दर्शन आंजनेय का ही है। तुलसीदास पर आंजनेय का प्रभाव तुलसी की दृष्टि में आराध्य राम एवं आध्यात्मिक आंजनेय आदि बिन्दुओं पर शोधार्थिनी ने अपनी विचारमाला को लेखनी के धागो में पिरोकर शोध प्रबन्ध के रूप में अक्षरांकित करने का दुस्साहस किया है। यद्यपि रामकाव्य जिस पर तुलसी का रामकाव्य वह अथाह सागर है जिसमें चाहे कितना भी साहसी और प्रशिक्षु गोताखोर क्यो न हो , लेकिन तल तक नही पहुँच सकता। तुलसी साहित्य में हिन्दी साहित्य की आत्मा है। आत्मा को केवल ईश्वर ही समझ सकता है।

चौथा अध्याय परमात्मबोध हेतु आंजनेय कृपा से सम्बन्धित है, आत्मा, परमात्मा तथा परमात्मा का आध्यात्मिक स्वरूप, रामकाव्य में तुलसी का परमात्मबोध, परमात्मबोध हेतु हेतुक भक्ति, भक्ति हेतु आंजनेय कृपा की आवश्यकता, आंजनेय भक्ति से मानव पीड़ा का निवारण, पीड़ा का आधार कर्मगति, पीड़ा के प्रकार – आध्यात्मिक पीड़ा, आधिदैहिक पीड़ा, आधिदैविक पीड़ा, आधिभौतिक पीड़ा, पीड़ा निवारण के उपाय, आंजनेय भक्ति से पीड़ा निवारण, आधिभौतिक पीड़ा मुक्ति हेतु तुलसीदास की इच्छा शक्ति, तुलसीदास की आंजनेय भक्ति से आधिदैहिक पीड़ा का निवारण आदि का यथापरक अध्ययन किया गया है। जिस प्रकार मैल से कभी मैल नही छूट सकता, जल के मथने से कोई घी नही पा सकता वैसे ही रामचन्द्र जी की

प्रेमाभक्ति आंजनेय रूपी जल के विना अन्तःकरण का मैल कभी नही छुटाया जा सकता।

पंचम अध्याय में तुलसी ने अपने रामकाव्य में परमात्मबोध हेतु आंजनेय कृपा, तुलसीदास का परमात्मबोध, परमात्मबोध हेतु आंजनेय से प्रार्थना, रामकथा की महत्ता, आंजनेय रामकथानुरागी, परमात्मा का विग्रह स्वरूप, तुलसी की रामकृपा लालसा, आंजनेय की सहायता, तुलसी का आत्मबोध आदि का चिन्तन किया गया है तदनुरूप भाषाबद्ध करने की सम्यक कोशिश की गयी है।

षष्ठ अध्याय में तुलसी द्वारा अपने रामकाव्य में आंजनेय भक्ति से हुयी उपलब्धियों का जिक्र किया गया है। तुलसी ने अपना प्रारम्भिक जीवन किस प्रकार से गुजार के अपनी जीवन चर्या को कैसे कार्यान्वित किया एवं किन – किन रूपों में भगवान के पार्षद तुलसी का मार्गदर्शन करते रहे। हनुमान जी उन सभी पार्षदो में अग्रणी रहे जिन्होंने साक्षात् प्रभु राम का सानिध्य प्राप्त कराया। उसी के परिणाम स्वरूप तुलसी को रामकाव्य रचना की प्रेरणा मिली और फिर काव्योपलब्धि, लौकिक उपलब्धि, पारलौकिक उपलब्धि आदि प्राप्त कर एक अखण्ड ज्योति की भाँति हिन्दी साहित्य को जगमगा दिया।

इस प्रबन्ध को लिखने मे अनेकानेक प्रकाशित, अप्रकाशित ग्रन्थों, पत्रिकाओं, दन्त कथाओं, सत्संगो की सहायता प्राप्त हुयी है, अतः लेखिका उन सबकी आभारी है। डा० शशिकान्त अग्निहोत्री अतर्रा महाविद्यालय अतर्रा का अर्थ से लेकर इति तक भरपूर निर्देशन प्राप्त हुआ है, जिसके लिए लेखिका अपनी श्रद्धा अर्पित करती है साथ ही डा0 वेद प्रकाश द्विवेदी रीडर – हिन्दी, अतर्रा महाविद्यालय अतर्रा, डा0 राकेश प्रसाद त्रिपाठी सरस्वती इण्टर कालेज अतर्रा को कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ, जिन्होंने अपना बहूमूल्य विचार एवं अथक परिश्रम करके

इस शोध प्रबन्ध को पूरा करने में भरपूर सहयोग दिया है। हीरालाल यादव, पुस्तकालय अध्यक्ष भी बधाई के पात्र है। इसी श्रंखला में सम्बद्ध लेखिका अपने पति श्री लवकुश कुमार मिश्र का भी आभार व्यक्त करती है जिन्होंने अपने व्यस्ततम् समय एवं समस्त राजकार्य की बाधाओं को पार कर मुझे अपने बहुमूल्य विचार, साहस और प्रेरणा प्रदान की. साथ ही मै अपने पिता श्री हरवंश प्रसाद पाण्डेय, भू0 पू0 बिधायक, नरैनी विधान-सभा के आशीर्वाद की आभारी हूँ, जिन्होंने सत्साहस और सत्प्रेरणा से इस शोध प्रबन्ध को पूरा करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई तथा मेरी पूज्यनीया माता जी ने सम्पूर्ण मेंरी गृहचर्या को जिस प्रकार से सम्भाला है मै समझती हूँ उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना बहुत औपचारिक हो जायेगा। वास्तव में वह गृहसेवा की साक्षात् प्रतिमूर्ति है। मेरे भाई आलोक कुमार पाण्डेय एवं आशीष कुमार पाण्डेय ने भी भरपूर सहयोग प्रदान किया है मै उनकों भी अपना आभार व्यक्त करती हूँ। अन्त में "जे बिनु काज दाहिने बाये" आने वाले सज्जनों विद्वानों की लेखिका आभारी है।

~~आभारी है~~।

शोध छात्रा

मनीषा पाण्डेय

कु0 मनीषा पाण्डेय

हिन्दी रामकाव्य में आंजनेय भक्ति की अभिव्यक्ति

(तुलसी के विशेष परिप्रेक्ष्य में)

अनुक्रमणिका

अध्याय - प्रथम

हिन्दी राम काव्य धारा का विकास –

1- आदिकाल में राम कथा

वाल्मीकि के पर्वत के समान व्यक्तित्व से जो कथा नदी निकल कर राम सागर तक प्रवाहित हुयी है, उसका श्रोत कभी विलुप्त नहीं हुआ। वैसे तो राम कथा का श्रोत वाल्मीकि से भी प्राचीन है किन्तु रामायण की रचना के पूर्व राम कथा कब से और किस रूप में चली आ रही है, इसके सम्बन्ध में अन्तिम रूप से कुछ नही कहा जा सकता है। इतना अवश्य कहा जा सकता है, कि आदि कवि वाल्मीकि के अनेक शताब्दियों पूर्व राम कथा को लेकर लवकुश जाति के चारणो द्वारा आख्यान काव्य की सृष्टि होने लगी थी। राम कथा ने प्रारम्भिक स्वरूप तथा उसके कमिक विकास के ज्ञान के लिए प्राचीन साहित्य का अध्ययन अपेक्षित है। भारतीय परम्परा राम कथा का प्रारम्भ वेदों से ही मानती है। वैदिक साहित्य में राम कथा के प्रायः सभी पात्रों का उल्लेख मिलता है।

ऋग्वेद[1] में राम दुश्शीम, पृथवान और वेन नामक राजाओं के साथ आया है। इसके अतिरिक्त मार्गवेय[2] कही औपतस्विनि[3] कहीं प्रातुजातेय[4] तथा कहीं पुत्र के अर्थ[5] में राम नाम आया है।

वैदिक साहित्य में सीता के दो रूप दिखायी देते है – प्रथम कृषि देवता तथा दूसरा सीता सावित्री का एक युग्म। ऋग्वेद[6] वेद में कृषि की अधिष्ठात्री सीता से प्रार्थना की गयी है। यजुर्वेदीय संहिताओं में वेदी के क्षेत्र को संस्कृत करने के लिए लांगल द्वारा रेखायें खीचने का उल्लेख है। तैत्तरीय आरण्यक में भी सीता शब्द लांगल पद्धति अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।[7] विभिन्न ग्रह्य सूत्रों में भी सीता की प्रार्थना विविध अवसरों के लिए आयी है। तैत्तरीय ब्राह्मण में सोम राजा के उपाख्यान में सीता, सावित्री का परिचय मिलता है।[8] इन सबसे इतना निष्कर्ष अवश्य निकाला जा सकता है कि रामायण की सीता, वैदिक सीता नही है, किन्तु उसकी जन्म कथा पर वैदिक सीता की छाप है। अन्य पात्रों में इक्ष्वाकु[9] दशरथ,[10] जनक[11] इत्यादि नाम विभिन्न स्थलो में उल्लिखित है।

ज्ञान और परम्परा के मूल श्रोत वेदों को ही मानकर श्री नीलकंठ शास्त्री ने मंत्र रामायण में डेढ़ सौ मंत्रो को संकलित कर उन पर संस्कृत में भाष्य लिखकर वेदों में राम कथा के सूत्र खोज निकाले है। इसी संकलन का थोड़ा बहुत परिवर्तन एवं परिवर्धन पंडित राम कुमार दास ने वेदों में राम कथा के रूप में किया है।

---

1 – ऋग्वेद , 10 – 93 – 14
2 – ऐतरेय ब्राह्मण , 7 – 27 – 34
3 – शतपथ ब्राह्मण , 4 – 6 – 1 – 7
4 – जैन उपनिषद् ब्राह्मण , 3 – 7 – 3 – 2, 4 – 9 – 1 – 1
5 – तैत्तरीय आरण्यक , 5 – 8 – 13
6 – ऋग्वेद , 4 – 57 – 6–7
7 – तैत्तरीय , 4 – 2 – 5
8 – तैत्तरीय ब्राह्मण, 2 – 3 – 10
9 – ऋग्वेद, 10 – 60 – 4 , अथर्ववेद , 19,39 – 9
10 – ऋग्वेद , 1 – 126 – 4
11 – तैत्तरीय ब्राह्मण, 3 – 10 – 9 , शतपथ ब्राह्मण, 11 – 321 – 12

राम कथा के सम्बन्ध में वो लिखते है कि वेदों में राम कथा तो एक अल्प संग्रह भाग है, साथ ही स्मरण रखना चाहिए कि वेदों मे राम कथा उतनी सुस्पष्ट रूप से मिल सकनी संभव है, जितनी कि प्रति कल्प में एक ही रूप में होती है, परन्तु जो कथांश, संवाद आदि कुछ हेर फेर के साथ हुआ करते है, वे शायद वेद में स्पष्ट न मिले जैसे कि दशरथ की पुत्रेष्टि यज्ञ, रामवनगमन, बालि वध, मारीच वध, लंका दहन, रावण बध आदि तो सब कल्प में करीव – करीव एक ही तरह से होते है इसलिए ऐसी कथाओं का तो संकलन स्पष्ट रूप से वेदों में तो है परन्तु धर्नुभंग, परशुराम संवाद, वन मार्ग वर्णन, अंगद दौत्य राक्षस युद्ध प्रतिकल्प में बदला करते है। इससे उनका स्पष्ट वर्णन वेद में नही मिल सकता। इसके विपरीत आधुनिक पाश्चात्य पौरस्त्य विद्वानों ने वेदों में राम कथा का आभाव माना है। उनका मत है कि यदि वैदिक आर्यो को राम और भरत जैसे असामान्य शील और शक्ति सम्पन्न चरित्रों का ज्ञान होता तो विस्तृत वैदिक साहित्य में अवश्य किसी न किसी अंश में उनका समावेश मिलता है। पिता के सत्य की रक्षा के लिए उनकी इच्छा के विरूद्ध राज्य त्याग और वनवास ग्रहण कर राज्य को बड़े भाई की वस्तु समझकर छोटे भाई द्वारा उसका परित्याग किसी भी युग के सांस्कृतिक इतिहास में असाधारण घटनाए होती है।

राम कथा से सम्बन्धित पात्रों के नाम तो वेदों में है किन्तु उनका पारस्परिक सम्बन्ध नही जुड सका। बात यह है कि आर्य जाति के आरम्भिक सांस्कृतिक जीवन स्वरूप वैदिक साहित्य में मिलता है। वेदोदय प्रजातियों द्वारा हुआ था इसीलिए ब्राह्मणों में वेदों को प्रजापत्य श्रुति कहा गया है। उनके ऋषियों को मंत्र दृष्टा कहा गया है। लोगों का विश्वास है कि वेद ईश्वरीय ज्ञान है, जिसका दर्शन समय – समय पर अनेंक ऋषियों ने किया है। इन्ही का सम्पादन ज्ञान तथा कर्मकाण्ड की दृष्टि से कृष्णद्वैपायन ने नए सिरे से किया है, जिसके कारण एक ही स्थान पर अति प्राचीन सूक्त भी है । और नवीनतम भी, साथ ही एक प्रसंग के मंत्र दूसरे प्रसंग में उल्लिखित होने के कारण तदानुरूप अर्थ देने लगे, इसीलिए संभवतः वेदों में उल्लिखित नाम, मात्र नाम ही रह गये है, कथा से उनका कोई सम्बन्ध नही रह गया तथा पात्रों का भी सम्वन्ध नही प्रगट हो पाया। प्रसिद्ध विद्वान डा0 कामन वुल्के मे इसी ओर संकेत करते हुए लिखा है, कि वैदिक रचनाओं में रामायण के एकाध पात्रों के नाम अवश्य मिलते है, लेकिन न तो इनके पारस्परिक सम्बन्ध की कोई सूचना दी गयी है, और न इनके विषय में किसी तरह रामायण की कथावस्तु का थोड़ा बहुत भी निर्देश किया गया है। वैदिक काल में रामायण की रचना हुई थी , अथवा राम कथा सम्बन्धी गाथाए प्रसिद्ध हो चुकी थी , इसका निर्देश समस्त विस्तृत वैदिक साहित्य में कहीं भी नही पाया जाता। अनेक ऐतिहासिक व्यक्तियों के नाम रामायण के पात्रों के नामों से मिलते है , इससे इतना ही निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि ये नाम प्राचीन काल में भी प्रचलित थे।[1]

1 – राम कथा उत्पत्ति और विकास पृष्ठ 25–26, बुद्ध चरित्र 1 – 43

वाल्मीकि रामायण –

आदि कवि वाल्मीकि के अनेक शताब्दियो को राग कथा राम्बन्धी अनेक गाथाए प्रचलित हो चुकी थी किन्तु वह साहित्य काल के गाल में चला गया, क्योकि इतना भव्य उदान्त चरित्र की कल्पना कर विशाल काव्य का प्राणयन किसी ठोस परम्परा की पृष्ठ भूमि के विना असंभव सा प्रतीत होता है। राजसी सूतों द्वारा नाराशंसी गाथाओं की रचना करना प्रचलित ही है, अतः यह असंभव नही कि इक्ष्वाकुवंशीय सूतों ने रूचि के अनुसार राम कथा का प्रणयन कर उसका प्रचार किया जिसको काव्य रूप देने में वाल्मीकि सफल हो गये। यदपि वाल्मीकि से पूर्व च्यवन ऋषि ने इस दिशा में प्रयास अवश्य किया था किन्तु उन्हें असफलता ही हाँथ लगी। अश्वघोष ने बुद्ध चरित्र में लिखा है कि जिस काव्य की रचना करने में महर्षि च्यवन असफल रहे वाल्मीकि ने उसे काव्य रूप में प्रस्तुत करने में पूर्ण सफलता हासिल की।[1] कुछ भी हो आज भारतीय परम्परा वाल्मीकि रामायण को ही आदि काव्य स्वीकार करती है।[2] प्रचलित रामायण तथा जन श्रुति से वाल्मीकि के कथा नायक राम के समकालीन होने का संकेत मिलता है, और कथा की रचना भी तत्कालीन बतायी गई है जबकि पाश्चात्य विद्वान इसे अपेक्षाकृत अर्वाचनीय मानते है।

ए 0 श्लेगल[3] तथा जी 0 गोरेशियों[4] ने क्रमशः 11 वीं तथा 12 वीं शताब्दी ई 0 पू 0 एच0 यायोबी[5] , यम0 विण्टरनित्स[6] ने प्रथम तथा द्वितीय शताब्दी सी0 वी0 वैद्य[7] दूसरी शताब्दी ई0 पू0 से, दूसरी शताब्दी के बीच एवं डा0 कामन बुल्के[8] कम से कम तीसरी शताब्दी ई0 पूर्व एवं एवं डा0 अमरपाल सिंह[9] 500 ई0 रचित बताते है। वाल्मीकि द्वारा मौखिक रूप से रचित कुशीलवों द्वारा जनरूचि को ध्यान में रखकर प्रचारित करने के कारण रामायण में अनेक प्रक्षेपों का समावेश होता गया। विद्वानों ने इसके दो रस्मों की कल्पना की है – प्रथम आदि रामायण द्वितीय परिवर्तित एवं परिवर्धित रूप। आदि रामायण की उत्पत्ति राम रावण एवं हनुमान सम्बन्धी अत्यन्त प्रचलित आख्यानों के संयोग से हुई है जिसमें बालकाण्ड, उत्तर काण्ड एवं अवतार पाद की सामग्री को प्रक्षिप्त माना गया है।[10] उक्त तथ्य सर्वदा निराधार एवं कपोल कल्पित ही है।

---

1 – बुद्ध चरित्र 3 – 53
2 – वाल्मीकि रामायण 6 – 131 – 107
3 – ए 0 डब्लू श्लेगल – जर्मन ओरियन्टल जर्नल भाग 3 पृष्ठ 378
4 रामायण भाग 10 भूमिका
5 – डास रामायण पृष्ठ 100, राम कथा पृष्ठ 31 पर उद्धन्त
6 – हिस्ट्री ऑफ दि इण्डिन लिटलेचर भाग 1 पृष्ठ 517
7 – दि रिडिल ऑफ दि रामायण पृष्ठ 20 एवं 51
8 – राम कथा पृष्ठ 33
9 तुलसी पूर्व राम साहित्य पृष्ठ 22
10 डास रामायण – याकोबी पृष्ठ 50 (राम कथा पर उद्धत पृष्ठ 124)

डा० कामन वुल्के का मत है कि आदि रामायण राम सम्बन्धी स्फुट आख्यान काव्य के आधार पर लिखा गया है और इसमे अयोध्या काण्ड से लेकर युद्ध काण्ड तक की कथावस्तु विद्यमान थी।[1] इसका अर्थ यह नही है कि प्रचलित वाल्मीकि कृत रामायण के इन पाँच काण्डों में आदि रामायण का मूल रूप सुरक्षित है। परिवर्धित एवं परिवर्तित रामायण के तीन पाठ प्राप्त होते है – दाक्षिणात्य, गौडीय एवं पश्चिमोत्तरीय मौखिक रूप से प्रचलित रामायण को भिन्न – भिन्न प्रदेशो में लिपिवद्ध करने के कारण ही पाठ भेद उत्पन्न हो गये हो यह बात असंभव नही लगती है। यह परिवर्धन बालकाण्ड एवं उत्तर काण्ड की सामग्री में अधिक हुआ है। राम सीता रावण इत्यादि पात्र कौन है। इस कौतुहल के निवारण के लिए ही इनके सम्बन्ध की कथाए जोड़ी गयी है।

महाभारत की राम कथा –

रामायण और महाभारत भारतीय वाङ्मय के प्रमुख उपजीव्य ग्रन्थ है। वाल्मीकि की प्रतिभा ने राम कथा को ऐसा चित्ताकर्षक एवं ममस्पर्शी रूप प्रदान किया है कि आगे चलकर भारत की काव्य धारा राम कथा को लेकर चली। यदपि अन्तिम रूप से यह नही कहा जा सकता कि महाभारत के पूर्व रूप भारत में भी राम कथा का उल्लेख था किन्तु वर्तमान महाभारत में राम कथा कई स्थलों में उल्लिखित है। अरण्य पर्व[2] में हनुमान भीम के सम्बाद के अर्न्तगत राम वनवास से लेकर सीता हरण तथा अयोध्या प्रत्यागमन तक सारी कथा वर्णित है। इसी तरह द्रोण पर्व[3] तथा शान्ति पर्व[4] मे षोड़सराजोपाख्यान के अर्न्तगत राम कथा में मिलती है। जिसमे कवि की दृष्टि राम राज्य की महिमा पर केन्द्रित है, उनके जीवन की घटनाओं पर नही। रामोपाख्यान में राम कथा का वर्णन विस्तार से है जिसमे कुछ परिवर्तनों[5] के साथ राम जन्म से अयोध्या लौटने तक की कथा वर्णित है। इस कथा के संचय में वेबर[6] ने चार संभावनाओं का वर्णन किया है।

(1) – रामोपाख्यान रामायण का आधार है।

(2) – रामायण के वर्तमान रूप के पूर्व रूप का संक्षिप्त रूप।

(3) – रामोपाख्यान वाल्मीकि रामायण का स्वतन्त्र रूप है।

(4) – किसी अन्य आधार पर रामायण तथा रामोपाख्यान की रचना हुई।

---

1 – राम कथा पृष्ठ 136
2 – महाभारत 3 / 147 / 28–38
3 – महाभारत 7 / 59
4 – महाभारत 12 / 49 / 46–55
5 – कैकेयी के एक ही वर का उल्लेख, कुंभकरण का वध लक्ष्मण द्वारा, संजीवनी का सुग्रीव के पास होना, लंका दहन वर्णन का आभाव एवं सीता की अग्नि परीक्षा का न होना इत्यादि।
6 – ए० वेबर – ऑन दि रामायण पृष्ठ 65।

ई0 हासकिंस[1] तथा ए0 लूड्विंग[2] रामोपाख्यान को राम कथा का स्वतन्त्र रूप मानते है परन्तु डा0 याकोषी[3], विन्टरनित्स[4], एच0 ओकेनवर्ग[5], तथा वी0 एस0 शुकण्ठकर[6] रामायण के संक्षिप्त रूप को ही स्वीकार करते है। वास्तव में रामोपाख्यान रामायण का ही संक्षिप्त रूप है। यह मान्य मत है कि रामोपाख्यान का आधार वाल्मीकि रामायण ही है अतः यह सिद्ध होता है कि वर्तमान महाभारत में रामयण की कथा आदिकाव्य के अनुसार चलती रही।

पौराणिक साहित्य –

भारतीय धर्म तथा संस्कृति के स्वरूप को यथार्थतः जानने के लिए पुराणों का अनुशीलन नितांत आवश्यक है। वेदों का उपर्बृहण करने वाले इन पुराणों ने रोचक एवं सरस आख्यानो से राजवंशावलियो को सुरक्षित रखा है। इनमें तत्सम्बन्धित प्रचलित आख्यानो को धार्मिक लोगो के रूचि के अनुसार ढ़ाला गया है।

विभिन्न पुराणों में रान कथां के अनेक पक्षो का उद्घाटन किया गया है। पुराणों में उल्लिखित कथा का मूलस्वर तो वाल्मीकि रामायण का ही है, किन्तु उसमें कुछ नई सामग्री का समावेश कर कथानक में मौलिक परिवर्तन करके रामचरित्र के नए आयामों को उद्घाटित किया गया है। राम कथा कही स्तवन के रूप में कही स्वतंत्र रूप में, कही किसी पुराण की कथा को यत्किंचित परिवर्तित रूप में और कही किसी साम्प्रदायिक देवी देवताओं की अर्चना के महत्व को प्रतिपादित करने के लिए लिखी गई है।

मार्कण्डेय पुराण, ब्रह्माण्ड पुराण तथा मत्स्य पुराण में अवतारों के सम्बन्ध में राम नाम आया है। हरिबंश, विष्णु , वायु , भागवत एवं कूर्म पुराण में स्वतन्त्र रूप से सम्पूर्ण राम कथा उल्लिखित है। अग्नि पुराण एवं नारदीय पुराण की कथा वाल्मीकि रामायण का ही संक्षिप्त मात्र है। लिंङ पुराण में इक्ष्वाकु वंश वर्णन के अर्न्तगत संक्षिप्त कथा दी है। स्कन्ध पुराण के विभिन्न खण्डो का महात्म्य बताने वाले स्थलो में राम कथा की अनेक बार आवृत्ति हुई है जैसे कार्तिकेय, वैशाख मास, अयोध्या एवं आवन्त्य, क्षेत्र, महात्म्य एवं देवा खण्ड, नागर खण्ड, प्रभास खण्ड इत्यादि। पद्म पुराण के पाताल खण्ड में राम कथा सम्बन्धी बहुत सी सामग्री मिलती है। इसी तरह विष्णु धर्मोत्तर , नृसिंह , वन्हि, श्री मद् देवी भागवत, बृहद धर्मसार एवं कल्कि पुराण में राम कथा के विविध रूप दिखाई देते है। इन पुराणों का रचना काल विवाद ग्रस्त है किन्तु इतना तो कहा ही जा सकता है कि समयानुसार विभिन्न सम्प्रदायो के महत्वानुसार राम कथा को ढ़ाला गया है।

---

1 – दि ग्रेट इपिक पृष्ठ 63।
2 – यूवर डस रामायण पृष्ठ 30 (उद्धत राम कथा डा0 वुल्के)
3 – डस रामायण पृष्ठ 72।
4 – हिस्ट्री ऑफ इण्डियन लिटलेचर भाग 1 पृष्ठ 384।
5 – डस महाभारत पृष्ठ 54 (राम कथा पृष्ठ 52 पर उद्धत)
6 – रामोपाख्यान एण्ड महाभारत, काणे कामेमोरेशन, वाल्यूम पृष्ठ 472–88–89 ।

अवतार वाद पुत्रोत्पत्ति के विभिन्न कारणो की कल्पना, आयोनिजा सीता द्वारा सूर्पणखा का विरूपण रंजक प्रसंग कुशलव युद्ध विभिन्न देवी देवताओ की उपासना राम सीता का पुर्वानुराग एवं राम कथा सम्बन्धी अनेक पात्रो के सम्वन्ध में प्रासंगित घटनाओ की कल्पना इनकी मौलिक विशेषताए है।

संस्कृत ललित साहित्य –

बाल्मीकि रामायण की आकर्षक कथावस्तु से आकृष्ट होकर परवर्तीय अनेक कवियो ने राम कथा को आधार बनाकर महाकाव्यो एवं नाटको की रचना की। बाद में संस्कृत साहित्य बहुत कुछ निर्जीव कृतिमता की श्रृंखला में बँध गया किन्तु राम कथा की लोकप्रियता अक्षुष्ण रही है। अनेक प्रकार के उतार – चढ़ाव को देखने के बाद ही राम कथा का अस्तित्व हिमगिरि की भाँति अडिग रहा। इस प्रकार यह एक ऐसा साहित्य बनकर उभरा कि जनमानस इसको अपने हृदय से बिगलित नही कर सका।

प्राकृत भाषा में राम कथा –

प्राकृत कौन सी भाषा है, इसमे पर्याप्त मतभेद है किन्तु इसका प्रयोग विद्वानों ने निम्न अर्थो में किया है।[1] वे विशेष भाषाए जिनका भारत वर्ष में प्राकृत शब्द से उल्लेख किया गया है मध्यम भारतीय युग की भाषाए। साहित्यिक और शिष्ट भाषा से भिन्न सहजन्य लोक भाषा। कुछ भी हो इन भाषाओं का बड़ा महत्व है। एक ओर से वर्तमान काल की भव्य भारतीय आर्य भाषाए और दूसरी ओर से प्राचीनतम् भारतीय आर्य भाषा जैसे वेद की भाषा। इन दोनो स्वरूपो के बीच की जो भारतीय भाषा इतिहास की अवस्था है, उसको हम प्राकृत नाम दे सकते है।[2] इस प्रकार प्राकृत मध्य कालीन भाषाओं का प्रतिनिधित्व करती है।[3] इनकी तीन अवस्थाओं का उल्लेख विद्वानो ने किया है – प्रथम प्राकृत (पालि), द्वितीय प्राकृत (साहित्यिक प्राकृत), तृतीय प्राकृत (अपभ्रंश)। बौद्ध मतावलम्बी महात्मा बुद्ध को राम का अवतार मानते है। इसीलिए पालि भाषा में लिखे गये बौद्ध साहित्य में राम कथा मिलती है। त्रिपटिक के सुत्त पिटक के क्षुद्दक निकाय में अनेक जातक संग्रहीत है। इनमें राम कथा सम्बन्धी अनेक जातक है –

1 – दशरथ जातक 2 – अनामक जातक 3 – दशरथ कथानम 4 – देवधम्म जातक
5 – जयदिद्स जातक 6 – साम जातक 7 – वेसान्तर जातक 8 – झम्बुल जातक

1 – प्राकृत प्रवेशिका, बनारसी दास जैन पृष्ठ 5
2 – प्राकृत भाषा, डा0 प्रबोध वेचरदास पंडित पृष्ठ 1
3 – हिन्दी साहित्य कोश, डा0 सरयू प्रसाद अग्रवाल पृष्ठ 492

इसके अतिरिक्त लंकावतार सुत्र में लंकापति रावण एवं महात्मा बुद्ध के वाद विवाद का उल्लेख है किन्तु उसमें राम कथा का आभाव है। दशरथ जातक एवं देवधम्म जातक में राम कथा की पूरी रूप रेखा विद्यमान है, और जयदिद्रा जातक के अन्तर्गत राम का दण्डकारण्य जाना दर्शाया गया है, तथा साम जातक के कुछ अंश रामायण से बहुत मिलते है, और वेसान्तर जातक की कथा से भी राम कथा का बहुत कुछ साम्य है। अनामक जातक में वनवास सीता हरण, जटायु मरण, बालि सुग्रीव युद्ध, सेतु बन्ध, सीता परीक्षा के संकेत मिलते है किन्तु पात्रों का नाम उल्लिखित नही है। सबसे विवादास्पद दशरथ जातक है, जो सम्बन्धियों की मृत्यु पर दुःख न करने के उदाहरण के रूप में प्रस्तुत की गयी है। अनेक विद्वानों का मत है कि इस जातक में राम कथा का मूल रूप सुरक्षित है जिसका खण्डन डा0 बुल्के ने किया है।[1]

द्वितीय एवं तृतीय प्राकृत में राम कथा जैन सम्प्रदायानुसार मिलती है। जिस प्रकार बौद्धों ने गौतम को राम का पुनरावतार स्वीकार किया है, उसी प्रकार जैनियों ने राम (पद्म) लक्ष्मण एवं रावण को जैन धर्मानुयायी महापुरूष के रूप में वर्णित किया है। उनकी गणना त्रिशष्ठिशलाका पुरूषों में की गयी है। राम लक्ष्मण तथा रावण क्रमशः आँठवे वलदेव, वासुदेव तथा प्रतिवासुदेव माने जाते है।

हिन्दी में राम कथा,–

तुलसी पूर्व हिन्दी राम साहित्य प्रायः हस्तलिखित होने के कारण उपलब्ध नही होता है। आचार्य पीठों, शास्त्र भण्डारों तथा निजी संग्रहों में असंख्य अप्रकाशित राम साहित्य भरा पड़ा है तुलसी की सुगठित, सुललित एवं मार्मिक राम कथा को देखकर सहज विश्वास ही नही होता कि अपभ्रंश के बाद तुलसी ही राम कथा के प्रमुख एवं प्रथम गायक है। राम काव्य परम्परा की कड़ी बीच में टूटी सी प्रतीत होती है। राजनीतिक विप्लव एवं मुस्लिम आक्रमणों के कारण हिन्दू संस्कृति के केन्द्र विध्वंस होते जा रहे थे ऐसी दशा में वहाँ उपलब्ध साहित्य की सुरक्षा संभव ही नही थी। साथ ही कुछ धार्मिक साम्प्रदायिक एवं कुछ तुलसी की कारयित्री प्रतिभा तथा उनके दबंग व्यक्तित्व के कारण पूर्ववर्ती कवि प्रकाश में नही आ पाये जो भी उपलब्ध कवि है उनका काल विवाद ग्रस्त है। काव्य सूची निम्न है।

1 – अथदशम (पृथ्वी राज रासो) – चन्दवरदायी

2 – राम रक्षा, रामाष्टक, राम मंत्र – रामानंन्द[2]

3 – भाषा रामायण[3] – गोस्वामी विष्णुदास

4 – भरत मिलाप, अंगद पैज, राम जन्म – ईश्वर दास[4]

5 – सूर राम चरितावली (सूरसागर) – सूरदास

6 – राम चरित्र – ब्रह्मजिनदास[5]

---

1 – राम कथा पृष्ठ 81–86
2 – तुलसी पूर्व साहित्य, डा0 अमरपाल सिंह पृष्ठ 122 – 26।
3 – सभा खोज रिपोर्ट 1906 – 8 पृष्ठ 92 संख्या 284।
4 – नागरी प्रचारिणी पत्रिका वर्ष 61 अंक।
5 – राष्ट्र भारती 1993 (डा0 नाइटा का लेख)

7 – रावण मंदोदरी सम्बाद – मुनि लावण्य[1]

8 – सीता राम रास – गुण कीर्ति[2]

9 – पद्म चरित – विनय समुद्र[3]

10– सीता चौपाई – समय ध्वज

सूची का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि राम कथा कही जैन सम्प्रदाय में प्रचलित परम्परा के अनुसार कही भक्ति भावना के प्रचार के लिए , कही प्राचीन ग्रन्थों (रामायण) के अनुवाद के रूप में और कही किसी काव्य के अर्न्तगत प्रसंगानुसार गौण रूप में मिलती है।

पृथ्वी राज रासो के द्वितीय सर्ग में लिखित "वसम कथा" में से रामावतार की घटना 264 से लेकर 301 छन्द तक में उल्लिखित है जिसकी कथा का आधार बाल्मीकि रामायण ही है। इस प्रकार की वीर रस प्रधान घटनाओं का चयन कवि की वीर गाथा कालिक मनोवृत्तियो का परिचायक है।

स्वामी रामानन्द ने राम कथा सम्बन्धी कोई भी ग्रन्थ नही लिखा है। उनके नाम से जो भी विवाद ग्रस्त ग्रन्थ मिलते है उनमें ज्ञान भक्ति योग का ही वर्णन है। वैष्णवों के कर्म भक्ति भावना को कवि ने प्रांजल एवं प्रसाद मयी भाषा में लिखा है।

जायसी का पद्मावत, इस्लाम, सूफी एवं हिन्दू विचार धाराओं की पतित्र त्रिवेणी है, उन्होंने हिन्दू पौराणिकता पर अपनी आस्था प्रकट करने के लिए यत्रतत्र राम कथा सम्बन्धी घटनाएं प्रसंगानुसार लिखा है। राम जन्म से लेकर रावण बध की प्रमुख घटनाएं पद्मावत् में विकीर्ण है।

अब तक के विवेचन से यह बात सामने आ गयी है कि तुलसी पूर्व राम कथा को स्पष्ट एवं व्यवस्थित रूप देने का प्रयार किसी कवि ने नही किया इस दिशा में सबसे प्रथम हमारी दृष्टि सूरदास पर ही टिकती है। उन्होंने बल्लभाचार्य के आदेश से श्री मद्भागवत की कथा को गेय रसो में प्रस्तुत किया है। सूरसागर में प्रमुख रूप से कृष्ण चरित्र का ही गान है किन्तु अभेदोपासना के आधार पर सूर ने श्री मद्भागवत में वर्णित संक्षिप्त राम कथा को विस्तृत कर सुव्यवस्थित रूप में प्रयुक्त किया है।

सारांश यह है कि हिन्दी में तुलसी के पूर्व सम्पूर्ण राम कथा को प्रबन्ध काव्य के रूप में लिखने का प्रयास न के बराबर किया गया है, या तो विशिष्ट स्थलो पात्रो को लेकर या फिर मनोनुकूल बीच – बीच के अंशो का चयन कर या फिर साम्प्रदायिक आग्रह पर पात्र विशेष के आधार पर राम कथा लिखी गयी है। तुलसी में राम कथा की गम्भीरता, सरलता, सुन्दरता का एवं भाव सम्प्रेषणीयता का अनुभव कर नाना पुराण निगमागम सम्मत ऐसी राम कथा लिखी है जो आज विश्व साहित्य में अपना अलग स्थान रखती है।

---

1 – जनम कान्त वर्ष 5 किरण 1–2 पृष्ठ 103।
2 – राष्ट्र भारती 1994 (अगर चन्द्र नाइट)
3 – तुलसी पूर्व राम साहित्य पृष्ठ 234।

उन्होंने राम चरित मानस, विनय पत्रिका, गीतावली, रामलला नहछू , कवितावली, जानकी मंगल, बरवै रामायण, रामाज्ञाप्रश्नावली, हनुमान बाहुक, पार्वती मंगल, दोहावली इत्यादि राम काव्य लिखे है इन्ही ग्रन्थों के आधार पर तुलसी की विश्रुत काव्य कला का संक्षेप में उदाहरण दिया जा रहा है जिसके कारण वे विश्व कवि के रूप में जाने जाते है।

राम चरित मानस –

राम चरित मानस तुलसीदास जी की अद्भुत रचना चातुरी उर्वर कल्पना एवं उत्कृष्ट काव्य कला का उदाहरण है, जिसके समक्ष तुलसी के अन्य ग्रन्थ (विनय पत्रिका को छोड़कर) ठहर नही सके फिर आगे के कवियों की क्या बिसात है।

वन्दना के बाद चार वक्ताओं एवं चार श्रोताओं के सम्वादो से कथा का प्रारम्भ होता है, जिसमे रामावतार से सम्बन्धी कथाओं के बाद राम जन्म से लेकर विवाह तक के अंश वर्णित है। अयोध्या काण्ड में राम के राज्याभिषेक से लेकर नन्दी ग्राम निवास तक, अरण्यक काण्ड में जयन्ता प्रसंग से लेकर राम के पंपासुर पहुँचने तक, किष्किन्धा काण्ड में राम सुग्रीव मैत्री से लेकर प्रायोपवेसन करते हुए वानरों से सम्पाती से भेट तक, सुन्दर काण्ड में हनुमान के लंका प्रवेश से लेकर राम के ससैन्य सिन्धु आगमन तक, लंका काण्ड में सेतुबन्ध से लेकर राम का अयोध्या प्रस्थान एवं उत्तर काण्ड में राम का राज्याभिषेक और राज्य वर्णन के साथ काकभुशण्डि सम्बाद के समाप्ति तक की कथाए उपन्यस्त है।

विनय पत्रिका –

कलियुग से संतृप्त होकर कवि अपने आराध्य की सेवा में भेजने के लिए एक प्रार्थना पत्र लिखा है। अतः इसका प्रारम्भ मध्यकालिक राजा के पास भेजे जाने वाले आवेदन पत्र के समान है, जिसमें अपना कार्य कराने के लिए राजा के चारो तरफ रहने वाले राज दरबारियों को प्रसन्न किया जाता है। इसीलिए तुलसी ने गणेश, शिव, गंगा, हनुमान, सूर्य, जानकी , भरत सभी की वन्दना की है। इस प्रकार यह ज्ञान भक्ति दर्शन का व्यवहारिक ग्रन्थ है।

गीतावली –

इसमें राम कथा के मधुर स्थलो का चयन कर उनका वर्णन किया गया है। राम के जन्म से लेकर सीता निर्वासन और लवकुश के बाल चरित्र तक के विविध प्रसंग वर्णित है।

रामलला नहछू –

लोकाचार वर्णन हेतु इसको लिखा गया है। काव्य में यह नही कहा गया है कि यह नहछू किस अवसर का है। माता कौशल्या सिंहासन पर बैठकर राम को गोदी में लेकर नहछू करा रही है। इस अवसर पर नाइन, मोचिन, दर्जिन, मालिन, बारिन सभी के कृत्यों का उल्लेख है। हास परिहास के साथ यह कृत्य पूरा होता है।

जानकी मंगल –

राम सीता के विवाह से सम्बन्धित घटनाओं का वर्णन इस काव्य में किया गया है राम द्वारा विश्वामित्र के मख का रक्षण, उनका जनकपुर में प्रवेश, स्वयंबर सभा में राजाओं की निराशा, धर्नुभंग कुल रीतानुसार विवाह, मार्ग में परशुराम भेट आदि की घटनाए इस काव्य कृति में वर्णित है।

कवितावली –

राम कथा से सम्बन्धित अनेक प्रसंग इसमें है। राम के बाल रूप की झाँकी से इसका प्रारम्भ होता है। धनुष भंग, विवाह, परशुराम प्रसंग, राम वन गमन, केवट प्रसंग, सीता हरण, हनुमान जी का समुद्र संतरण, लंका दहन, अंगद का दौत्य कर्म, लक्ष्मण शक्ति, रावण बध आदि प्रसंगो का वर्णन है।

वरवै रामायण –

बाल काण्ड में सीता राम छबि, विवाह, अयोध्या काण्ड में राम वन गमन, निषाद भेट, अरण्य काण्ड में सीता हरण, सूर्पणखा प्रसंग किष्किन्धा काण्ड में राम सुग्रीव भेट तथा मैत्री, सुन्दर काण्ड में सीता राम विरह, लंका काण्ड में राम सेना, उत्तर काण्ड में ज्ञान भक्ति एवं चित्रकूट महिमा आदि का वर्णन है।

इस प्रकार हम देखते है कि कथा की दृष्टि से राम चरित मानस अद्वितीय ग्रन्थ है। कथा शिल्प रचना नैपुण्य, कार्यावस्थाए, सन्धियों इत्यादि के दृष्टि से मानस बड़ा ही सनियोजित ग्रन्थ है। आधिकारिक एव प्रासंगिक घटनाओं का सम्यक संतुलन अन्य ग्रन्थों में कम देखने को मिलता है।

सारांश यह है कि सुगठित कथा योजना उदाब्त चरित्र चित्रण, गम्भीर रस व्यंजना, विस्तृत वस्तु वर्णन, भाषा गुण, अलंकार, छन्द तथा महान उद्देश्यो की दृष्टि से उनका राम साहित्य अद्वितीय है। इसीलिए वे आज भी अग्रगण्य, वरेण्य, वन्दनीय है, एवं उनका साहित्य सर्वथा सरस, सरल एवं ज्ञान पिपासु के लिए सरोबर एवं शोधार्थी के लिए अगाध सागर है।

मध्य काल

इतिवृत्त प्रधान काव्यों में कथावस्तु को अनिवार्य तत्व माना गया है। यही वह मेरूदण्ड है जिसके कारण काव्य रूपी विशाल शरीर सुदृढ रहता है। कथावस्तु की महत्ता एवं औदात्य पर पता इसी बात से चल जाता है कि भारतीय काव्य शास्त्रीय आचार्यों ने उसकी विस्तृत रूपरेखा प्रस्तुत की है। प्राख्यात उत्पाद्य तथा मिश्र[1] एवं अधिकारिक, प्रासंगिक[2], पताका, प्रकरी[3] कथाओं का उल्लेख किया है। राम कथा उन विश्रुत प्राचीन कथाओं में से है जिसका प्रभाव समाज के रग–रग में व्याप्त है। प्रस्तुत खण्ड में मध्यकालीन प्रमुख राम काव्यों की कथावस्तु दी जा रही है।

राम चन्द्रिका–

प्राचीन साहित्य की समस्त विशेषताओं को एक साथ सन्निविष्ट कर संयुक्त साहित्य के प्रति देशवासियों की आस्था बनाये रखने के लिए केशव ने राम चन्द्रिका का प्रणयन किया है। काव्य का प्रारम्भ गणेश सरस्वती, रामचन्द्र की वन्दना से होता है। वंश परिचय, रचना काल का उल्लेख करके राम जन्म, विस्वामित्र आगमन, ताडका वध, धनुष भंग, विवाह, मार्ग में परशुराम से भेंट, राम वन गमन से लेकर रावण वध तथा राम सीता मिलन तक की कथावस्तु बीस प्रकाशो में वर्णित है। उत्तरार्द्ध में केशव ने राम भरत मिलाप, अयोध्या प्रवेश, राज्याभिषेकोत्सव, राम राज्य वर्णन, शम्बूक वध, सीता वनवास, लवकुश जन्म, लव लक्ष्मण युद्ध, राम सीता का फिर से मिलन, राज्य श्री निन्दा, राम का चौगान खेलना, और अन्त में राम चन्द्रिका का माहात्म्य वर्णित है।

वास्तव में कवि अपने समय की परिस्थितियों और रूचि विचार धारा के अनुरूप ही रचना करता है। तुलसी के सामने राम कथा का आदर्श भिन्न था। केशव ने रीति युगीन वातावरण के अनुरूप आदर्श प्ररतुत किया है। अतः उनके प्रेरणा स्रोत अध्यात्म रामायण, हनुमन्नाटक, प्रसन्न राघव ग्रन्थ रहे हैं। कथा का मूलाधार वाल्मीकि रामायण है, वर्णन शैली उक्त ग्रन्थो से प्रभावित है। कवि ने भाषा छन्द अलंकार आदि की विशिष्टता से उत्पन्न चमत्कार के साथ ही दाम्पत्य श्रंगार का उन्मुक्त चित्रण किया है । साथ ही तुलसी द्वारा वर्णित घटनाओं में परिवर्तन के अनौचित्य को समझ कर पिष्टपेषण से बचने के लिए नवीन वर्णनों की कल्पना कर मौलिक सूझबूझ का परिचय दिया ।

उद्धरण–

राघव की चतुरंग चमूचय को गनै केशव राज समाजनि।
सूर तुरंगन के उरझें पग तुंग पताकनि की पट साजनि।।
टूटि परैं तिनते मुकुता धरणी उपमा बरणी कवि राजनि।
बिन्दु किधौं मुख फेंनन के किधौं राजसिरी श्रव मंगल लाजनि।।
राघव की चतुरंग चमू चपि धूरि उठी जलहू थल छाई।
मानो प्रताप हुतासन धूम सो केशवदास अकासन माई।।
मेटि कै पंच प्रभूत किधौं विधि रेणुमयी नव रीति चलाई।
दुख निवेदन को भुव भार को भूमि किधौं सुरलोक सिधाई।। (राम चन्द्रिका, शत्रुघ्न-लव-युद्ध)

1– दस रूपक, धनंजय, 1/5
2– दस रूपक, धनंजय, 1/11
3– दस रूपक, धनंजय, 1/13

अवध विलारा –

समाज की संचित चित्तवृत्तियों का समग्र प्रतिपालन साहित्य में होता है, यदि यह बात देखना है तो लाल कवि कृत अवध विलास से अच्छा उदाहरण शायद ही कोई मिल सके। रीति काल जहाँ एक तरह आचार्यत्व एवं कवि कर्म के पांडित्य प्रदर्शन का युग था वही दूसरी ओर उद्दाम श्रंगारिक भावनाओं की अभिव्यक्ति करने वाले कवियों द्वारा हाथ में सुमिरिनी लेकर केलि कुंजो के दौड़ का युग था। धार्मिक भक्ति प्रधान घटनाओं का चयन कर तात्कालिक सांस्कृतिक जीवन का सफल आकलन इस ग्रन्थ में किया गया है।आगे अवध विलास इस दृष्टि से अध्येता के लिए बड़ा ही महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। अवध विलास समुद्र है, साधु जिसके तट है एवं राम कथा रत्न के समान है। इसमें राम जन्म से वन गमन तक की कथा कवि ने 19 अध्यायों में लिखी है। ग्रन्थारम्भ मंगलाचरण से होता है। सरयू एवं अयोध्या उत्पत्ति , रावण जन्म , उसके अत्याचार से पीड़िता पृथ्वी पर हरि गुण कथन, पुत्र भाव से दुखित दशरथ का प्रयाग जाकर लोमपाद ऋषि से विचार विमर्श, ऋंगी ऋषि के आनयन का प्रयास, पुत्रेष्टि यज्ञ, पायस विभाजन, राम जन्म, चारो भाइयों की बाल लीलाएं, दुखिता लक्ष्मी का सीता के रूप में अवतरित होना , उदास राम वशिष्ठ के अष्टांग रूप योग के वर्णन से प्रभावित होकर तीर्थ यात्रा करना, विश्वामित्र आगमन, ताड़का बध, मारीचि और सुबाहु से मख रक्षण, मिथिलापुर प्रवेश, पुष्प वाटिका प्रसंग, धनुष उठाने में रावण, बाणासुर के अतिरिक्त अन्य राजाओं की असफलता, धनुष भंग, परशुराम आगमन, अयोध्या से बारात का आना, राम विवाह एवं अयोध्या आगमन, नारद द्वारा राम से रावण बध की प्रार्थना एकाकी राम का वन गमन के कारणो के खोज में चिन्तित होना, कैकेयी से विचार विमर्श, कैकेयी की आशंका, राम राज्याभिषेक की तैयारी , मंथरा कैकेयी भेंट, कैकेयी द्वारा दो वरो की प्राप्ति, राम वनगमन इत्यादि घटनाएं वर्णित है। यही कथा भी समाप्त हो जाती है। इसके साथ साथ भी काव्य शास्त्र धार्मिक, संस्कृतिक, राजनीतिक, दार्शनिक एवं संगीत शास्त्र सम्बन्धी विषयो पर कवि की लेखनी अनुवरत रूप से चलती रही है, जिसको पढ़कर ऐसा प्रतीत होता है कि कवि तद्युगीन आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, साहित्यिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियो का समग्र आकलन करना चाहता है।

रामावतार चरित्र – (बारहठ नरहरिदास)

रामावतार एवं राम की लौकिक लीलाओं में साधु , सन्तो, काव्य मर्मज्ञो से लेकर साधारण कोटि की प्रतिभा सम्पन्न कवियो तक को समान रूप से आकृष्ट करने की क्षमता है। बारहठ नरहरिदास ने महामुक्ति मार्गगमी साधु सन्तो के लिए सप्त काण्ड वद्धअवतार चरित्र नामक पौरूषेय रामायण की रचना की है, जिसमें रामावतार के कारण राम जन्म से लेकर स्वर्गारोहण तक की कथा है। गणेश, शारदा एवं शिव स्तुति से काव्य आरम्भ हुआ है। राम जन्म के कारणो में स्वायंभू – मनु तपस्या, रावण पूर्व जन्म प्रसंग, भानु प्रताप की कथा, रावण जन्म उसकी तपस्या, युद्ध विजय, अत्याचार , बालि सुग्रीव उत्पत्ति, दशरथ उत्पत्ति, देवासुर संग्राम में कैकेयी को वर प्रदान करना, अन्धतापस कथा, अंगदेश में अनावृष्टि, पुत्रेष्टि यज्ञ, राम जन्म, सीता जन्म, विश्वामित्र आगमन, ताड़का बध, अहिल्या उद्धार , धनुष भंग विवाह, मार्ग में परशुराम भेट इत्यादि घटनाएं बालकाण्ड में है। अयोध्या काण्ड में राम युवराज, तिलकोत्सव का उल्लास, कैकेयी मंथरा प्रसंग, राम वनवास के लिए वर याचना, चित्रकूट

निवास, सुमन्त्र दशा वर्णन, दशरथ मरण, भरम चित्रकूट गमन, राम भरत मिलन, जनक राम मिलन, भरत का अयोध्या आगमन वर्णित है। राम अत्रि भेंट, विराध बध, सरभंग, सुतीक्ष्ण, अगस्त से राम की भेट, सूर्पणखा प्रसंग, सीताहरण, जटायु बध, कमन्ध प्रसंग, शबरी आश्रम अरण्य काण्ड तथा राम सुग्रीव मैत्री , बालि बध, लक्ष्मण कोध, वानर प्रेषण, सागर तट पर वानर बल वर्णन किष्किन्धा काण्ड की कथा वस्तु है। हनुमान द्वारा समुद्र सन्तरण, मैनाक – सुरसा – लंकिनी प्रसंग, हनुमान विभीषण भेंट, रावण का प्रणय निवेदन, सीता हनुमान भेंट, वाटिका विध्वंस, हनुमान रावण सम्वाद, लंका दहन, सीता के सन्देश को पाकर राम का सेना सहित प्रस्थान, विभीष्ण की शरणागति सेतुबन्ध, रामेश्वर की प्रतिष्ठा, शुक सारण प्रसंग, अंगद रावण सम्बाद, रावण मंदोदरी सम्बाद, वानर राक्षस युद्ध, लक्ष्मण शक्ति, कुंभकरण मेघनाद बध, रावण बध, राम अयोध्या प्रत्यागमन, राज्याभिषेक की (इसके बाद ग्रन्थ अपूर्ण) घटनाए सुन्दर काण्ड, लंका काण्ड एवं उत्तर काण्ड में वर्णित है। ग्रन्थ का मूलाधार राम चरित मानस है। काव्य का प्रारम्भ इस प्रकार हुआ है – श्री गणेशाय नमः। श्री रामाय नमः। अथ श्री रामावतार उत्पत्ति वर्णन लिख्यते। प्रत्येक काण्ड के अन्त मे इस प्रकार की पुष्पिका दी है – इति श्री पौरूषेय रामयण महामुक्त मार्गे अवतार चरित्रे वारहठ नरहरिदासेन विरचितं काण्डं समाप्तम्। ग्रन्थ अपूर्ण है, अतः लिपिकार एवं सम्वत अप्राप्त है। इसकी प्रति नागरी प्रचारिणी सभा काशी में है।

गोविन्द रामयण – (गोविन्द सिंह)

असुरो के अत्याचार से त्रस्त होकर देवो का क्षीर सागर में विष्णु से अवतार ग्रहण की प्रार्थना से इस कार्य का प्रारम्भ होता है। कौशल्या सुमित्रा से पुत्र न होने पर दो वर देकर कैकेयी से व्याह एवं देवासुर संग्राम के समय दशरथ द्वारा उन वरदानों की पुष्टि, मृग ध्वनि की भ्रम पर, श्रवण बध, ब्रह्म हत्या श्राप से मुक्त होने के लिए राज सूय यज्ञ का प्रारम्भ उसी से प्राप्त चरू के द्वारा चारो पुत्रो का जन्म, चारो भाइयों का अस्त्र संचालन विश्वामित्र द्वारा दशरथ को भयभीत कर बलपूर्वक राम लक्ष्मण को ले जाना, ताड़का बध, यज्ञ रक्षा, जनक पुर प्रवेश, धनुष भंग, राम विवाह, अवध प्रवेश, राज्याभिषेक की तैयारी, कैकेयी वरदान प्रसंग, वनगमन, दशरथ मरण, भरतागमन, चित्रकूट की तैयारी, कैकेयी वरदान प्रसंग, कौशल्या दुःख वर्णन, वनगमन, भरत के प्रत्यावर्तन के बाद पंचवटी जाते हुए विराध बध, सूर्पणखा प्रसंग, खरदूषण बध, जटायू बध, सीता हरण, सीता खोज, लंका दहन, समुद्र पर पुल बाँधकर जाती हुई राम की सेना, रावण अंगद सम्बाद, नारातक, देवातक, प्रहस्त अकम्पन, कुंभकरण, त्रिमुण्ड, महोदर बध, नागपाश, मेघनाद बध, रावण बध, अग्नि परीक्षा, राज्याभिषेक, सीता निर्वासन, लव का जन्म, कुश की उत्पत्ति, तीनो माताओं का शरीर पात, स्त्रियों के आग्रह पर सीता द्वारा दीवार पर रावण का चित्र बनाना एवं राम द्वारा उनके चरित्र पर लांक्षन लगाये जाने पर पृथ्वी का फटना एवं उसमें सीता का प्रवेश इसके बाद कमशः राम भरत लक्ष्मण एवं शत्रुघन का शरीर त्याग, गोविन्द रामायण की घटनाए है।

गुरू गोविन्द सिंह वीर योद्धा थे। इसीलिए उन्होंने राम कथा को वीरोत्साहक सम्बन्धी प्रसंगो का वर्णन बड़ी तन्मयता के साथ किया है। भक्ति प्रसंगों को अथवा कथा तन्तु जोडने वाले

प्रसंगो को विराम दे दिया है, जैसे अहिल्या शाप मोचन, शबरी प्रसंग, सीता शोध, लंका दहन इत्यादि घटनाओ को एक – एक ही छन्द में समाप्त कर दिया इसमें युद्धो का अनावश्यक वर्णन हुआ है।

रामार्णव रामयण – (झामदास)

सुगठित कथानक, पात्रो की भव्य योजना, रसो का सफल प्रयोग भवानुगामिनी भाषा का प्रयोग तुलसी के पश्चात कम ही कवियो में देखने को मिलता है। झामदास का नाम इस दिशा में लिया जा सकता है। उन्होंने संवत 1818 वि0 में रामार्णव रामयण का प्रणयन किया है, जिसमे राम जन्म से लेकर स्वर्गारोहण तक की समस्त कथा वर्णित है। इसका अयोध्या काण्ड प्राप्त नही है, शेष काण्डों की कथावस्तु इस प्रकार है।

दु:खिता पृथ्वी का गो रूप धारण कर ब्रह्म लोक जाना, दशरथ का पूर्व वृतान्त, पुत्रेष्टि यज्ञ, राम जन्म, बाल लीला, विश्वामित्र के साथ गमन, दशरथ शोक, ताड़का बध, अहिल्या उद्धार , मिथिला प्रवेश, पुष्प वाटिका प्रसंग, जनक की प्रतिज्ञा, जनक शोक, लक्ष्मण कोध, धनुष भंग, परशुराम प्रसंग, विवाह, बाल काण्ड की कथा है। अरण्य काण्ड में राम की ऋषियों से भेंट, अस्थि समूह देखकर राम का कोप, सुतीक्षण, अगस्त्य, जटायु मिलन, सूर्पणखा विरूपीकरण, खरदूषण बध, रावण द्वारा सीता हरण का निश्चय, राम द्वारा सीता का अग्नि में प्रवेश कराना, कनक कुरंग आगमन, लक्ष्मण द्वारा इसके रहस्य का उद्घाटन, मारीच बध, रावण के सम्मुख सीता का अपना वृतान्त बताना, सीता हरण, जटायु बध, अशोक वाटिका में स्थित सीता के सम्मुख रावण का प्रणय निवेदन, किष्किन्धा काण्ड में राम सुग्रीव मिलन, बालि बध, तारा प्रबोध, सुग्रीव का राज्याभिषेक, राम का प्रवर्षण, गिरि निवास, लक्ष्मण कोप वानर प्रेषण, सीता शोध रत, वानरों से स्वयंप्रभा एवं सम्पाती भेंट, सुन्दर काण्ड में हनुमान द्वारा सागर पार करना, सीता खोज, त्रिजटा स्वप्न, हनुमान का मुद्रिका समर्पण, लंका दहन, सीता सन्देश सुनकर राम का वियोग वर्णन, लंका काण्ड में राम का सागर तट आगमन, मन्त्र वाक्य, विभीषण अभिषेक, सेतु बन्धन, शुक सारंग प्रसंग, सीता के सम्मुख माया मय राम का बध, वानर राक्षस युद्ध, लक्ष्मण शक्ति, संजीवनी आनयन, कुंभकरण नारान्तक, महोदर विकुंभ बध, मायामयी सीता का बध, मेघनाद बध, लक्ष्मण रावण युद्ध, लक्ष्मण शक्ति, रावण यज्ञ विध्वंस, रावण बध, मंदोदरी विलाप, सीता शपथ, अयोध्या प्रत्यागमन, भरतादि बन्धुओं से भेंट उत्तर काण्ड में राज्याभिषेक रावण उत्पत्ति एवं विजय वर्णन, हनुमान उत्पत्ति, सीता परित्याग, लवकुश जन्म, शम्बूक बध, सीता का भूमि में प्रवेश, राम का स्वर्गारोहण इत्यादि घटनाए इसमें संगुम्फित है। मृगच्यवन, हरिश्चन्द्र, निमि, वशिष्ठ, मयाति, कबंध, विराध, बालि सुग्रीव की प्रासंगिक कथाए इसमे विन्यस्त है। अधिकारिक एवं प्रासंगिक कथाओं की सुन्दर योजना कथावस्तु में प्रवाह ममता, तारतम्यता के कारण यह काव्य हृदय ग्राही बन गया है। काव्य के अन्त में पुष्पिका इस प्रकार दी है – इति मद्राम चरित्रे रामार्णवे सकल पाप शमने विमल – विज्ञानानन्य भक्ति प्रदायके उमा माहेश्वर संवाद सप्तार्णवे स्वर्गारोहणं नामे कविशस्तरंगे। इति श्री उत्तर काण्ड कथा रामायण भाषा लिखतं सम्पूर्ण। शुभअस्तु। सिद्धवस्तु मंगलमस्तु श्री सं0 1976।।आषाढ़ कृष्ण नवाम्यामितिषु।रविवार।।

दयोरिया बाजार के राम गरीब वर्णवाल आत्मज वेणी माधव वर्णवाल ने इसे लिपि बद्ध किया है। इसकी प्रति नागरी प्रचारिणी सभा (काशी) में है।

रामश्वमेघ – (मधुसूदन)

इटावा निवासी माथुर चतुर्वेदी मधुसूदन दास ने रामश्वमेघ की रचना सम्वत् 1939 में की थी। वास्तव में यह मौलिक काव्य न होकर पद्म पुराण में वर्णित रामाश्वमेघ का अनुवाद है। समस्त कथा 68 अध्यायों में विभक्त है। कथानक का प्रारम्भ राम के अयोध्या प्रत्यागमन से शुरू होता है। सीता परित्याग ब्रह्म हत्या के प्रायश्चित स्वरूप अश्वमेघ यज्ञ का प्रारम्भ, अश्व की रक्षा के लिए शत्रुघन एवं पुष्कल की नियुक्ति से कथानक विस्तार पाता है। अश्व, अहिक्षात्रीय च्यवन मुनि के आश्रम एवं रत्न तट नगर से होता हुआ चक्रांकित नगरी में प्रवेश करता है। वहाँ के राजा सुबाहु के पुत्र दमन से शत्रुघन इत्यादि का भयंकर युद्ध होता है। वहाँ से विजयी होकर तेजपुर होता हुआ अश्व रेखा तट पर पहुँच कर उसके जल मे विलुप्त हो जाता है। जिसे हनुमान खोज कर लाते है। इस प्रकार कमशः अश्व देवपुर हिमालय एवं कुण्डल नगर होता हुआ बाल्मीकि आश्रम में पहुँचता है। जहाँ लव उसे पकड़ लेते है। उनसे युद्ध करते हुए शत्रुघन का पराजित होना, उनसे समस्त सेना का पराजित होना, लव का मुर्छित होना, सीता शोक, कुश प्रसथान, लवकुश दोनो भाइयों का मिलकर समस्त सेना को पराजित करना उनके राजमुकुटों को देख दुःखी सीता द्वारा अपने पतिव्रत के प्रभाव से जीवित करना वर्णित है। इस वृत्तान्त को सुनकर राम ने सीता को बुलाने के लिए लक्ष्मण को आदेश दिया। सीता पहले तो अपने पुत्रों को ही भेज देती है, किन्तु राम के विशेष आग्रह पर स्वयं अयोध्या चली आती है। राम सीता यज्ञ पूरा करते है। राम की तलवार के स्पर्श से अश्व दिव्य रूप प्राप्त कर स्वर्ग चला जाता है। इस प्रकार अवमेष स्नान कर राम सिंहासन पर बैठते है।

काव्य का प्रारम्भ व्यास सूत सम्बाद से शुरू होता है। शेष द्वारा वात्स्यामन से कवित्त रामाश्वमेघ की कथा को व्यास सूत को सुनाते है। आधिकारिक कथा के साथ कवि ने अनेक प्रासंगिक कथाओं को सन्निविष्ट किया है। च्यवन मुनि जन्म, सुकन्या से विवाह, अश्विनी कुमारों द्वारा नेत्रों की प्राप्ति, समुद्र की तपस्या, इन्द्र द्वारा तपोभंग का प्रयास, रावण बध की कथा, रजक प्रसंग, सीता परित्याग, लव कुश उत्पत्ति इस ग्रन्थ की प्रमुख प्रासंगिक कथाएं है, जिसमें कवि ने प्रसंगानुकूल अनेक उप कथाएं भी जोड़ी है। जैसे – रत्नग्रीव नरेश का तीर्थाटन, गण्डकी नदी का महत्व, शबर बधिक, शालीग्राम महात्म्य, सीता के बाल्यावस्था वर्णन के प्रसंग में उनके भविष्य का कथन, शुक – शुकी प्रसंग इत्यादि। इन प्रासंगिक एवं उप कथाओं के गुफन से कथानक में रोचकता अवश्य उत्पन्न हो गयी है किन्तु मूल कथानक के प्रवाह में व्याघात उपस्थित हो जाता है। यह कथाएं इतनी रोचक है कि पाठक का ध्यान इनमें रत होने से मूल कथानक से हट जाता है। एक सुगठित प्रबन्ध काव्य का यह गुण नही कहा जा सकता। इनके अतिरिक्त कतिपय ऐसे प्रसंगों का भी समावेश किया गया है जो नीरस है तथा कथानक की गति को मन्द एवं शुष्क बना देते है।

अद्भुत रामायण – (भवानी लाल)

जानकी विजय सीता महात्म्य बताने के लिए महाकाव्य लिखा गया है। विविध छन्दों में स्वर्गहीन कथा इस प्रकार है। रावण बध के बाद राम अयोध्या आकर सिंहासनारीन होते है। अनेक ऋषि, मुनि, देवता उनके महान कार्य की प्रसंशा करते है, जिसको सुनकर सीता मुस्कराने लगती है। कारण पूछने पर पिता जनक के गृह में ब्रह्मा से सुनी हुई सहस्त्र सिर वाले महारावण की कथा बताती है। राम सेना सज्जित कर उससे लड़ने आते है। महारावण राम की सेना को देखकर झुझलाया कि मै किससे लडूँ। गज रथ पर सवार होकर ऐसा बाण चलाया कि इन्द्र अमरावती में विभीषण लंका में और अन्य राजा अपनी – अपनी राजधानियों में जा गिरे। युद्ध भूमि मे केवल राम और सीत ही रह गये थे। शत्रु की प्रबलता देखकर सीता ने विकराल रूप धारण कर रावण को पकड़ लिया। महारावण का तेज सीता में लीन हो गया देवताओं की वन्दना के बाद ही सीता सौम्य रूप में आयी।

इस काव्य की हस्तलिखित प्रति नागरी प्रचारिणी सभा में सुरक्षित है। "विजय जनकी ग्रन्थ कर कहौं प्रसंग बखानि" से यह पता लगता है कि इस ग्रन्थ का नाम जानकी विजय ही है। रचना काल सम्वत् 1857 है।

बाल रामायण – (महाराज विश्वनाथ सिंह)

बालकाण्ड़ के प्रारम्भ में सरस्वती, गणेश, शंकर, सीता राम, हनुमान, विदेह आदि की वन्दना की गयी है। सम्बाद चतुष्टय में पार्वती, भारद्वाज, काकभुसुण्डि, सूत – सौनाक एवं सुतीक्षण सम्बादों का उल्लेख किया गया है। इसके बाद क्षर–अक्षर, सगुण – निगुण ब्रह्म का निरूपण हुआ है। राम जन्म की पूर्णपीठिका के रूप में मनु सतरूपा की तपस्या, दशरथ का पुत्रभाव शोक, पुत्रेष्टि यज्ञ, पायस विभाजन का वर्णन है। राम जन्म वर्णन, जात कर्म, नामकरण के पश्चात बालक राग की आदि मध्य एवं अन्त कौमार्य, पौगण्ड एवं किशोर लीलाओं का विस्तृत एवं मार्मिक ढ़ंग से वर्णन किया गया है। अन्यप्राशन, मुण्डन के बाद, मन्थरा प्रवेश उसका पूर्व चरित्र सरयू के किनारे आखेट योजना, राम पर वीर सिंह की पत्नी का मोहित होना, उन्हें द्वापर पर नन्द यशोदा बनने का वरदान मिलना, विश्वामित्र आगमन, ताड़का बध, यज्ञ रक्षा, धनुष भंग का पूर्व वृत्तान्त एवं जनक द्वार उसकी प्राप्ति, सीता को धनुष उठाते देख जनक की प्रतिज्ञा राम द्वारा धनुष भंग, परशुराम सम्बाद, अयोध्या बारात आगमन,चारों भाइयों का विवाह, अयोध्या आगमन, राम सीता विहार आदि दिनचर्या का वर्णन है।

संर्गहीन काव्य के अन्त में निम्न पुष्पिका दी गयी है – इति श्री महराज कुमार श्री बाबू साहेब विश्वनाथ सिंह जू कृत बालकाण्ड सम्पूर्ण समाप्त सम्वत् 1884 के आषाढ़ बदी सात को लिखा। लिपिकार श्री महिपाल तिवारी है। इसमें 66 पन्ने 132 पेज है, प्रतिलिपि लेखक के पास है।

कवित्त रामायण –

राम कथा के अनन्त वृत्त राशि में से उपयोगी और सरस अंश का संग्रह तथा अनुपयोगी एवं नीरस का त्याग कर अपेक्षित वस्तु का मंजुल निबन्धन राम गुलाम द्विवेदी ने किया है। कवित्त रामायण की कथा सात काण्ड़ों में विभाजित है। बालकाण्ड में राम रूप वर्णन चारों भाइयो की

बाल लीला, विश्वामित्र के साथ राम लक्ष्मण का जनकपुर में प्रवेश, पुष्प वाटिका में सीता दर्शन, सीता राम विवाह अयोध्या काण्ड में राम लक्ष्मण सीता की वन यात्रा, पथिको का क्षोभ, चित्रकूट निवास, सुमन्त्र की व्याकुलता, दशरथ मरण, भरत आगमन अरण्य काण्ड में सुतीक्षण प्रेम, जटायू भेंट, स्वर्ण हिरण वध, सीता हरण, नारद आगमन किष्किन्धा काण्ड में राम सुग्रीव भेंट, सप्त ताल वेधन, बालि बध, सीता शोध के लिए वानर प्रेषण सुन्दर काण्ड में समुद्र सन्तरण, जानकी हनुमान भेंट, लंका दाहन, सीता सन्देश, वानर सेना प्रस्थान, सेतुबन्धन लंका काण्ड में अंगद रावण सम्बाद, लक्ष्मण शक्ति, हनुमान का उत्साह प्रदर्शन, राम रावण युद्ध, रावण बध, अयोध्या वापसी, राज्याभिषेक का वर्णन है। काव्य की पुष्पिका इस प्रकार है – इति श्री राम चरित्रे पवित्र प्रबन्धे द्विवेदी पण्डित राम गुलाम कृत्त है। इस प्रकार प्रासंगिक कथाओं यथा चन्द्रकला प्रसंग, ताड़का बध, मख रक्षण, बाल्मीकि कथा, सूपर्णखा खरदूषण बध, आहिल्या, अजामिल, गज, ग्राह, गणिका इत्यादि की कथाओं वाला यह काव्य अपने ढ़ंग का अद्वितीय और अनूठा काव्य है। मध्य काल का राम साहित्य विविध विधाओं का युग कहा जाता है।

छन्द विधान –

सचेतन कलाकार कलात्मक सौष्ठव भावानुकूल स्वर संधान एवं साहित्यिक रस देने के लिए काव्य में छन्दों का प्रयोग करता है। छंद की सीमा में बाँधकर भाव अधिक प्रभुविष्णु हो जाते है। इसीलिए मध्यकालिक राम कवियों ने हिन्दी के अनुकूल वर्णिक एवं मात्रिक छंदो का प्रयोग किया है। काव्यानुसार छंदो का विवरण निम्न प्रकार से है। –

1 – रामचन्द्रिका –

मात्रिका – दोहा, रोला, पत्ता, छप्पय, प्रज्जटिका, वारिल्ल, पादाकुलक, त्रिभंगी, सोरठा, कुण्डलिया, सवैया, गीतिका, डिल्ला, मधुमार मोहन, विजया, शोभना, सुखदा, हीर, पद्मावती, हरिगीतिका, चौबोलो, हरिप्रिया, रसमाला।

वर्णिक – श्री, सार, दण्डक, तरणिज, सोमराजी, कुमार ललिता, नगरस्वरूपिणी, हंस, समानिका, नराच, विशेषक, चंचला, शशिवंदना, शार्दुलविकीडित, चंचरी, मल्ली, विजोड़ा, तुरंगम, कमला, संयुता, मोदक, तारक, कलहंस, स्वागता, मोटनक, अनुकूला, भुजंगप्रयास, तामरस, मल्लगयन्द, मालिनी, चामर, चन्द्रकला, चित्रपदा, लीलाकरण दण्डक, पृथ्वी, मल्लिका, इन्द्रवज्रा, चन्द्रवर्त्य, वंशस्थविल, मनोरमा तथा कमल।[1]

इनके अतिरिक्त डा० किरण शर्मा ने कुछ छंदो का उल्लेख किया है। रमण, प्रिया, गाहा, चौपया, नवपदी, आमीर, मालती, धनाक्षरी, तोमर, दोधक, तोरक, पंकज वाटिका, हारलिका, ब्रह्मस्मक, मदनहरा, पंचचामर, झूलना, जयकरी, मरहट्टा, हरिलीला, धीर उपजाति, गौरी, सुगीत, सिंह विलोकित तथा मनहरण।[1]

अवध विलास – दोहा, चौपाई, सोरठा, तोमर, कवित्त, आरिल्ला।

---

1 – आचार्य केशवदास डा० हीरालाल दीक्षित पृष्ठ 203

कवित्त रत्नाकर – कवित्त, छप्पय।

रामावतार – दोहा, चौपाई, गाथा, सवैया, इहा, वैताल, पदधरी, सोरठ

रामश्वमेघ (नारा.) – दण्डक, छप्पय, दोहा, कवित्त, विजय, तोटक, नाराच, मालिनी, चन्द्रकला, सवैया, चौपाई, तोमर, सुन्दरी, मझया, अभिराम, कामद, हरिगीतिका, शशिवन्दना, श्लोक, तारक मोतीदास, गीता, गीतिका, चंचरी, त्रिभंगी, मरहट्टा, मधुमार, सारंग, द्रुतविलम्बित।

रामरसार्णव – दोहा, चौपाई, सोरठा, मोतीदास, झूलना।

गोबिन्द रामायण – चौपाई, तोटक, पद्चरी, नाराच, सवैया, कवित्त, दोधक, मोदक, झूलना, अनूप नाराच, सुखदा, तारक, मनोहर, गीता, मालती, उटंकन, छप्पय, विराज, मोहिनी, श्री खंड (प्लवंग), अजवा, त्रिणनन, त्रिगता, वहड, त्रिभंगी, कलस, चौबोला, अमृतगीत, अमृतगति, चाचड़ी, बहोडा। रसावल (सोमराजी), रूआमल (रूममाल) अपूर्व, अलका, कुसुम विचित्रा, चरपट छींगा, होहा (सुची)।

रामविनोद – दोहा, सोरठा, कवित्त, गीतिका, विजय, तोमर, मनहरण, चांचरी, दण्डक, त्रिभंगी, नाराच, दण्ड तोटक।

रामार्णव रामायण – श्लोक, दोहा, चौपाई, सोरठा, भुजंग प्रपात, नगरस्वरूपिणी, हरिगीतिका, रथोद्धता।

जानकी विजय – दोहा, चौपाई, सोरठा, तोमर, हरिगीतिका।

राम रसायन – दोहा, चौपाई, सोरठा, ललितपद, रोला, विचित्र, नाराच, त्रिभंगी, छप्पय, भुजंग प्रयात, पद्चरी, मनोरमा, विजात, तोटक, तोमर, मधुमार, मोतीदास, सारंग, सुन्दरी, निशिपालिका, इन्द्रवज्रा, तुरंग, सीप, शालिनी, विष्णुपद, प्रभावती, दीपक, मल्लिका, आमीर, कोडचंद, संजुत, बरवै।

रामाश्व (मोहन) – दोहा, चौपाई, सोरठा, गीतिका, तोमर, हरिगीतिका।

बाल रामायण – श्लोक, सोरठा, गीतिका, तोमर, संजुत, हरिगीतिका।

कवित्त रामायण – रमचनाक्षरी, मत्तगयन्द, धनाक्षरी, अरसान, कुण्डलिया, दुर्मित, सवैया, किरीट सवैया।

नाम रामायण – दोहा।

उपर्युक्त सूची पर दृष्टिगत करने से यह प्रतीत होता है कि छन्द वैविध्य की दृष्टि से रामचन्द्रिका, रामाश्वमेघ (नारायन), गोविन्द रामायण, रामविनोद, रामार्णव रामायण एवं राम रसायन उल्लेखनीय ग्रन्थ है।

छन्दों की दृष्टि से राम चन्द्रिका हिन्दी साहित्य में एक प्रयोग है। राम चन्द्र की चन्द्रिका बरनत हों बहु छंद (रा० चं० 1–21) कहने वाले केशव ने रामचन्द्रिका को सचमुच ही छन्दों का अजायब घर ही बना डाला है। एकाक्षरी से लेकर अष्टाक्षरी[1] छंद तक के उदाहरण इस ग्रन्थ में मिल जाएगें। कहीं – कहीं आधे[2] तथा डेढ़[3] ही छंद में भाव व्यक्त किया गया है। सुगीत[4] मनोरमा[5] मदन मल्लिका[6] एवं कमल[7] केशव द्वारा अविष्कृत छंद है। कहीं – कहीं केशव ने पुराने छंदो को ही परिवर्तित करके प्रयुक्त किया है। जैसे – चौबोला मात्रिक है किन्तु प्रयोग वर्णिक छंद की तरह हुआ है।[8] अतुकान्त छंदो का प्रयाग केशव ने सर्वप्रथम किया है।[9] छंद परिवर्तन से कथा प्रवाह अवरूद्ध नही हुआ है। राम चन्द्रिका में उनके छंद परिवर्तन से कथा प्रवाह में कोई बाधा नही पड़ती है। अपितु नित्य नवीन छंदो के कारण प्रबंध एकरस न रहकर उसमें नवीन उत्साह बना रहता है।[10]

---

1 • राम चन्द्रिका 1–8–16

2 • राम चन्द्रिका 31 –41

3 • राम चन्द्रिका 31–9

4 • राम चन्द्रिका 1–4

5 • राम चन्द्रिका 11–34

6 • राम चन्द्रिका 2–5

7 • राम चन्द्रिका 32–17

8 • राम चन्द्रिका 1–36

9 • राम चन्द्रिका 6–27

10 • राम चन्द्रिका विशिष्ट अध्ययन डा० गार्गी गुप्त पृष्ठ 431

काल कमानुसार काव्य विवरण –

राम प्रकाश मुनिलाल (सं० 1642)[1] राम चन्द्रिका – केशव (सं० 1658), रामायण महानाटक – प्राण चन्द चौहान (सं० 1667)[2] राम रासो – माधव दास (1675)[3] बाल चरित्र – हृदय राम (1680)[6] रामश्वमेघ – मस्तराम (1684)[7] अवध विलास – लाल दास (1700)[8] रामायण चिन्तामणि – (1700)[9] गाथा रामायण – कर्पूर चन्द्र (1700)[10] अवतार चरित्र – नरहरिदास (1700)[11] हनुदूत – पुरूषोत्तम (1701)[12] राम विलास – पीताम्बर (1702)[13] कवित्त रत्नाकर – सेनापति (1706) रामावतार कथा – वारहट नरहरिदास (1707)[14] राम चरित्र – मानदास ब्रजदासी (1710)[15] सीता चरित्र – राम चन्द्र (1713)[16] जनक पचीसी – मंडन (1716)[17] रामाश्वमेघ – नारायण दास (1718)[18] दशरथ राम – सुखदेव मिश्र (1728)[19] लघु सीता सेतु – भगवती दास (1731)[20]

---

1 • मिश्र बन्धु विनोद 1 भाग पृ० 370

2 • हि० सा० का इतिहास – शुक्ल पृ० 137

3 • राम भक्ति में रसिक सम्प्रदाय पृ० 539

4 • सरोज सर्वेक्षण – डा० गुप्त 438

5 • सरोज सर्वेक्षण – डा० गुप्त पृ० 536

6 • हि० सा० का इतिहास – शुक्ल पृ० 137

7 • रीति काल के प्रमुख प्रबन्ध काव्य – डा० सिंह पृ० 93

8 • लेखक के पास उपलब्ध

9 • हि० सा० का इतिहास – शुक्ल पृ० 224

10 • खोज विवरण 1903 पृ० 67

11 • मिश्र बन्धु विनोद 2 भाग पृ० 427

12 • राज० हि० सा० हस्त ग्रन्थों की खोज 4 भाग 2

13 • मिश्र बन्धु विनोद 2 भाग पृ० 458

14 • ना० प्र० सभा काशी के पुस्तकालय में उपलब्ध सं 982

15 • मिश्र बन्धु विनोद 2 भाग पृ० 458

16 • खोज विवरण 1933 पृ० 126

17 • सरोज सर्वेक्षण – डा० गुप्त पृ० 589

18 • ना० प्र० सभा में उपलब्ध 271–15

19 • राम भक्ति में रसिक सम्प्रदाय पृ० 539

20 • हि० जैन साहित्य परिशीलन पृ० 57

रामायण – सोढ़ी महरबान (1740)[21] राम चरित रामायण – भूपति (1744)[22] राम रसार्णव – दलेल सिंह (1750)[23] राम चरित्र – कपूर चन्द्र (1754)[24] राम रसा, राम चन्द्रोदय – श्री कृष्ण भट्ट (1756)[25] जोग रामायण – जोगराम (1765)[26]।

जय सिंह प्रकाश – आत्माराम (सं० 1771)[1] गोविन्द रामायण – गुरू गोविन्द सिंह (सं० 1771) रामायण

हनुमत पच्चीसी – भगवन्त सिंह (सं० 1787)[2] रघुवंश दीपक – सहज राम वैश्य (सं० 1789)[3] कवितावली – सहज राम वैश्य[4] राम चरित्र – सूरत मिश्र (सं० 1794)[5] राम चरित्र रत्नाकर, राम कलाथर – सोमनाथ (सं० 1799)[6]

अध्यात्म रामायण – गुलाब सिंह (सं० 1800)[7] राम विनोद – चंद दास (सं० 1804)[8] जैमिन पुराण – सरजु पंडित (सं० 1805)[9] राम रहस्य – चंद दास (सं० 1807)[10] रामायण – बाबा बुलाकी दास (सं० 1807)[11]

राम चन्द्र चरित्र – शिव सिंह (सं० 1810)[12] राम चन्द्रिका – हंस राज बख्शी (सं० 1813)[13] जानकी विजय – प्रसिद्ध कवि(सं० 1813)[14] रामायण हनुमत पच्चीसी – भगवन्त राम खींची (सं० 1817)[15]

---

21 • हि० साहित्य का इतिहास – गणपति चन्द्र गुप्त पृ० 265

22 • अष्टछाप और बल्ल० सम्प्र० भा० पृ० 23

24 • ना० प्र० सं० 1226 – 28 पृ० 358

25 • सरोज सर्वेक्षण – डा० गुप्त पृ० 193–94

26 • राम भक्ति में रसिक सम्प्रदाय पृ० 539

1 • खोज विवरण 1941–43 पृ० 176

2 • राम भक्ति में रसिक सम्प्रदाय पृ० 540

3 • सरोज सर्वेक्षण – डा० गुप्त पृ० 737

4 • सरोज सर्वेक्षण – डा० गुप्त पृ० 738

5 • मिश्र बन्धु विनोद 2 भाग पृ० 553

6 • सरोज सर्वेक्षण – डा० गुप्त पृ० 760

7 • पंजाब प्रान्तीय हि० सा० का इति० – डा० बाली पृ० 313

8 • चंद दास शोध संस्थान बाँदा में है।

9 • हि० सा० का इति० – शुक्ल पृ० 333

10 • खोज विवरण 1920–20 पृ० 510

11 • खोज विवरण 1941–43 पृ० 510

12 • राम भक्ति में रसिक सम्प्रदाय पृ० 540

13 • मध्य कालीन खण्ड काव्य – डा० सियाराम पृ० 187

14 • खोज विवरण 1938–40 पृ० 65

15 • हि० सा० का इति० – शुक्ल पृ० 333

रामार्णव रामायण[16] राम चरित – राम चरण दास (सं० 1825)[17] राम चरित्र – मुरली धर मिश्र (सं० 1814)[18] रामायण भाषा चंद्रदास (सं० 1830)[19] अद्‌भुत रामायण – शिव प्रसाद पाण्डेय (सं० 1823)20 सीताराम गुणार्णव – गोकुल प्रसाद (सं० 1834)[21] सीता चरित्र – चेतन (सं० 1830)[22] हनुमत्चरित्र – सेवाराम (सं० 1834)[23] रामायण – हरिदास (सं० 1834)[24] रामायण – गुलाव सिंह (सं० 1835)[25]।

रामाश्वमेघ – मधुसूदन दास (सं० 1839)[1] रामाश्वमेघ – मोहन (सं० 1839)[2] रामावतार – जसवंत सिंह (सं० 1840)[3] अद्‌भुत रामायण – भवानीलाल (सं० 1840)[4] अद्‌भुत रामायण – रामजी भट्‌ट (सं० 1843)[5] हनुमत पच्चीसी – इच्छाराम (सं० 1847)[6] हनुमाटक – मनजू (सं० 1847)[7] राम सागर – आनन्द दास (सं० 1850)[8] आभास रामायण – इन्द्रदेव (सं० 1850)[9] राम चन्द्र चरित्र – विश्वनाथ सिंह (सं० 1852)[10] हनुमान पचीसी – लक्ष्मण शतक, राम रासो – खुमान (सं० 1852)[11]

---

16 • ना० प्रा० सभा काशी में उपलब्ध सं० 769–556

17 • हि० सा० का आलो० इति० – डा० राम कुमार वर्मा पृ० 478

18 • सरोज सर्वेक्षण – डा० गुप्त पृ० 553

19 • मिश्र बन्धु विनोद 2 भाग पृ० 771

20 • खोज विवरण सन् 1909–12 पृ० 401

21 • राज० हि० हस्त लिखित ग्रन्थों की खोज 2 भाग पृ० 73

22 • सरोज सर्वेक्षण – डा० गुप्त पृ० 247

23 • मिश्र बन्धु विनोद 2 भाग पृ० 811

24 • मिश्र बन्धु विनोद 2 भाग पृ० 762

25 • मिश्र बन्धु विनोद 2 भाग पृ० 814

1 • सरोज सर्वेक्षण – डा० गुप्त पृ० 565

2 • सरोज सर्वेक्षण – डा० गुप्त पृ० 539 लेखक के पास प्रति

3 • खोज विवरण 1935–37 पृ० 26

4 • मध्य कालीन खण्ड काव्य – डा० सियाराम पृ० 89

5 • मिश्र बन्धु विनोद 2 भाग पृ० 825

6 • रा० भ० में रसिक सम्प्र० – सिंह पृ० 540

7 • राम भक्ति में रसिक सम्प्र – सिंह पृ० 540

8 • खोज विवरण 1901 पृ० 70

9 • ना० प्रा० पत्रिका सं० 1889 13 भाग पृ० 409

10 • खोज विवरण 1901 पृ० 70

11 • सरोज सर्वेक्षण पृ० 219

राम करूणा नाटक – उदय (सं० 1852)[12] सीताराम गुणार्णव – रघुनाथ वंदीणन (सं० 1857)[13] रामाश्वमेघ – हरिसहाय (सं० 1859)[14] राम रावण युद्ध – मून (सं० 1859)[15] राम गुणोदय – धनीराम (सं० 1860)[16] कवितावली – परमेश्वरी दास (सं० 1860)[17] राम रसायन – पद्माकर [18] बाल्मीकि रामायण – हनुमत पचीसी – गनेश (सं० 1860)[19] राम प्रताप – माखन (सं० 1860)[20] रामायण – सहजराम (सं० 1862)[21] रामाश्वमेघ – नाथ गुलाम (सं० 1862)[22]।

राम चरित्र – सुन्दर दास (सं० 1867)[1] परार्ध चरित्र – देशराज (सं० 1869)[2] सत्योपाख्यान – ललकदास (सं० 1870)[3] बाल रामायण – विश्वनाथ सिंह (सं० 1870)[4] आनन्द रामायण – रामायण – विश्वनाथ सिंह[5] राम चन्द्रिका – मानकवि (सं० 1875)[6] वीर रामायण – बहादुर सिंह कायस्थ (सं० 1875)[7] रामाश्वमेघ – उमेद राव (सं० 1879)[8] राम विनोद – बलदेव दास (सं० 1879)[9] जानकी विजय – बलदेव दास (सं० 1879)[10]

---

12 • मध्य कालीन खण्ड काव्य – डा० सियाराम पृ० 105

13 • खोज विवरण 1923–25 पृ० 1374

14 • खोज विवरण 1903 – 3 पृ० 21

15 • राम भक्ति में रसिक सम्प्र – सिंह पृ० 541

16 • राम भक्ति में रसिक सम्प्र – सिंह पृ० 541

17 • राम भक्ति में रसिक सम्प्र – सिंह पृ० 541

18 • हिन्दी साहित्य का इतिहास – शुक्ल पृ० 285

19 • राम भक्ति में रसिक सम्प्र – सिंह पृ० 541

20 • सरोज सर्वेक्षण – डा० गुप्त पृ० 583

21 • खोज विवरण 1903–5 पृ० 78

22 • शिव सिंह सरोज पृ० 498

1 • खोज विवरण 1926–28 पृ० 475

2 • रीति कालीन प्रमुख प्रबन्ध काव्य – डा० सिंह पृ० 122

3 • हिन्दी साहित्य का आलोकित इतिहास – डा० राम कुमार वर्मा पृ० 476

4 • लेखक के पास उपलब्ध प्रति

5 • हिन्दी साहित्य का इतिहास – डा० शुक्ल पृ० 317

6 • मिश्र बन्धु विनोद 2 भाग पृ० 935

7 • मिश्र बन्धु विनोद 2 भाग पृ० 896

8 • खोज विवरण 1932–34 पृ० 125

9 • प्राचीन हस्त लि० पोथियों का विवरण 2 खंड पृ 73

10 • खोज विवरण 1929–31 पृ० 122

रामायण – वादे राय (सं० 1882)[11] राम चरित्र – कृष्ण लाल (सं० 1884)[12] रामायण – सीताराम (सं० 1887)[13] कवित्त रामायण – राम गुलाम[14] अद्‌भुत रामायण – राम कथामृत बाल्मीकि रामायण, श्री राम स्त्रोत – गिरिधर दास (सं० 1890)[15] राम स्वर्गारोहण – लोकदास (सं० 1892)[16] बाल्मीकि रामायण – संतोष सिंह (सं० 1894)[17] राम स्वर्गारोहण – लोकदास (सं० 1892)[18] रामायण माला – मातादीन शुक्ल (सं० 1896)[19] बाल्मीकि रामायण – महेश दत्त शुक्ल (सं० 1897)[20] कवित्त रामायण – महेश दत्त शुक्ल (सं० 1897)[21] राम रहस्य – रत्नहरि (सं० 1899)[22] रामाश्वमेघ भाषा – हरिसहाय दास (सं० 1900)[23] रामायण – समरदास (सं० 1900)[24] राम जन्म – संत सूरदास (सं० 1900)[25]।

यह अंतिम सूची नही है, प्रयास ही किया गया है। क्योंकि तुलसी परिवर्ती राम काव्य प्रकाश में न, आ सकने के कारण हस्त लिखित में ही रह गये। वैयक्तिक पुस्तकालयों, बस्तों में बंधे ये काव्य काल कवलित हो रहे है। अनेक काव्यों के नाम यत्र तत्र मिल जाते है। जैसे काशीराम कृत परशुराम संवाद[1] गोप कवि कृत राम भूषण राम अलंकार[2] ग्वाल कवि कृत रामाष्टक[3] गजराज उपाध्याय कृत राममाला[5] नागरी दास कृत राम चरित्र माला[6] इत्यादि।

---

11 • सरोज सर्वेक्षण – डा० गुप्त पृ० 509

12 • हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास – डा० गणपति चन्द्र गुप्त पृ० 265

13 • राम भक्ति में रसिक सम्प्रदाय पृ० 541

14 • सरोज सर्वेक्षण – डा० गुप्त पृ० 409

15 • लेखक के पास उपलब्ध प्रति

16 • जो. विवरण 1923–25 पृ० 971

17 • पंजाब प्रान्तीय हिन्दी साहित्य का इतिहास – डा० बाली पृ० 336

18 • सरोज सर्वेक्षण पृ० 548

19 • सरोज सर्वेक्षण पृ० 563

20 • सरोज सर्वेक्षण पृ० 563

21 • सरोज सर्वेक्षण पृ० 563

22 • खोज विवरण 1917–19 पृ० 58

23 • राम भक्ति में रसिक सम्प्रदाय पृ० 543

24 • खोज विवरण 1923–25 पृ० 1298

25 • ना० प्रा० काशी के ग्रन्थालय में उपलब्ध पृ० 354/252

1 • सरोज सर्वेक्षण – डा० गुप्त पृ० 188

2 • सरोज सर्वेक्षण पृ० 245

3 • भवत भावन (ग्वाल) ग्रन्थ में उपलब्ध लेखक के पास उपलब्ध।

4 • सरोज सर्वेक्षण पृ० 261

5 • सरोज सर्वेक्षण पृ० 284

6 • सरोज सर्वेक्षण पृ० 381

आधुनिक काल

परिस्थितियाँ एवं साहित्य –

मध्यकाल का अधिकांश साहित्य ईश्वर या आश्रयदाता को प्रसन्न करने के लिए लिखा गया था जबकि आधुनिक काल में भारतीय समाज के निम्न एवं मध्य वर्ग को मुखरित किया गया है। काव्य जो अब तक बँधी बँधायी परिपाटी में चल रहा था नवीन प्रेरणा नवीन परिस्थितियों से प्रभावित होकर अनेक धाराओं में विभक्त होकर प्रवाहित होने लगा, जिसका प्रवाह राम काव्यों में ही स्पष्ट परिलक्षित होता है क्योकि साहित्य बहुत कुछ काल्पनिक होते हुए भी समसामयिक युग का अनुलेखन भी होता है।

1 – राजनीतिक परिस्थितियाँ –

इस युग के साहित्य की राजनीतिक पृष्ठभूमि में ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना, प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम, भारत में विक्टोरिया शासन की प्रतिष्ठा, संसार का प्रथम महायुद्ध, जापान द्वारा रूस की पराजय, रोलेट एक्ट जलियाँवाला बाग हत्याकाण्ड, गाँधी जी का असहयोग आन्दोलन, स्वराज पार्टी की स्थापना, जिन्ना का काँग्रेस से पृथक होना, काँग्रेस और सरकार के बीच अनेक परिषदों और कमीशनों तथा पैक्टो द्वारा की गयी संधियां, 1936 – 1937 में निर्वाचन, 1940 में पाकिस्तान की माँग, 1942 में भारत छोड़ो आन्दोलन, 1946 में अन्तरिम सरकार की स्थापना, मुस्लिम लीग की घृणात्मक नीति के परिणाम स्वरूप कलकत्ता, विहार, पंजाब में भयंकर साम्प्रदायिक दंगे, 1947 ई0 वी0 15 अगस्त को भारत का स्वतंत्र होना और अनेक देशी समस्याओं का आना शुरू हो जाता है।[1]

स्वतंत्रता के बाद देशी रियासतों का विलीनीकरण धर्म निरपेक्ष स्वतंत्र प्रजातंत्र की घोषणा, पंचवर्षी योजनाओं के द्वारा देश के उत्थान का प्रयास, जमीदारी उन्मूलन कर देश को प्रगति के मार्ग में बढ़ाया गया है। चीनी, पाकिस्तानी आक्रमण एवं बंगला देश की घटनाओं से इस देश का भविष्य बड़ा ही उज्जवल दिखायी दे रहा है।

2 – सामाजिक परिस्थितयाँ –

वर्ण व्यवस्था का विकृत रूप हिन्दूओं का अनेको जाँति, उपजाँति में विभक्त होना, अलग – अलग, खान पान, रस्म – रिवाज, ऊँच नीच की कट्टर भावना, अछूत पन, कुरीतियाँ, आधुनिक काल को रिक्त रूप में मध्य काल की सामाजिक परिस्थितियो से प्राप्त हुई है। ब्रह्म समाज एवं आर्य समाज ने तत्कालिक दोषो धार्मिक विवाद, बाल विवाह, विधवा विवाह, अन्ध विश्वास, समुद्र यात्रा निषेध, स्त्री शिक्षा निषेध, जाति बहिस्कार, दहेज प्रथा इत्यादि का खण्डन कर समाज सुधार का व्यवहारिक रूप प्रस्तुत किया।

1– हिन्दी साहित्य, युग और पृवत्तियाँ, डा0 शिव कुमार शर्मा पृष्ठ 416

राजा राम मोहन राय, दयानन्द सरस्वती, राम कृष्ण परमहंस, विवेकानन्द, बाल गंगाधर तिलक एवं महात्मा गाँधी के कार्य सराहनीय यद्यपि इनके ये कार्य राष्ट्रीय स्तर के थे, जिससे इनके सामाजिक सुधारो का उतने व्यापक रूप से प्रभाव लक्षित नही होता जितना की होना चाहिये था फिर भी सामाजिक जागरण हुआ ही है।

3 – धार्मिक परिस्थितियाँ –

मध्य काल की धार्मिक परिस्थितियो का अवलोकन करते हुए हमने देखा है कि मुस्लिम शासको की धार्मिक संकीर्णता कट्टरता अनुदारता के कारण हिन्दू धर्मानुयायी अपने धर्म के प्रति कट्टर हो गये थे। यद्यपि उनका धर्म विचारो से रिक्त, पंडो पुजारियो को महत्व देने वाला अन्धविश्वास आडम्बरों से युक्त था, इसमे विशिष्ट कर्म काण्ड एवं संस्कारो के कारण पर्याप्त मतभेद था। आधुनिक काल तक आते आते मुस्लिम सत्ता के परिवर्तन के साथ ईसाई धर्म का प्रसार हुआ। ब्रिटिश शासन के सहयोग प्रेस के माध्यम से. ईसाई धर्म में हिन्दू धर्म पर कुठाराघात कर अपने मत का प्रचार आरम्भ किया। विद्यालयों में बाइबिल की शिक्षा अनिवार्य हो गई; परिणाम स्वरूप ईसाई धर्मोपदेशक हिन्दू देवी देवताओं और मूर्तियों की निन्दा करने लगे। देश भर में ईसाई प्रचारक केन्द्र खोले गये। शिक्षित युवक ईसाइयत के प्रभाव में आकर अपने धर्म को हीन अनुचित, अनुपयोगी, थोथा मानने लगे। परिणाम स्वरूप समाज में धार्मिक उतार – चढ़ाव व्याप्त होने लगे।

राजा राम मोहन राय, महादेव रानाडे, दयानन्द सरस्वती, रामचन्द्र परमहंस, विवेकानन्द, अरविन्द एवं महात्मा गाँधी प्रभृति धार्मिक नेताओं एवं विचारको ने इस सचेतना के उत्थान में प्रमुख भूमिका निभायी। राजा राम मोहन राय हिन्दू, मुस्लिम एवं ईसाई धर्म का गम्भीर अध्ययन कर बुद्धिवादी विचारधारा का सहारा लेकर ब्रह्म समाज की स्थापना की, जिसमें सिद्धान्त के प्रतिपादन का आधार उपनिषदो को एवं उपासना पद्यति ईसाई धर्म के आधार पर रखी गयी। कहना नही होगा कि दयानन्द सरस्वती आधुनिक युग के शंकराचार्य थे। रामकृष्ण परमहंस एवं विवेकानन्द ने धर्म के वास्तविक स्वरूप का व्यवहारिक रूप दिया, जिससे पाश्चात्य संस्कृति के लोग हिन्दू धर्म के प्रति आकृष्ट हुए महर्षि अरविन्द ने ज्ञान कर्म एवं उपासना के समन्वय से पृथ्वी पर मानवता वाद का प्रचार किया। इस प्रकार महात्मा गाँधी (कोई धार्मिक उपदेशक न होते हुए भी) ने भी इस प्रकिया में भरपूर सहयोग दिया।

4 – साहित्यिक परिस्थितियाँ –

कवि कर्म और आर्चात्व को एक साथ लेकर चलने वाले रीति कालिक कवियों ने अपने आश्रय दाताओं के लिए वैभव विलास के उपकरणो को जहाँ एकत्रित किया वही विविध नायिकाओ की अंग छटा, यौवन, रति के लिए उन्मादक चित्र प्रस्तुत किए है। सारांश यह है कि ऐन्द्रियता प्रधान श्रृंगारिकता, आलंकरण पृवत्ति के प्रति अनावश्यक मोह, यांत्रिकता, रूढिग्रस्त तथा अवयन्त्रिक जीवन दर्शन बदली हुई आधुनिक युग की आवश्यकताओं के अनुकूल नही था।

अब हम संक्षेप में इस युग की साहित्यिक प्रवृत्तियों का उल्लेख करेगे जिनसे आधुनिक राम काव्य प्रभावित हुए है।

(क) – भारतेन्दु युग –

भारतेन्दु युगीन कविता में तत्कालिक राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक परिस्थितियो के चित्रण के साथ ही भक्ति युगीन भक्ति भावना एवं रीति युगीन श्रंगारी भावना का पुट दिखाई देता है।(धन विदेश चलि जात) कह कर राष्ट्रीय भावना का सूत्रपात सर्वप्रथम भारतेन्दु ने ही किया है। नारी शिक्षा, छुआछूत सम्बन्धी सुधारवादी कविताएं उन्होंने ही लिखी थी। इस युग में बृज भाषा की प्रधानता थी जिसमें कजली विरहा, लवनी, ठुमरी, डोली, कहरवा और गजन जैसे लोक प्रचलित छन्दों का उपयोग किया गया। सांराश यह कि देश प्रेम सामाजिक दुरव्यवस्था का खण्डन धार्मिक रूढ़ियो और अंधविश्वासो पर कुठाराघात करने वाली कविताओं में नवीनता के प्रति आकुलता दिखाई पडती है। भारतेन्दु, बद्री नारायन चौधरी, प्रेमधन, प्रताप नारायन मिश्र, अम्बिका दत्त व्यास प्रमुख है।

(ख) – द्विवेदी युग –

भारतेन्दु युग में जिन प्रवृत्तियों का बीज बपन हो गया था, आगे चलकर द्विवेदी युग में उनका विकास हुआ। श्री महावीर प्रसाद द्विवेदी इस युग की साहित्यिक चेतना के प्रतीक है। उन्होंने गद्य औरं पद्य में खड़ी बोली का अबाध प्रयोग किया तथा उसकी काव्य में उपयुक्तता सिद्ध कर दिया। देश प्रेम की कविताएं भाषा, भोजन, भेष एवं साम्प्रदायिक संकीर्णता से ऊपर उठ चुकी थी। लोक सेवा, विश्व प्रेम, मानवतावाद, कर्तव्य त्याग संघटन और उन्नयन की प्रवृत्तियाँ तद्युगीन काव्यो में मुखरित हुई है। कवियो ने अपने विषय का चयन लोक प्रचलित पौराणिक आख्यानों ऐतिहासिक एवं राजनीतिक घटनाओं से किया है। इन्ही विषयो के माध्यम से हिन्दूओं के मन में जमी हुई हीन भावनाओं को नष्ट करने के लिए भारतीय संस्कृति की बुद्धि परक व्याख्या की गई है जिनमे राम और कृष्ण औतारी पुरूष न होकर इसी पृथ्वी को स्वर्ग के समान बनाने के लिए आदर्श मानव के रूप में उपस्थित किये गए है। दोहे, सोरठे, सवैये, घनाक्षरी के स्थान पर संस्कृत के ही वर्णवृन्तो का प्रचलन हुआ।

महावीर प्रसाद द्विवेदी, नाथूराम शर्मा, श्री धर पाठक, अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध, राम देवी प्रसाद, रामचरित उपाध्याय, मैथली शरण गुप्त, राम नरेश त्रिपाठी प्रमुख है। छन्द के क्षेत्र में जो विविधता इस युग में मिलती है अन्यत्र दुर्लभ है। यद्यपि इस युग की अधिकांश कविता में अपेक्षित गहराई नही है, कलात्मक समृद्धि भी नही है, किन्तु राष्ट्र के उद्‌बोधन, जागरण, सुधार और सांस्कृतिक पुरूत्थान, स्वरस खड़ी बोली के प्रयोग और संस्कार के कारण द्विवेदी युग काव्य इतिहास में भुलाया नही जा सकता।

(ग) – छायावाद युग –

कलात्मकता, साहित्यिकता, भाषा भाव और शिल्प विधान की दृष्टि से यह युग आधुनिक काल का प्रौढ़तम युग है। भाषा एवं भाव सम्बन्धी नूतन प्रयोगो को देखकर अनेक आलोचको ने इसको रवीन्द्र साहित्य तथा रोमांटिक धारा की अनुकृति कहा है। जबकि यह मूलतः भारतीय संस्कृति और

पाश्चात्य प्रभावो से प्रभावित होकर राष्ट्रीय जागरण के परिप्रेक्ष्य में विकसित हुआ है। दर्शन के क्षेत्र में अद्वैतवाद, सर्वात्मवाद, धर्म के क्षेत्र में रूढियो एवं वाह्याचारों से मुक्त व्यापक मानव वाद, समाज के क्षेत्र में समन्वय वादी राजनीतिक क्षेत्र में अर्न्तराष्ट्रीय एवं शान्ति की नीति, दाम्पत्य जीवन के क्षेत्र में हृदयवाद, साहित्य के क्षेत्र में व्यापक कलावाद ये छायावाद की विचारगत पृवत्तियाँ है।[1]

1 – हिन्दी साहित्य युग और पृवत्तियाँ – डा0 शिव कुमार शर्मा पृष्ठ 430

चित्रात्मक भाषा एवं लाक्षणिक पदावली, बिम्ब ग्राहिता, गेयता, भाषा की मसृणता प्राचीन एवं नवीन अलंकारो का प्रचुर प्रयोग इस युग की कलात्मक पृवत्तियाँ है। इस आन्दोलन की व्यापकता ने काव्य की सभी विधाओं को प्रभावित किया है। रंग भूमि, प्रेमाश्रम, गोदान, स्कन्ध गुप्त, आँसू, कामायनी, पल्लव युगवाणी, ग्राम्या, परिमल, अनामिका, गीतिका, रश्मिनीरजा, दीपशिखा, आचार्य शुक्ल के विश्रुत आलोचनात्मक ग्रन्थ और नए कलाकारो की रचनाएं इस युग की अक्षय निधियाँ है।

(घ) – प्रगतिवाद –

रूचि स्वातन्त्रय एवं आत्माभिव्यक्ति अधिकार भावना के परिणाम स्वरूप छायावाद में जो कल्पना क्लिष्टता अस्पष्टता उपमानो का अस्वभाविक प्रयोग एवं भाषा में अतिशय मसृणता एवं अर्न्तमुखी पृवत्तियाँ आ गई थी, वे देश की परिस्थितियों के अनुकूल नही थी। युवा हृदय असंतोष एवं विद्रोह से कशमशा रहा था। बुद्धि जीवी वर्ग ने राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक विसंगतियो से त्रस्त एवं कम्युनिज्म के देश व्यापी प्रभाव से प्रभावित होकर सन् 1936 में मुंशी प्रेमचन्द्र की अध्यक्षता में भारतीय प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना की। इसके लेखक प्रायः मार्क्सवाद से प्रभावित है। शब्दान्तर से यदि कहा जाए कि प्रगतिवाद मार्क्सवाद के राजनीतिक रूप का साहित्यिक संस्करण तो शायद अत्युक्ति नही होगी। इन कवियों ने साहित्य सोद्देश्य माना। मानवता की असीम शक्ति की सर्वोपरिता, जनशोषण का विरोध, धर्म विरोध, क्रान्ति की भावना, नारी के प्रति यथार्थ वादा दृष्टिकोण, सामाजिक समस्याओ के प्रति जागरूकता एवं साम्यवादी देशों के प्रति अन्ध श्रद्धा इस युग की प्रमुख पृतत्तियाँ है। इस युग के कलाशिल्प के सम्बन्ध में डा0 राम दरश मिश्र लिखते है, कि प्रगतिवादी कविता चूँकि सामाजिक जीवन की वास्तविकता को लेकर चली जनता तक पहुँचना और जनता के जीवन की ही बात करना उसका लक्ष्य रहा, इसलिए वह छायावाद की वायवी असमान्य रेशमी परिधान शालिनी और सूक्ष्म भाषा को छोड़कर सुस्पष्ट सामान्य प्रचलित भाषा को अपना कर चली। पन्त, निराला, यशपाल, नागार्जुन, अमृतराय, मुक्तिबोध, रांगेय राघव, केदार नाथ अग्रवाल इस धारा के प्रमुख कवि है।

(ङ) – प्रयोगवाद एवं नई कविता –

सिद्धान्त प्रचार, लाल रूस, लाल चीन, लाल सेना पर अन्धभक्ति एवं भाषा शैली में अतियथार्थ वादिता के विरोध में प्रयोगवादी कवि उठ खड़े हुए, जिनका प्रारम्भ तारसप्तक से माना जाता है। इसमें मानसिक कुंठा दमित काम भावना निराशा एवं प्रतिबद्धता की अभिव्यक्ति है। अभिव्यंजना शिल्प में बडा ही अनगढ़ एवं भदेश पन है। नये प्रतीक बिम्ब विधान के माध्यम से उपचेतन मन की अव्यस्थित भावनाओं को व्यक्त किया गया है। इसमें इस युग की कविताओं में वौद्धिकता की अधिकता

है। प्रयोगवाद मे जीवन के प्रति नकारात्मक दृष्टि व्याप्त थी। उसका उदात्ती करण नयी कविता में हुआ है। लघु मानव की क्षणिक अनुभूतियाँ ही काव्य विषय बनती है। जिसको साहित्यकार भोगता है। कथ्य की व्यापकता एवं अनुभूति की सच्चाई ही नई कविता की विशेषताएं है। इस प्रकार आधुनिक युगीन राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक एवं साहित्यिक परिस्थितियों का अवलोकन करते हुए कहा जा सकता है कि इनका प्रभाव राम काव्यों पर पड़ा है। आधुनिक काल में कालक्रमानुसार रचित राम काव्यों की सूची इस प्रकार है। कोष्ठक ( ) में लिखी गई संख्या विक्रम संवत् है।

दशरथ विलाप, (भारतेन्दु) राम निवास रामायण – जानकी प्रसाद (1933), राम स्वयंबर – रघुराज सिंह (1934), अयोध्या रत्न भण्डार – विनायक राव (1934), नवम् चामृत रामायण – जगन्नाथ प्रसाद (1934), राम चन्द्रोदय – राजा फतह सिंह (1958), सीता राम चरितामृग – शीतल प्रसाद सिंह (1959), लवकुश चरित – मिश्र बन्धु (1959), रामावतार – शिवरत्न शुक्ल (1966), उर्मिला संताप – मैथली शरण गुप्त (1966), राम चरित चिंतामणि – राम चरित (1977), सुलोचना सती – श्री विष्णु (1979), पंचवटी प्रसंग – निराला (1980), भरत भक्ति – शिव चरण शुक्ल (1987), कौशल किशोर – बलदेव प्रसाद मिश्र (1990), वैदेही वनवास – हरिऔध (1996), राम कृष्ण काव्य – हृशीकेश चर्तुवेदी (2000), राम राज्य – राज नारायन त्रिपाठी (2006), लवकुश युद्ध – जगदीश प्रसाद (2007), प्रदक्षिणा – मैथली शरण गुप्त (2007), जनतन्त्र राम राज्य – जमुना श्याम (2008), मनमोहिनी रामायण – मोहन स्वामी (2013), उर्मिला – बालकृष्ण शर्मा (2015), अग्नि परीक्षा – आचार्य तुलसी (2018), प्रिया या प्रजा – गोविन्द दास (2018), कैकेयी – चाँदमल अग्रवाल (2026), जानकी जीवन – राजाराम शुक्ल (2028), जानकी विजय – राजाराम शुक्ल (2028)।

आधुनिक राम काव्यों को वैचारिक दृष्टि से वर्गीकरण करते हुए डा0 गुप्त ने राष्ट्रीय भावना को व्यक्त करने वाले भारतीय संस्कृति को उज्जवल रूप में उपस्थित करने वाले अध्यात्मवाद और भौतिकवाद के संघर्ष की व्याख्या करने वाले पूर्व और पश्चिम के संघर्ष को व्यक्त करने वाले, आधुनिक राज्य का आदर्श उपस्थित करने वाले तथा भावना एवं साम्प्रदायिक काव्यों का उल्लेख किया है। शैली की दृष्टि से इति वृत्तात्मक शैली भाव संकलित वर्णनात्मक शैली, कलात्मक शैली तथा प्रतीकात्मक शैली का वर्णन किया गया है।

आधुनिक काल में राम काव्यों की कथावस्तु –

मध्य कालिक राम काव्यों की कथावस्तु का अध्ययन करते समय हम देख चुके है कि राम कथा मूलतः इतिवृत्त प्रधान है। वास्तव में कथानक प्रबन्ध काव्य का मूलाधार है। कथानक की महत्ता एवं उसका वर्गीकरण मध्यकालिक राम काव्यो की कथावस्तु के प्रसंग में हो चुका है। प्रस्तुत अध्याय में आधुनिक काल में राम काव्यों की संक्षिप्त कथावस्तु दी जा रही है।

रामचरित चिंतामणि –

इसमे कथा को नवीन दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया गया है। बाल्मीकि रामायण से मुख्य कथा का आधार लेकर युगानुकूल विचारधारा का समन्वय करते हुए पच्चीस सर्गो में राम कथा कही

गयी है। राम जन्म, सीता विवाह, सीता हरण, रावण बध, अयोध्या आगमन, राज्याभिषेक, सीता परित्याग, लवकुश जन्म, अश्वमेघ प्रसंग एवं लवकुश राम मिलन की घटनाएं वर्णित की गयी है। प्रासंगिक कथाओं का समुचित विकास नही हो पाया जैसे – राम का राज्याभिषेक, वन गमन, दशरथ मरण, राम भरत मिलाप, बालि बध इत्यादि। साथ ही बीच – बीच में विभिन्न वर्णनो का आयोजन कथा प्रवाह में व्याघात उपस्थित करता है।

पंचवटी प्रसंग –

कविवर निराला का पंचवटी प्रसंग चिन्तन प्रधान गीति नाट्य है। इसमे पाँच खण्ड है प्रथम खण्ड में राम सीता का वार्तालाप है जिसमे पंचवटी की महत्ता, प्रेम महिमा एवं लक्ष्मण सेवा का वर्णन है। द्वितीय खण्ड में लक्ष्मण का आत्म संताप, तृतीय खण्ड में सूर्पणखा के सौन्दर्य का वर्णन, चतुर्थ में सृष्टि प्रलय, भक्ति एव ज्ञान की चर्चा है और अन्तिम खण्ड में लक्ष्मण द्वारा सूर्पणखा का विरूपीकरण है। इसके कथानक मे अतिशय प्रवाहमयता एवं धारावाहिकता है।

साकेत –

गुप्त जी की दीर्घ साहित्य साधना का परिणाम साकेत है। इसका प्रारम्भ साकेत नगरी की सम्पन्नता वर्णन एवं लक्ष्मण उर्मिला के हास परिहास पूर्ण वार्तालाप से होता है। जिसके अन्त में कवि ने राज्याभिषेक के अमंगल की सूचना दी है। दूसरे सर्ग में कैकेयी मन्थरा सम्बाद वर्णित है। कवि के दो वरदानो की पृष्ठभूमि के रूप में भरत से सुत पर सनेह का मनोवैज्ञानिक कारण उपस्थित किया गया है। वरदान सुनकर दशरथ मुर्छित हो जाते है। तृतीय सर्ग में सुमित्रा के सर्ग मे राम दिखाई देते है, वही वनवास की आज्ञा सुनकर कोधित लक्ष्मण को सांत्वना देकर वह माता कौशल्या के पास चले जाते है। चतुर्थ सर्ग में कौशल्या का मुर्छित होना, राम सीता का वार्तालाप और अन्त में वे वन को प्रस्थान करते है। पंचम सर्ग में अयोध्या वासियो की व्याकुलता, गुहराज से भेंट, चित्रकूट निवास के प्रसंग है। षष्ठ सर्ग में उर्मिला की करूणावस्था, दशरथ मृत्यु, सप्तम् सर्ग में भरतागमन, कैकेयी का तिस्कार, एवं पिता के अन्तिम संस्कार का वर्णन है। अष्ठम सर्ग में चित्रकूट कथा प्रसंग में कैकेयी की आत्मग्लानि, उर्मिला लक्ष्मण मिलन, नवम् सर्ग में उर्मिला की दीर्घ कालिक विरह की झाँकी, दशम सर्ग में जनक परिवार के वाल्य जीवन की झाँकी अंकित करते हुए वाटिका में राम सीता एवं लक्ष्मण उर्मिला का प्रथम दर्शन, धनुष भंग, परशुराम आगमन, विवाह एवं विदा आदि है। एकादश सर्ग में भरत के त्याग की झाँकी के साथ शत्रुघ्न द्वारा सूर्पणखा का प्रसंग, खरदूषण का वध वर्णन है। इसी समय हनुमान को भरत वाण से नीचे गिरा देते है, जो उन्हे मारीचि बध, सीता हरण, सुग्रीव मिलन, सीता खोज, लंका दहन, विभीषण शखागति, कुम्भकरण बध तथा लक्ष्मण शक्ति के प्रसंग सुनाते है। भरत के पास संजीवनी बूटी पाकर हनुमान राम के पास वापस लौट जाते है। द्वादश सर्ग में उक्त प्रसंगो को सुनकर अयोध्या नर नारियो की प्रतिकिया, उर्मिला का सैन्य संचालन हेतु तैयार होना एवं वशिष्ठ द्वारा दिव्य दृष्टि से भविष्य की घटनाओं का प्रत्यक्षीकरण होता है। अन्त में उर्मिला लक्ष्मण वर्णन है।

कौशल किशोर –

इसमे राम के जीवन के पूर्वान्ह की घटनाएं विन्यसत है। रावण का अत्याचार, देवताओ की स्तुति, राम जन्म, उनका बाल्य सौन्दर्य वर्णन प्रथम तीन सर्ग की कथा है। चतुर्थ सर्ग से लेकर पंचम सर्ग में विश्वामित्र लक्ष्मण सम्बाद, ताड़का बध, राक्षसो से युद्ध एवं भारतीय संस्कृति का महत्त्व वर्णित है। अष्टम एवं नवम सर्ग में अहिल्या उद्धार, गंगा का वर्णन, दशम सर्ग से लेकर द्वादश सर्ग तक वाटिका वर्णन, राम सीता का प्रथम दर्शन पूर्व राग एवं विरह वर्णन, त्रयोदश से अष्टादश सर्ग तक धनुष यज्ञ, परशुराम सम्बाद, बारात, निमन्त्रण, विवाह एवं अन्त में राम के युवराज की घटनाओ का उल्लेख है। कथावस्तु की समीक्षा करते हुए डा0 परम लाल गुप्त ने लिखा है कि यद्यपि कथा में श्रृंखला वर्तमान है। तथापि इसका विन्यास पूर्ण नही कहा जा सकता है। कथा के तीन अंगो में – आदि मध्य और अन्त की कथा स्वयं अपने आप में पूर्ण कथा नही है। वह राम चरित का खण्ड भाग है।[1]

रामचन्द्रोदय –

राम चन्द्रोदय 16 कलाओ में विभक्त है। राम जन्म से लेकर सीता विवाह तक की सभी घटनाएं सातवी कला तक में वर्णित है। शेष कलाओ में विभिन्न वर्णन भरे हुए है, जैसे – राम सीता की अष्टयाम चर्चा षट्रितु वर्णन, वर्णश्रय व्यवस्था, राजनीति, वेदान्त तथा वेद विद्या एवं अन्त में ग्रन्थ परिचय है। इसके अतिरिक्त काव्यादर्श एवं सरयू वर्णन इत्यादि मूल कथा से असम्बन्धित अनेको प्रसंग भरे पड़े है, जिनसे कथा प्रवाह बाधित हो गया है। उसके अंगो का समुचित विस्तार नही हो सका। अन्तिम खण्डों में प्रबन्धात्मकता का सर्वथा अभाव है।

राम की शक्ति पूजा –

राम द्वारा शक्ति पूजा का वृत्त हिन्दी वालो के लिए अपरिचित है। यद्यपि देवी भागवत एवं शिव महिम्न स्त्रोत में इस प्रसंग का उल्लेख है, किन्तु निराला इसे बंगाल के शक्ति पूजक सम्प्राद से गृहण किया है। कथा का प्रारम्भ राम रावण के अपराजेय अनिर्णीत युद्ध से होता है। शाम के समय पराजित सेना के साथ निराशा से परिपूर्ण राम शिविर में आकर सलाह करते है। सीता की मधुर स्मृति धनुष भंग, ताड़का खरदूषण बध आदि घटनाओ के स्मरण से उनके मन में उत्साह तो उत्पन्न होता है किन्तु शक्ति समन्वित रावण के अट्टहास को सुनकर विवशता से उनके नेत्रों में आँसू छलछला आते है। राम की दुःखी मुद्रा देखकर जाम्बवान उन्हे शक्ति उपासना के लिए प्रेरित करते है। शक्ति की विराट कल्पना, हनुमान द्वारा देवी दण्ड से कमलो का लाना, आँठवे दिन उनके आराधना की परीक्षा के लिए देवी द्वारा एक कमल का हरण राम का क्षोभ एवं पूजा समाप्ति के लिए अपने एक नेत्र के अर्पण हेतु तत्पर होना, दुर्गा का प्राकट्य एवं विजय का अश्वासन इसकी कथावस्तु है। जिसमे प्रासंगिक कथा के रूप में हनुमान द्वारा महाकाश में समेटने का प्रयास एवं अन्जनी द्वारा उनके समेटने की प्रबोध कथा है।

---

1 – हिन्दी के आधुनिक रामकाव्य का अनुशीलन पृष्ठ 114

वैदेही वनवास –

वैदेही वनवास की कथा 18 सर्गो में विभक्त है। कथा का प्रारम्भ राम सीता के परस्पर सम्भाषण, लंका में भयावह दहन की स्मृति एवं तज्जन्य वेदना से होता है। द्वितीय सर्ग में राज भवन में राम द्वारा चित्रो का दर्शन इसी अवसर पर गुप्तचर का आगमन एवं सीता के लोकापवाद एवं राम की वेदना, तृतीय सर्ग में मंत्रणा गृह में चारो भाइयो से विचार विमर्श, भरत का विरोध किन्तु राम द्वारा तोषराधन के वृत्त ग्रहण की घटना है। चतुर्थ सर्ग में वशिष्ठ की सम्मति से राम द्वारा सीता को बाल्मीकि आश्रम में भेजने का निश्चय, पंचम सर्ग में इस सूचना को सुनकर दुःखी हृदय से प्रिय विरह जीनत कठिनाइयो को सहन करने के निश्चय करने का उल्लेख है। षष्ठ सर्ग में सीता कौशल्या तथा वहनो से वाल्मीकि आश्रम जाने के लिए विदा लेती है। सप्तम सर्ग में लक्ष्मण के साथ का सीता का प्रस्थान, अष्ठम सर्ग में सीता का आश्रम प्रवेश, नवम् सर्ग में लक्ष्मण का अयोध्या लौटना, दशम् सर्ग में अतीत की यादे, सीता का चाँदनी से विरह निवेदन, एकादश सर्ग में लवणासुर के बध के लिए शत्रुघन का आगमन, लवकुश जन्म, द्वादश सर्ग में बालको का लालन पालन, चतुर्दश सर्ग में विज्ञानवती प्रसंग, पंचदश सर्ग में पुत्रो की शिक्षा, षोडस सर्ग में शत्रुघन का प्रत्यावर्तन, सप्तदश सर्ग में अश्वमेघ समारोह वर्णन सीता का अवध आगमन, पति चरण स्पर्श से उनका दिव्य ज्योति में मिलना घटनाओं का उल्लेख है।

उर्मिला –

सन् 1922 में प्रारम्भ होने वाला काव्य उर्मिला 1934 में समाप्त हुआ किन्तु कवि के कुछ अपरिहार्य कारणे से सन् 1957 में प्रकाशित हुआ। कवि ने राम कथा के केवल उन्ही अंशो का चयन किया है जिनका प्रत्यक्ष सम्बन्ध उर्मिला से है। इसकी कथावस्तु छः सर्गो में विभक्त है। प्रथम सर्ग में जनक के प्रासाद प्रांगण मे वालके लिनिरत सीता और उर्मिला के बाल्य जीवन का चित्रण है। द्वितीय सर्ग में विवाहोपरान्त देवर शत्रुघन एवं नन्द शान्ता के साथ उर्मिला के वाणी विनोद और लक्ष्मण के साथ प्रेम पूर्ण दाम्पत्य जीवन का वर्णन है। तृतीय सर्ग में रामवन गमन की प्रतिक्रिया जिसमे उर्मिला के मानसिक मन्थन विद्रोह सन्तुलन आत्मनिष्ठा का क्रमिक विकास चित्रित है। चतुर्थ एवं पंचम सर्ग में उर्मिला की वियोग जनित आकुलता की मीमांसा है। षष्ठ सर्ग में राम विजय आर्य संस्कृति का विकास, विभीषण का राज्याभिषेक, अयोध्या आगमन तथा लक्ष्मण उर्मिला मिलन के प्रसंगो की अवधारणा की गयी है। इस ग्रन्थ के बारे में लेखक ने कहा है कि मैने विशेष कर इस ग्रन्थ में राम वनगमन को एक विशेष रूप में देखने और उपस्थित करने का साहस किया है। राम की वन यात्रा मेरी दृष्टि में एक महान अर्थपूर्ण संस्कृति प्रसार यात्रा थी।[1]

---

1 – उर्मिला – श्री लक्ष्मण चरर्णापणमस्तु पृष्ठ 6

राम राज्य – (मिश्र)

राम के चरित्र में युग जीवन की आकांक्षाओ को परितृप्त करने और मानव मूल्यो की प्रतिष्ठा करने की अमोघ शक्ति विद्यमान है। डा0 मिश्र ने इसी महत्त कल्पना को राम राज्य ने साकार करने का प्रयास किया है। इसमे कथा उस समय से प्रारम्भ होती है, जब निर्वासित राम सुमन्त्र के रथ पर वैठ कर वन की ओर वढ़ रहे है।[1] दूसरे सर्ग में भारद्वाज आश्रम का, तीसरे सर्ग में बाल्मीकि भेट का चौथे में चित्रकूट प्रसंग, पाँचवें में अगस्त्य परामर्श का एवं पंचतटी का छठे में सूर्पणखा की घटना एवं खरदूषण युद्ध का साँतवे में किष्किन्धा काण्ड का, आँठवे में सुन्दर काण्ड को और नवम् सर्ग में रावण बध का विवरण दिया है। दशवे सर्ग में राम का राज्याभिषेक ग्यारहवें में भारतीयो के मानव धर्म की घोषणा है और बारहवे सर्ग में राम राज की व्यवस्था का वर्णन है।[2] कैकेयी की वर याचना, दशरथ मरण, केवट प्रसंग, सीता हरण, शबरी भेंट, लंका प्रसंग, सेतु बन्धन, अंगद प्रसंग, लक्ष्मण शक्ति और सीता निर्वासन की घटनाएं संकेत रूप में एक या दो पदो में है। कथा का मूलाधार मानस है। सृजन की मूल प्रेरणा कवि को महावीर प्रसाद द्विवेदी से मिली थी। राम राज्य की धारणा यद्यपि कल्पित अवधारणा है। किन्तु ऐतिहासिक कथा ने उसे प्रमाणिकता प्रदान की है।

लीला –

लीला का कथानक बालकाण्ड से सम्बन्धित है। इसमे कुल नौ दृश्य है। पृथ्वी पर हर्षोल्लास राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघन, धीर और गम्भीर का मृग विषयक वार्तालाप, विश्वामित्र का आगमन, राम का दशरथ से विश्वामित्र के साथ जाने का आग्रह, पुत्र वियोग से व्यथित कौशल्या को सुमित्रा द्वारा प्रबोधन, अराल एवं कराल द्वारा भारत एवं लंका के वैशिष्ट्य का प्राकट्य,. ताड़का बध, भरत शत्रुघन सम्बाद, राम और सीता तथा लक्ष्मण उर्मिला का वाटिका में अनुराग वर्णन, एक निराश राजा द्वारा परशुराम को धनुष भंग की सूचना का समभाषण अन्त में परशुराम प्रसंग वर्णित है। प्रायः सभी घटनाएं नवीन एवं मौलिक है।

अग्नि परीक्षा –

फिल्मी गानो और भजनो की लय पर इस गीत प्रधान कृत्ति की रचना हुई है। शुभागमन, षड़यन्त्र, परित्याग, अनुताप, प्रतिशोध, मिलन अग्नि परीक्षा एवं प्रशस्ति आठ खण्डो में काव्य विभक्त है। कथा का आधार जैनाचार्यो के राम काव्य है। लक्ष्मण द्वारा रावण बध, सीता परित्याग का कारण, रानियो का षडयन्त्र, सीता को लेने के लिए राम का जाना, सीता के भाई भामण्डल का उल्लेख, लवण और अंकुश का विवाह दोनो भाइयो द्वारा अयोध्या पर आक्रमण, परस्पर मिलन अग्नि परीक्षा, जल प्रवाह की घटनाएं ब्राह्मण राम कथा से भिन्न है। इसमे राम के चरित को पतित रूप से प्रस्तुत किया गया है।

---

1 – बालकृष्ण शर्मा नवीन, व्यक्ति एवं काव्य, डा0 लक्ष्मी नारायण दुबे पृष्ठ 131
2 – राम राज्य, डा0 बलदेव प्रसाद मिश्र पृष्ठ 9

अर्थ प्रकृत्तियो, कार्य अवस्थाओ और सन्धियो से युक्त तथा परम्परागत रूढ़ियो से युक्त विवरण प्रधान काव्यो में राम चरित चिन्तामणि कौशल किशोर, वैदेही वनवास, जानकी जीवन तथा नवीन कल्पनाओ से युक्त कलात्मक कथावस्तु प्रधान काव्यो में साकेतसन्त, कैकेयी, उर्मिला, राम राज्य, भूमिजा, विदेह, भगवान राम इत्यादि काव्य ग्रन्थ प्रमुख है। सम्पूर्ण कथावस्तु लेकर चलने वाले काव्य भगवान राम एवं अरूण रामायण में प्रायः सभी रसो की अभिव्यक्ति हुई हैं राम कथा श्रंगार, वीर रस प्रधान ही है।[1] भाव व्यंजना में मार्मिकता, गहनता, सूक्ष्मता की दृष्टि से साकेत, वैदेही वनवास, उर्मिला,ा कौशल किशोर, साकेतसन्त, राम राज्य, कैकेयी, भगवान राम प्रमुख रामायण है। रस के अंगो, भावानुभावो का वर्णन साकेत में अच्छी प्रकार हुआ है। साथ ही वस्तु वर्णन की दृष्टि से आधुनिक राम काव्यो का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत है। प्रायः सभी परिवेशो का वर्णन किया गया है। रामचरित चिन्तामणि, राम चन्द्रोदय, भगवान राम ने जहाँ इतिवृत्तात्मकता है, वहाँ साकेत सन्त अरूण रामायण में संश्लिष्टता है। निःसंकोच कहा जा सकता है, कि आधुनिक राम काव्य में वस्तु वर्णन से भाव सम्प्रेषणीयता का विस्तृत है। मध्य कालीन राम काव्यो में वस्तु वर्णन के सन्दर्भ में हमने देखा है, कि प्रसंगानुकूल वर्णनो से सौन्दर्यानुभूति एवं भाव सम्प्रेषणीयता में सहायता मिलती है। इसलिए प्रबन्धकार इसका वर्णन अनिवार्य सा मानता है। राम कथा चित्रफलक अत्यन्त व्यापक है ग्राम, जनपद, शहर, जंगल सभी स्थान तथा सांस्कृतिक संस्कार सामाजिक आचार व्यवहार सभी अनेक परिवेश में आ जाते है। आधुनिक राम कवियो में पुरूष एवं नारी सौन्दर्य नगर ग्राम, आश्रम, राजसभा, नदियाँ, शाम सुबह, रात्रि, सरोवर, भोजन, उत्सव सभी का वर्णन किया है।

---

1 – भूमिजा, रघुवीर शरण मिश्र पृष्ठ 7

अध्याय - द्वितीय

द्वितीय अध्याय

हिन्दी रामकाव्य में तुलसीदास का साहित्य और आञ्जनेय भक्ति :-

भक्ति का क्षेत्र अथाह सागर है, और रामकथा की नौका पर अगणित संत महात्मा बहुविज्ञ शोधार्थी गंतब्य तक पहुँच रहे हैं।

विभिन्न शोध प्रबन्धों के अवलोकन के बाद यह धारणा अवश्य पुष्ट होती है कि हिन्दी साहित्य के विद्वानों ने भक्ति का पर्याप्त मन्थन कर सारतत्व का दोहन किया है तथा जिस प्रकार मन्थनोपरान्त भी कोई तत्वांश शेष रहता है उसी प्रकार राम भक्ति तुलसीदास जी के साहित्य में अंजनीनन्दन की भी शक्ति है।

भक्ति के क्षेत्र में आन्जनेय भक्ति वह सेवक द्वार है जिसमें प्रवेश किये बिना राम के दर्शन और राम भक्ति दोनों ही दुर्लभ है। वस्तुतः तुलसीदास जी का मानस आध्यात्मिक आधार भूमि में तभी परिपक्व हो सका था जब उन्हें कपीश आन्जनेय से प्रेरणा प्राप्त हुई थी।

"सीता रामगुणग्राम पुष्यारण्य विहारिणौ
वन्दे विशुद्ध विज्ञानौ कवीश्वकपीश्वरो।।"[1]

भक्ति साहित्य में यह धारणा अत्यन्त प्रबल है कि लोकमंच पर सभी नर्तक हैं, केवल एक राम इच्छानुसार निर्देशन करता है। तुलसी का मानस "सबै नचावत राम गोसाईं" कहकर सभी आध्यात्मिक आधार की पुष्टि करता है। भक्ति–साहित्य में हनुमान को शंकर सुअन की संज्ञा दी गयी है।

आध्यात्मिक दृष्टि से राम–रस पान करने के लिए शिव ही आंजनेय रूप में अवतरित हैं। जिस प्रकार राम–भक्त द्वारा शिव की उपेक्षा राम को सह्य नहीं है उसी प्रकार आंजनेय या शिव को असह्य है। संकट ग्रस्त जीवन में शरणागत वत्सल्यता सभी को रुचिकर लगती है। प्रभु का यह गुण आंजनेय को भी मिल गया है। तुलसी साहित्य में तापत्रय की चर्चा और ताप निवारण के उपाय की आशंका ही तो भक्त का संताप है। श्रीमद्भागवत के अनुसार भक्ति को भी इसी आध्यात्मिक पीड़ा ने ग्रसित किया था। ज्ञान और वैराग्य भी पीड़ित हुए थे। अन्ततः अध्यात्मिक खोज से ही निवारण सम्भव हो सका था। यह आध्यात्मिक संयोग ही है कि तुलसी ने अपनी प्रौढ़तम रचना 'विनय पत्रिका' में अन्य के लिए एक दो या कुछ पद लिखा है किन्तु महारूद्र शिव के प्रतीक हनुमान की वन्दना के लिए 11 पद लिखे हैं। इससे स्पष्ट है कि तुलसी की दृष्टि में राम तो आराध्य है लेकिन आध्यात्मिक धरातल आंजनेय कृपा से ही तुलसी को मिला है। तुलसी के विपुल साहित्य में आंजनेय भक्ति "राम से अधिक राम कर दाता" के आधार का अध्ययन ही इस शोध–प्रबन्ध का लक्ष्य है।

साहित्यकार श्री अमृतलाल नागर ने अपने साहित्यिक उपन्यास "मानस का हंस" में तुलसीदास के जीवन में भक्तिभावना का आरम्भ आंजनेय भक्ति से ही स्वीकार्य किया है। उन्होंने तुलसी के बनारस प्रवास काल में निवास के बाहर लगे हुए पीपल के विशाल वृक्ष में ब्रह्म राक्षस या प्रेतात्मा की परिकल्पना कर भयग्रस्त तुलसी को भावनात्मक दृष्टि में हनुमान चालीसा के रूप में हनुमत वन्दना करते हुए वर्णित किया। यही हनुमत वन्दना की निरन्तरता तुलसीदास की आंजनेय भक्ति है। इसी की प्रेरणा से चित्रकूट वास के समय राम दर्शन की संभावना बढ़ सकी थी –

"चित्रकूट के घाट पर भइ संतन की भीर,
तुलसीदास चन्दन घिसै तिलकै देत रघुबीर।।"

---

1. रामचरित मानस (बालकाण्ड श्लोक 4)

तुलसीदास की भक्ति भावना का आधार –

भक्ति सम्बन्धी चिरन्तन धारा की ओर दृष्टिपात करने से यह तथ्य पूरी तरह स्पष्ट हो जाता है कि वह तर्क पूर्ण वाक्य संघटन मात्र न होकर मानव जीवन के चिरन्तन सत्य को स्पष्ट करने वाली विचार विभूति है, इसके अतिरिक्त वह समाज के लिए अत्यन्त एकान्तिक सिद्ध होने वाली वस्तु भी नही है, वरन उसमें समाज नियमन के उच्चतम उपादानों का भी सुन्दर समायोग है। तुलसी की भक्ति भावना का आधार आध्यात्मिकता के साथ – साथ भक्ति मार्ग को भी संश्लेषित करती है। गोस्वामी जी के आध्यात्मिक चिन्तन की इस व्यवहारिकता अथवा समाज सापेक्षता को भी यदि उसकी सर्वोच्च विशेषता कह कर सम्बोधित किया जाय तो भी असंगत न होगा व्यवहारिक दृष्टि से इसको हम दो भागों में विभक्त कर सकते है –

समाज नियमन के उच्चतम उपादानो का सुन्दर समायोग –

भक्ति भावना से युक्त आध्यात्मिक चिन्तन का स्वरूप हमें 'अरण्य काण्ड' में ही प्राप्त होता है एक ओर तो उस भारतीय परम्परा के अत्यन्त अनुकूल है, जिसका अनुधावन करते हुए प्राचीन काल में ऋषि कुलों एवं गुरू कुलों का निर्माण हमारे यहॉ जंगलो में किया जाता था। किन्तु दूसरी इसमें भक्ति भावना का विशुद्ध एवं परिनिष्ठत स्वरूप भी देखने को मिलता है, जो वन वासियों के लिए ही नही, समाज सेविको एवं सद् ग्रहस्थों के लिए भी उतना ही प्रयोजनीय एवं महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकता है।

समाज सम्पोषण की अनिवार्यता –

कहना न होगा कि इसी 'अरण्य काण्ड' में शबरी से की गयी नवधा भक्ति की विवेचना के प्रसंग में तथा अयोध्या काण्ड में बाल्मीकि द्वारा इंगित किये जाने वाले निवास स्थलों की सूची में भी हमें क्रमशः भक्ति का यह सदाचारानुमोदित स्वरूप ही विशेष रूप से परिलक्षित होता है। भक्ति यहॉ अध्यात्म के साथ मिलकर समाजिक उपयोगिता से विच्छिन्न होकर नही वरन उसकी समपोषिका बनकर प्रगट हुई है। इसके अतिरिक्त यहॉ हमें निश्छ्लता, समदर्शिता, दया, क्षमा, मैत्री के वे सभी सोपान देखने को मिलते है, जो भक्ति को एक व्यापक ठोस आधार दे सकने में हमें समर्थ है।

निज गुन श्रवन सुनत सुकुचाही । परगुन सुनत अधिक हर्षाहीं ।।
सम सीतल नहि त्यागहि रीती । सरल सुभाउ सबहि सम प्रीती ।।
जप तप व्रत दम संजम नेमा । गुरू गोविन्द विप्र पद प्रेमा ।।
श्रद्धा क्षमा मैत्री दाया । मुदिता मन तद प्रीति अमाया ।।
दभ मान मद करहि न काऊ । भूलि न देहि कुमारग पाऊ ।।[1]

1 – "मानस आरण्य काण्ड" 34 –4, 5,6 चतु0 संस्करण

उधर आदि कवि बाल्मीकि द्वारा इंगित किये जाने वाले राम के आवास योग्य स्थलों की सूची में भी हमें भक्ति का प्रौढ़ आलम्बन बन सकने वाले ठोस आधारों की कमी नही दिखायी पडती। इस सम्बन्ध में भी कवि का कथन है –

काम क्रोध मद मान न मोहा । लोभ न क्षोभ न राग न द्रोहा ।।
जिनके कपट दंभ नहि माया । तिन्ह के हृदय बसहु रघुराया ।।

जननी सम जानहि पर नारी । धनु पराव विष ते विष भारी ।।

अवगुन तजि सबके गुन गहही । विप्र धेनुहित संकट सहही ।।[1]

प्रेम तत्व की सर्वोपरिता –

गोस्वामी तुलसीदास जी ने आध्यात्मिक चिन्तन किंवाभक्ति पद्धति की एक विशेषता यह है कि इस क्षेत्र में उन्होंने वर्णाश्रम धर्म की कठोर मर्यादाओं का बड़ी सीमा तक शिथिलीकरण किया है जैसा कि हम देखते है कि भक्ति के उच्चतम क्षेत्र में केवल प्रीति की रीति का ही महत्व सर्वोपरि है। अयोध्या काण्ड में –

"राम सखा ऋषि बरबस भेटा । जनु महि लुठत सनेह समेटा ।।"

की प्रकिया के साथ ही यहा हमें समाजिक मर्यादा के तिरोभाव का जो दृश्य दिखायी दे रहा है, उसका कारण भी यही है। गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा प्रतिपादित भक्ति के क्षेत्र में समानता के सिद्धान्त का यह एक अत्यन्त सुदृढ़ तथा सुविचारित चरण है। प्रोफेसर "बरान्निकोव" ने अपनी भूमिका में यह इंगित किया है कि तुलसीदास द्वारा भक्ति भावना के क्षेत्र में समानता के सिद्धान्त को अभिकल रूप से स्वीकार किये जाने की प्रवृत्ति ने तथा उन्ही के द्वारा प्रतिपादित वर्णाश्रम धर्म की कट्टरता के सिद्धान्त ने स्पष्ट ही एक प्रकार का अन्तर्विरोध परिलक्षित होता है।[2]

---

1 – "मानस अयोध्याकाण्ड" 129 – 1, 2,3,4,

2 – "मानस" की रूसी भूमिका पृष्ठ 132

वास्तविकता यह है कि गोस्वामी जी ने वर्णाश्रम धर्म की मर्यादाओं को केवल समाज के अन्तर्गत उसके लौकिक सम्बन्धों की सुरक्षा के लिए तथा उसके दैनिक व्यापारों के सम्पादनार्थ अपनी स्वीकृति दे रखी थी। आध्यात्मिक चिन्तन के क्षेत्र में गोस्वामी जी ने इस शिथिलीकरण ने उनकी अपनी समन्वयात्मक चेतना के उद्भाष के लिए भी उन्हें एक नया क्षेत्र प्रदान किया है। अतएव् हम इस क्षेत्र में **'प्रोफेसर वरान्निकोव'** के उक्त अर्न्तविरोध के उपसमनार्थ दी गयी इस विचित्र उत्पत्ति से सहमत नही हो पाते। हमारा मानना है कि यदि तुलसीदास के आध्यात्मिक चिन्तन में भक्ति भावना का संश्लेषण नही होता तो इतने निर्विवाद रूप से उनका समग्र साहित्य भारत में ही नही अपितु विदेशों में भी श्रद्धा के साथ पढ़ा जाता है। गोस्वामी तुलसीदास जी कट्टर परम्परागत उक्तियो का अंश उन ब्राह्मणो द्वारा जोड़ा हुआ है, जो उनके सहारे अपनी महानता को बनाए रखने के लिए संचेष्ट थे। तुलसीदास जी ने कही भी अपने साहित्य में किसी भी कट्टरता को स्थान नही दिया है।

तुलसीदास और उनका साहित्य –

गोस्वामी तुलसीदास का साहित्य ऐसा उपहार नही है कि हम उसे पूर्ववर्ती या सम सामयिक प्रचलित विभिन्न काव्य पद्धतियो का अनुकरण मात्र कह दे। हिन्दी साहित्य आदि काल से ही अपभ्रंश तथा देशीय भाषाओं में रचनाएं उपलब्ध होती है। तुलसीदास मूलतः अवध देशीय भाषा अवधी के ऐसे विशिष्ट कवि है, जिन्होने जायसी की काव्य शैली में राम भक्ति का प्रतिभान स्थापित किया। आदिकाल में कवित्त, सवैया, दोहा की मुक्तक पद्धति प्रचलित थी। इन्ही छन्दों में तुलसीदास ने भाषा, भाव, भक्ति, ज्ञान, वैराग्य आदि की दृष्टि से पूर्णता लादी। उन्होंने कवितावली के मुक्तक छन्दों में अपने उपास्थ का ऐसा मार्मिक प्रशस्तिगान किया कि उसकी समता कोई प्राकृत – जन – गुणगायक कवि भी नही कर पायेगा।

इस्लामी प्रभाव के कारण भारतीयता और संस्कृतिक चेतना का अभाव उनके पूर्ववर्ती कवियों में तो था, साथ ही वे भारत के धार्मिक और सामाजिक तथ्यो से भी विमुख थे। रहस्यवादी तो थे ही। गोस्वामी जी ने उन पूर्ववर्ती कवियों की त्रुटियों को त्याग कर उनकी बातो में पूर्ण भारतीय और संस्कृति का योग कर उन्हे सांगोपांग काव्य के रूप में प्रकृट किया। उन्होने पद पद्धति को भी अपनाया। एक ओर उपासना और साधना प्रधान विनय पत्रिका के पद रचे, और दूसरी ओर लीला प्रधान गीतावली तथा कृष्ण गीतावली के पद रचे। उपासना प्रधान पदो की रचना जो तुलसीदास ने की है। वह प्रान्तीयता की परिधि को पारकर सार्वदेशीय सुसंस्कृत सभ्य मानवीयता का मानदण्ड बन गयी है।

तुलसीदास की साहित्यिक कृतियॉ –

यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता हैं कि तुलसी की अलौकिक कवित्व शक्ति पर आवरण नही डाला जा सकता। इतना अवश्य है कि मुख्य रूप से वह भक्त थे, पर आनुवांशिक रूप से कवि भी, उनकी कृतियाँ प्रमाणित करती है कि काव्य के विविध रूपो पर उनका अनन्य अधिकार था। कविता के मुख्य दो भाग किये जा सकते है – **(क)** भावात्मक व्यक्तित्व प्रधान कविता **(ख)** विषय

प्रधान अथवा लोकाभिव्यंजक कविता । इन दोनो विभागो के लिए कर्तृप्रधान कविता (Subjective Poetry) तथा कर्म प्रधान कविता (Objective Poetry) का प्रयोग भी अनुपयुक्त न होगा।

गोस्वामी जी की मुक्तक श्रेणी में आने वाली रचनाओं के विषय में यह भी ध्यान देने की बात है कि मुक्तक होने पर भी उनमे सभी कर्ता प्रधान नही, अधिकांशतः कर्म प्रधान ही है। गीतावली यदपि गीतकाव्य ही है फिर भी यह आद्योपान्त कथा को लेकर चली है, इसी कवितावली के लंकाकाण्ड तथा जिन पद्यो का निर्माण हुआ है वे सब भी कथा प्रसंग को लेकर चले है। इसी क्रम में विनय पत्रिका के पदों में भी उन्होंने अपना वैयत्तिक हृदय खोल खोल कर दिखाया है। अस्तु विनय पत्रिका के अधिकांश पदो और कवितावली के उत्तरकाण्ड की रचनाओं को कर्तृी प्रधान काव्य कहा जा सकता है, अन्यथा उनकी अन्य मुक्तक रचनाए भी कर्म प्रधान काव्य है।

विचारणीय है कि गोस्वामी जी की अक्षय कीर्ति के मूल आधार मानस के प्रणयन में शास्त्रीय महाकाव्योचित लक्षणो का अनुधावन कैसे किया गया है। संस्कृत के प्राचीन अंलकारिको में भामह, दण्डी, मम्मट प्रसिद्ध है। इसी प्रकार मध्य काल में विश्वनाथ और कविराज जगन्नाथ में जाने जाते है। इनके ग्रन्थो में निर्दिष्ट महाकाव्य के लक्षणों को ध्यान में रखकर उनके प्रकाश में मानस का महाकाव्यत्व दिखाने का प्रयास किया गया है। गोस्वामी जी ने इस महाकाव्य मे ऐसी विशेषताएं सन्निविष्ट की है जो उनके जीवनोन्नायक व्यक्तित्व आलौकिक प्रतिभा एवं मानवीय उच्च आदर्शो में अखण्ड आस्था के रूचिर परिणाम स्वरूप है। अधिकांश संस्कृत महाकाव्य प्रणेताओ की रूचि जहॉ पाणित्य प्रदर्शनोन्मुख होने के कारण शब्दाडम्बर, स्फीति, आलोक सामान्य वाक्य सरिण ग्रहण करने और जन सामान्य के जीवन यात्रा चित्रण से दूर रही वहॉ लोकोपकारक तुलसी की रूचि सर्वसाधारण के जीवन की व्यापक भूमि में स्थिर होकर सामान्य वाक्य शैली के द्वारा भी उत्कृष्ट चरित्र और भाव की अभिव्यक्ति मे रमी

भाषा पर आधिपत्य –

वर्तमान खडी बोली का प्रार्दुभाव गोस्वामी जी के बहुत पहले हो चुका था, जैसा कि अमीर खुसरो की पहेलियो से अनुमान किया जा सकता है। अमीर खुसरो ने अपनी कृति 'खलीकबरी' में 'हिन्दी' और 'हिन्दवी' दोनो नामो का उल्लेख किया है। तुलसी के समय तक इस हिन्दी का प्रचलन भी जन सामान्य तक किसी न किसी अंश तक अवश्य पहुॅच गया था, अन्यथा गोस्वामी जी अपनी रचनाओं में खडी बोली के ऐसे प्रयोग न करते।

गोस्वामी जी ने अरबी, फारसी से गृहीत शब्दों में अपनी भाषा अवधी तथा ब्रज भाषा के अनुसार ध्वनि परिवर्तन आदि भी स्वच्छन्दता पूर्वक किया है। उन्होंने 'शरीफ' को प्रचलित समझकर अपनाया और उसे भावात्मक संज्ञा बनाने में हिन्दी व्याकरण का प्रयोग किया और 'सरीकता' लिखा न कि 'शिरकत' इसी प्रकार 'मिसकीन' से 'मिसकीनता' ही बनाना उचित समझा। अपनी ही भाषा की ध्वनि और व्याकरण के आधार पर उन्होंने फारसी के शब्द 'साज' को साज, साजा, साजी, साजो, साजे साजू, उसाज, उसाजी आदि रूपो से विकसित किया।

सच्चे महाकवि की भाँति गोस्वामी जी अपने सामयिक जन सामान्य की भाषा से पूर्णतया अनभिज्ञ थे, और उनकी प्राचीन परम्परा से सम्बद्ध भाषाओ का भी उन्हें ज्ञान था। उनकी भाषा व्यापक उनका शब्द भण्डार अपरिमेय था, हम भाषाओ की वैशिष्ट्य की ओर न जाकर केवल इतना ही कहना चाहते है कि सांस्कृतिक समन्वय के अपने महान उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्होंन अपने युग की दोनो प्रधान भाषाओ की परिधि को बृहद् करके उनमें यथा सम्भव निकटता और सामंजस्य स्थापन का कार्य भी बड़ी कुशलता से किया है।

छन्द विधान –

महान कलाकार के छन्द विधान में केवल छन्द विधान के नियमो की पाबन्दी ही नही रही अपितु उनमें प्रसंगानुकूल लय और ताल भी निनादित होते रहते है। गोस्वामी जी ऐसे उदान्त छन्द विधायक महाकवि थे। तुलसी साहित्य में जिन विविध प्रकार के छन्दो पर पूर्ण अधिकार रखते हुए अनूठा प्रयोग किया, वह देखने योग्य है। कवितावली, समबाहुक में कई प्रकार के सवैये, मनहर, घनाक्षरी, छप्पय झूलना छन्दो का प्रयोग किया है। मांगलिक रचनाएं मात्रिक अरूण और हरिगीतिका छन्दो में है। वरवै रामायण उसके नाम से ही लिखी गयी। इसी प्रकार दोहावली में दोहा, छन्द तथा सोरठा है। रामाज्ञाप्रश्नावली पूर्णतया दोहा छन्द में है। रामलला नहछू की रचना सोहर छन्द में तथा वैराग्य संदीपनी के वैराग्य का निरूपण दोहा, सोरठा तथा चौपाई छन्दो मे हुआ है। गीतावली, श्री कृष्णगीतावली एवं विनय पत्रिका की विशिष्ठता को कहना ही क्या है ? इन तीनों कृतियों में छन्दो के द्वारा काव्य और संगीत का समन्वय देखते ही बनता है। गोस्वामी जी ने गीतावली[1] विनयपत्रिका[2] में दो विभिन्न प्रकार के छन्दो की संसृष्टि करके एक तीसरे प्रकार का नया छन्द बनाने की स्वतंत्र रूचि दिखायी है। गीतावली में दोहा के द्वितीय और चतुर्थ चरण में दो मात्राएं बढाकर[3] तथा विनय पत्रिका में दो मात्राएं घटाकर[4] नये ढ़ंग के छन्द भी निर्मित किये है।

काव्य सौष्ठव के अभिवृद्धि कारक विविध उपादान –

काव्य सौष्ठव के अभिवृद्धिकारक उपादानो और साहित्य शास्त्र समस्त प्रतिभाओं का उपयोग तुलसी ने किस अंश तक किया है, यह विचारणीय है। हमारे साहित्य शास्त्र के विकासात्मक इतिहास से अवगत होता है कि विभिन्न प्रकार के साहित्यिक उपादानो का समायोजन एवं समर्थन किया गया है। अलंकार शास्त्र के अर्न्तगत भरत मुनि का रस मत, कुन्तल के वक्रोन्ति मत और आनन्द वर्धनाचार्य के ध्वनि मत आदि के नाना प्रकार के मतों की प्रतिष्ठा तुलसी साहित्य में काव्य सौष्ठव की प्रतिष्ठा को बढ़ाते है।

---

1 – गीतावली, अरण्यक पद, गीत 17 उत्तरकाण्ड 19
2 – विनय पत्रिका, पद 135, 136
3 – गीतावली, वा0 19
4 – विनयपत्रिका, पद 107 और 109

गोस्वामी जी की अलंकार योजना के विविध उदाहरणों को देखते हुए यह सभी स्वीकार करेगें कि उन्होंने अलंकारो का प्रयोग कही भी चमत्कार प्रर्दशन के लिए नही किया तुलसी के काव्योद्यान में जो कमनीय कुसुम विकसित हुए है उनमें सुभग, सुरम्य की अनुभूति के लिए हमें तुलसी साहित्य का हृदयगम मंथन करना है। तुलसी का अलंकार विधान उनकी साधुता से अछूता नही रह पाया है। उन्होंने दृष्टान्त निदर्शना, व्यतिरेक, सहोक्ति, प्रतीक, उपमा, रूपक, श्लेष, वक्रोक्ति, प्रतीप आदि गिनाये जा सकते है।

जहाँ तक काव्य में अलंकारो की स्थिति में अनिवार्यता का प्रश्न है हम देखते है कि हमारे यहा प्राचीन अलंकारिकों में भी इस सम्बन्ध में पर्याप्त मतभेद रहा है इसलिए किंचित प्रकाश डालना तर्क सम्मत होगा। आचार्य भामाह ने सर्वप्रथम काव्य सौन्दर्य के लिए अलंकार तत्व को आवश्यक वताया। तत्पश्चात दण्डी, उदभट्ट, वामन, रूद्रट एवं चन्द्रालोककार जयदेव आदि ने भी अपनी – अपनी शैलियो में प्रायः इसी मत का समर्थन किया है। आचार्य दण्डी ने काव्य के शोभाधायक धर्म को ही अलंकार की संज्ञा देते हुए यह प्रवर्तित किया है कि – **"काव्य शोभाकरान धर्मान् अलंकरान् प्रचक्षते"**[1] आचार्य वामन के उससे भी आगे बढ़कर अलंकारो की संज्ञा के कारण ही काव्य को ग्राह्य अथवा उपादेय बताते हुए – **"सौन्दर्यअलंकारः"**[2] की घोषणा की है। इस उपादेय श्रेणी के आचार्यो में चन्द्रालोकार ने सबसे आगे बढ़कर यहा तक कहने की चेष्टा की कि – **"अंगीकरोतियः काव्यं शब्दार्थवनलंकृती । असौनमयन्ते कस्मादनुष्णमनंलकृती"**[3]

रामचन्द्रिकाकार के **"भूषन बिन न विराजइ, कविता वनिता भित्ति"** के सुप्रसिद्ध कथन में उनके इस दृष्टिकोण का पूरा – पूरा हमें आभास प्राप्त होता है कि अलंकारो की अपनी एक अलग उपयोगिता है दूसरी ओर आचार्य श्री पति ने रस तत्व को प्रमुखता प्रदान की है जो इस दोहे से स्पष्ट होता है –

'जदपि दोष बिनु गुन सहित अलंकार सो हीन ।
कविता वनिता छबि नही रस तिन तदपि प्रबीन ।।'[4]

अलंकार वह निश्चल योजना है जिसके अन्तर्गत काव्य का स्वरूप उसके विविध अंग, अंगो के प्रकरण, प्रकरणो के अन्तर्गत कथा, वर्णन, सम्बाद और उन सब में व्याप्त एक विशेष उद्देश्य की अभिव्यक्ति सब आ जाते है और यह सब पूरी योजना जिन अनेक भाषा के विधानो से पूरी होती है। उन सबकी समष्टि अलंकार ही है। इस प्रकार सौन्दर्यनुभूति की समग्रता तुलसी का समग्र साहित्य विविध साहित्यिक चमत्कारों से चमत्कृत है।

---

1 – काव्यादर्श श्लोक 2,1
2 – काव्यालंकार सूत्र 1,1,5
3 – चन्द्रालोक 1,18
4 – हिन्दी काव्य साहित्य का इतिहास, डा0 भागीरथ मिश्र पृष्ठ 116

जहॉ मानव मनोवृत्तियो के सूक्ष्म ज्ञान से गोस्वामी जी से चरित्र विधान में स्वाभाविकता की प्राण प्रतिष्ठा करायी, वहॉ साथ ही उसने रस की धारा बहाने में भी उनको सहायता की, क्योंकि रसो के आधार भाव ही है। गोस्वामी जी केवल भावो के शुष्क मनोवैज्ञानिक विश्लेषक न थे, उन्होंने उनके गहरे और हल्के रूपो को एक दूसरे के साथ सुश्लिष्टावस्था में देखा था, जैसा कि वास्तविक जगत में देखा जाता है। प्रेम को उन्होंने कई रूपो में स्थायित्व किया। गुरूविषयक रति, दाम्पत्य प्रेम, वात्सल्य भगवत विषयक रति, सभी हमें तुलसी साहित्य में खास करके, रामचरित मानस में पूर्णता में पहुँचे हुए मिलते है। गुरूविषयक रति का आनन्द हमें विश्वामित्र के चेले राम, लक्ष्मण देते है। भगवत विषयक रति की सबसे बड़ी अनुभूति उनकी विनय पत्रिका में होती है। श्रंगार रस के प्रवाह में पाठको को अलुप्त करने में गोस्वामी जी ने कोई कसर नही छोडी है, परन्तु उनका श्रंगार रस रीतिकाल के श्रंगारिक कवियों के श्रंगार के भॉति कामुकता का नग्न नृत्य न होकर सर्वथा मर्यादित है। श्रंगार रस यदि अश्लीलता से बहुत दूर पवित्रता की उच्च भूमि मे उठा है तो वह गोस्वामी जी की कविता मे। उन्होंने अपने साहित्य में लेशमात्र भी दुर्भावना नही आने दी है, जबकि परमभक्त सूरदास भी अश्लीलता के पंक से अछूते नही रहे। यथा –

करत बतकही अनुज सम मन हियरूप लोभान ।
मुख सरोज मकरंद छबि करइ मधुप इव पान ।।
देखन मिस मृग बिहग तरू फिरइ बहोरि बहोरि ।
निरखि – निरखि रघुबीर छबि बाढ़इ प्रीति न थोरि ।।[1]

गोस्वामी जी की वाणी धन्य है, जिसने वासना विहीन शुद्ध दाम्पत्य प्रेम का परम पवित्र, चित्र संसार के समक्ष रखा। गोस्वामी जी के विप्रलम्भ श्रंगार की मधुर कठोरता सीता जी के हरण के समय, भगवान राम के विलाप में पूर्णतया प्रत्यक्ष होती है। करूण रस की धारा राम के वनवासी होने पर और लक्ष्मण की शक्ति लगने पर फूट पडती है। जनक के 'वीर विहीन मही मै जानी' कहने लक्ष्मण आकृति में जो परिवर्तन हुआ उसमे मूर्तिमान रौद्र रस के दर्शन होते है। वीर रस और वीभत्स रस का लंका काण्ड प्रमुख श्रोत है वहॉ इतना आतंक छा जाता है कि उसमें भयाकन रस की अनुभूति होती है।

भरे भुवन कठोर रवि रवि बाजि तजि मारगु चले ।
चिक्करहि दिग्गज डोल महि अहि कोल कूरम कलमले ।।
सुर असुर मुनि कर कान दीन्हे सकल विकल विचारही ।[2]

---

1 – रामचरित मानस बालकाण्ड, 134, 135
2 – रामचरित मानस लंकाकाण्ड, 74

श्री राम जी ने रानी और कौशल्या को एक ही साथ कई रूप दिखलाकर अद्भुत रस का चमत्कार दिखाया है। शिव जी के बारात का वर्णन और नारद मोह में हास्य रस के फुहारे फूट पडते है, इतना होने पर भी यह भी कही नही भान होता कि गोस्वामी जी ने प्रयत्न पूर्वक आलम्बन उद्दीपन, संचारी भाव आदि को जुटाकर रस परिपाक आयोजन किया है। प्रबन्ध के स्वाभाविक प्रवाह के भीतर स्वतः ही रस की ऐसी तलैया बन गयी है जिसमें जी भरकर डुबकी लगाकर साहित्यिक तैराक आगे बढ़ने का काम लेता है।

उपरोक्त विवेचन से हम इस तथ्य पर पहुॅचते है कि गोस्वामी जी की रचनाओं की सोच केवल देवी देवताओ तक ही सीमित नही थी बल्कि वास्तविकता तो यह है कि भारतीय आध्यात्मिक साधना की धारा में पूर्ण रूप से निमज्जित हो चुके थे, और उनका सर्वोपरि लक्ष्य उक्त साधना को भारतीय जन मानस के जीवन में भर देना था।

प्रकृति की निकटता –

मानवेतर जगत के संसर्ग में सर्वथा अछुता रहकर कवि का कर्म कितना नीरस और शुष्क हो जाता है, कहना न होगा कि गोस्वामी जी के साहित्य में हम काव्य जगत के इस महत्वपूर्ण सत्य से परिचित हुए बिना नही रह सकते यही आकर हमें यह भी अनुभव होता है कि गोस्वामी जो के काव्य में छायावादियो जैसा मानवीय करण भले ही न पाया जाता हो यह बात तो और है, किन्तु प्रकृत चित्रण के क्षेत्र में उन्होंने प्रकृति के चेतन और अचेतन दोनो ही प्रकार के उपादानो को महत्वपूर्ण स्थान दिया है। उनके छन्द, चौपाई, दोहा, सोरठा, रस, अलंकार, अर्थभाव, बिम्ब, ध्वनि तथा अवरेव सभी तो उनके काव्य में धात्री प्रकृति का आंचल पकडकर नटखट शिशुओं की भॉति उछलते कूदते दिखाई पड़ते है।

कहना न होगा कि महाकाव्य सम्बन्धी उत्कर्ष धायक तत्वो की दिशा में उपर्युक्त मानस रूपक में हमारे कवि ने जिन अप्रस्तुतों की नियोजना की है। वे सब कवि की प्रकृति सम्बन्धी विस्तृत सम्वेदना के भी परिचायक है। गोस्वामी जी के साहित्य में प्रकृति चित्रण का जो अनूठा सामंजस्य देखने को मिलता है। शायद ही किसी अन्य साहित्य में परिलक्षित हो सके। इसीलिए तुलसी साहित्य को हिन्दी साहित्य में अक्षय भंडार कहा जाता है।

स्वाभाविकता एवं मौलिकता का तत्व –

तुलसीदास के समग्र साहित्य का गहन अनुशीलन करने के पश्चात यह ज्ञात होता है कि उनके काव्य का अकृतिक स्वरूप उसका सच्चा स्वरूप है। "रघुबर प्रेम प्रसूत" की भॉति कविता भी आडम्बरहीन आत्म व्यंजना का ही दूसरा नाम है। काव्य सृष्टि के सम्बन्ध में उनका यह सिद्धान्त भी अपेल ही कहा जा सकता है। जब तक काव्य में स्वाभाविकता का समावेश न होगा, तब तक सुजन समाज के लिए भी उसका कोई प्रयोजन न होगा।[1]

1 – गोस्वामी तुलसीदास 'रामचन्द्र शुक्ल' पृष्ठ 68,69 सप्तम संस्करण

युग चेतना को जागृत करने समाज व्यवस्था को अमूल चूल बदला देने का काम तो उसे (काव्य को) किन्ही विशेष अवसरो पर भी करना हो सकता है। किन्तु जीवन की समग्रता का उसके सहज धरातल का स्पर्श तो उसे सदैव ही करना होता है और इसके लिए उसे स्वयं ही सरल एवं स्वाभाविक होना चाहिए।

गोस्वामी जी की स्वाभाविक व्यंजना के साथ ही काव्यगत मौलिकता के भी एक बड़ी सीमा तक उपासक थे। पिष्टपेषण और पुनरूक्ति के मार्ग पर चलना उन्हें कम पसन्द था "केहि पटतरौ विदेहि कुमारी" कि अभिव्यक्ति के द्वारा उन्होंने कवि की इसी मौलिकता की ओर संकेत किया है और यह कहा है कि एक कवि को सदैव अपनी कीर्ति रक्षा का भी ध्यान रखना चाहिए और किसी को उँगली उठाने का अवसर नही देना चाहिए।

निष्कर्ष रूप में गोस्वामी जी के साहित्यिक सन्दर्भण कला के सम्बन्ध में यह कथन अधिक उपयुक्त होगा कि महाकवि गोस्वामी तुलसीदास ने अपने पूर्ववर्ती महाकवियों के भावो का आदर किया है, तथा उन्हें और भी अधिक उदान्त एवं परिष्कृत भूमि पर लाकर सहृदय संवेद्य बनाने की चेष्टा की है, यह तो वस्तुतः उनके भाव परिष्करण का सुन्दर निदर्शन है। यह भी एक निर्विवाद सत्य है कि, कोई महान साहित्यकार एवं कवि अपनी सृष्टि को नितान्त वैज्ञानिक अथवा वस्तुपरक दृष्टि से निबद्ध करने की चेष्टा नही करता। शुद्ध वैज्ञानिक विवेचनो तथा भावात्मक विन्यासो मे हमे सदैव ही एक विभाजक रेखा खीचनी पड़ती है इस तथ्य की ओर दृष्टिपात करने से हमे पता यह चलता है कि गोस्वामी जी ने भी अपनी भाषा सम्बन्धी विचारो को नापने की कोशिश नही की। अतएव साधरणतया उनके भाषा के स्वरूप उनके संगठन की ओर संकेत करते हुए इस प्रकरण से हमारा विशिष्ट लक्ष्य रस, छन्द, अलंकार, शैली, ध्वनि, मुहावरे, लोकोक्तियों की छाया में अपने कवि की भाषा के साहित्यिक सौन्दर्य का उद्घाटन किया। उनके कुशल शब्द चयन संयत पद योजना आदि विशिष्टता ही उनकी कुशल मौलिकता का परिचायक है, साथ ही भाषा की स्वच्छन्दता एवं सरलता उनके साहित्य में चार चॉद लगाने में पूर्ण सहयोगी है।

(ख) अध्यात्म, आध्यात्मिक सन्त तुलसीदास –

प्रकृति और जीव एक ही सिक्के के दो पहलू है। अध्यात्म निर्दशना में यदि इसका निरूपण किया जाए तो सम्पूर्ण सृष्टि चक्रीय सिद्धान्त पर आकर निहित हो जाती है। अध्यात्म एक ऐसा विषय है जिसका मूलविन्दु निर्धारित करना अथवा उसकी तह तक पहुँच पाना नितान्त दुस्साध्य है। अध्यात्म की चिन्तन धारा प्रसूत होकर निरन्तर प्रशवित होते हुए भी चिन्तन के ऐसे अथाह सागर में मिलती है जिसका तल ढूढ़ना अत्यन्त दुष्कर है। तमाम विद्वानो ने अपने – अपने ज्ञान के अनुसार अध्यात्म को निरूपित करने का प्रयास किया है लेकिन इस विद्वान का अध्यात्म सही दिशा को निर्धारित करता है, यह कहना आसान नही है।

आध्यात्मि विचारो को प्रस्तुत करने में ग्रियर्सन का नाम भी लिया जाता था। "अध्यात्म सूक्ष्म जगत को उद्घाटित करता है।"[1] परा – अपरा, प्रकृति, विद्या – अविद्या, सूत – प्रसूत, ब्रह्म – जीव, जड़ – चेतन, प्रकृति – पुरूष ऐसे तथ्य है जिनका जितना विश्लेषण किया जाय कम हैं। इस सभी तथ्यों का आध्यात्मिक विवेचन विस्तृत रूप से करने पर हम एक ऐसी धारा में बह जायेगे जिसमें विभिन्न प्रकार के मतावरोध उत्पन्न होगे। प्रथम यदि हमें परा – अपरा माया को ले तो हम पाते है कि सम्पूर्ण जगत दो प्रकार के रूप में दिखाई देता है। (क) सूक्ष्म जगत (ख) वाह्रय जगत सूक्ष्म जगत का सूक्ष्म निरूपण पंचतत्वों के आधार पर निरूपित किया जा सकता है। मनुष्य का सम्पूर्ण क्रिया व्यापार वाह्रय जगत एवं चिन्तन तथा प्रेरक क्रिया व्यापार सूक्ष्म जगत द्वारा संचालित है आध्यात्मिक दृष्टि से यदि देखा जाए तो मनुष्य की सम्पूर्ण क्रियाऐ सूक्ष्म जगत द्वारा ही संचालित होते है। सर्वप्रथम इन्द्रिया अपने कार्य़ का निरूपण अलग – अलग करती है। पॉच कर्मेन्द्रिया पॉच ज्ञानेन्द्रिया तथा इसके ऊपर मन का अधिपत्य है। वाह्रय जगत का कार्य कर्मेन्द्रिया संचालित करती है, लेकिन ज्ञानेन्द्रियों के बिना कर्मेन्द्रिया निष्क्रिय रहती है, अर्थात सूक्ष्म जगत के बिना वाह्रय जगत निष्प्रभावी है।

डा० जी० एस० दाते ने भी अध्यात्म के विषय में अपने विचारो को व्यक्त करते हुए लिखा है – "अध्यात्म निदर्शना मात्र नही है यह मानव जीवन के चिरन्तन सत्यो का स्पर्श करने वाली विचार अनुभूति है जो मनुष्य के आंतरिक विचारो को उद्घाटित करके, सत्य एवं असत्य की क्रियाविधि एवं सूक्ष्म विचारों का उद्वेलन करती है।"[2] जब हम प्रकृति पर अनुसंधान करते है तो यह पाते है कि प्रकृति और पुरूष समान स्थिति में अवस्थित है, दोनो का सैद्धान्तिक विवेचन समान होते हुए भी आगे चलकर अलग – अलग हो जाता है। इसका कारण यह है कि प्रकृति एक ऐसा सत्य है जिसको नकारा नही जा सकता, वह अविचल, शाश्वत, चिरन्तन, अकल और अनीह है। जबकि दूसरी तरफ पुरूष नश्वर ही कहा जाता है, क्योकि वह शाश्वत सत्य प्रकृति द्वारा ही संचालित है। आध्यात्मिक विवेचन करने पर हम प्रकृति को आत्मा के रूप में जब निरूपित करते है, तो वह चिरस्थायी अर्थात जिसका (आत्मा) कभी नाश नही होता, ऐसा पाते है। ठीक प्रकृति उसी प्रकार से स्थायी है, दूसरी ओर पुरूष को प्रकृति के साथ नियमन करना पड़ता है, और प्रकृति उसका नियामक के रूप में सिद्ध होती है।

डा० गंगाधर त्रिपाठी ने अध्यात्म चिन्तन अनुशीलन में लिखा है कि "अध्यात्म को किसी भी वस्तु में आरोपित कर गहन चिन्तन करने पर मूल धारा का उद्गम स्वतः उस्श्रावित हो जाएगा, लेकिन चिन्तन की गहनता का मापदण्ड उस हद तक पहुॅच पाना आवश्यक है जो वाक्य सरणि को दुरूह न बनाकर असान अर्थपरक शब्द गाम्भीर्य को उद्घाटित करे।"[3]

---

1 – A Litrary theory of Spirtiualism - Pg. 118
2– अध्यात्म और दर्शन का सूक्ष्म निरूपण – डा० जी0 डी0 कार्ल पे0 216
3 – अध्यात्म चिन्तन, डा० गंगाधर त्रिपाठी – भूमिका पेज नं0 19

इस विवेचन के आधार पर हम इस तथ्य पर पहुँचते है कि अध्यात्म को चिन्तन प्रवाह से अन्योन्याश्रम रूप में सम्बद्ध किया जा सकता है पृथक नही। विराट धर्म भावना के साथ अध्यात्म चिन्तन के सुष्ठुतम समायोग की अपनी विशेषता है। अध्यात्म का तथ्य परक चिन्तन दुरूहता का अपना एक कठिन पैमाना है, फिर भी यदि उसकी गहराई तक पहुँचने का वौद्धिक प्रयास किया जाय तो एक ऐसे तथ्य का उद्‌घाटन होता है जो वास्तविकता की तह तक पहुँचा देता है। सामन्यतया यह देखा जाता है, कि अध्येता आध्यात्मिक धारा में न बहकर अन्योन्याश्रित सामाजिक अनुबन्धों में भटक कर आध्यात्मिक चिन्तन से विलग हो जाता है, और फिर इस विषय को कठिनता की श्रेणी में बाँधकर उपेक्षित कर देता है। अध्यात्म उस उच्चारण को निर्धारित करता है जो पूर्ण परिष्कृत कर मानव को जीव और ब्रह्म की सत्ता का ज्ञान कराता है।

एम0 सी0 मैकडूगल ने अध्यात्म के विषय में अपने विचार प्रस्तुत करते हुए लिखा है कि "अध्यात्म ब्रह्म निरूपण का वह सोपान है, जिसकी प्रत्येक पादान पर ब्रह्म और जीव की उत्तरोत्र अभिवृद्धि की वृत्ति और उपलब्धि उच्चावच्य स्थिति को प्राप्त कराती है।"[1] इस कथन के आधार पर हम यह पाते है कि जीव अन्ततोगत्वा उस पराशक्ति को प्राप्त तो करता है लेकिन उस स्थिति तक पहुँचने के लिए उसे अनेकानेक संघर्षो रूपी पादानो पर से होकर गुजरना पड़ता है इसका आशय यह है कि उस परम शक्ति के लक्ष्य तक पहुँचने के लिए साक्ष्य बल्कि अतः साक्ष्य के सुदृढ़ होने की आवश्यकता है। आध्यात्मिक चिन्तन मन और बुद्धि को परिष्कृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, यह अक्षरसः सत्य है।

यद्यपि तुलसी सगुण भक्ति धारा के कवि है तुलसी की दृष्टि में ब्रह्म स्वरूपतः निर्गुण और सगुण दोनो है। सगुण संविशेष राम ही परम् ब्रह्म है, "आद्वेयत मत में 'ईश्वर' मायोपथिक अथवा अज्ञोनोपहित माना गया है।"[2] तुलसी के राम ईश्वर होते हुए भी मायावच्छिन्न कदापि नही होते। अद्वैतवाद में अध्यात्म के अनुसार मायोपहित ईश्वर को ही औतारी और पूजा का आवलम्बन माना गया है। तुलसी के माया पार ब्रह्म आवतारी राम ही है। अद्वैतवेदान्त में सगुण ब्रह्म को निर्गुण से न्यून कहा गया है। तुलसी के भक्ति दर्शन में निर्गुण – सगुण स्वरूप ब्रह्म का सगुण रूप ही, भक्त हितकारी होने के कारण श्रेष्ठ कहा गया है। वही तुलसी तथा उनके द्वारा वर्णित भक्तों का भजनीय है। अतएव उनका पतिपाद्य सगुण राम का चरित्र है, जबकि अद्वैत वेदान्त का पतिपाद्य निर्गुण ब्रह्म है।

---

1 – Emulation of Spirtualism - Dr. M. C. Macdugal P. No. 321
2 – ब्रह्म सूत्र – 1, 3, 5, 7

तुलसी का अध्यात्म वेदान्त से बहुत भिन्न है बल्लभ ने जीव के तीन भेद माने है – "व्यष्टि, समिष्ठ और पुरूष इसी प्रकार ब्रह्म के तीन भेद माने है, कृष्ण, अक्षर और अर्न्तयामी तक"[1] तुलसी को यह भेद निरूपण मान्य नही।

"वल्लभाचार्य जी ने आनन्द स्वरूप श्री कृष्ण को मूल परब्रह्म, उन्ही को अपने मार्ग का इष्ठ और परमानन्द प्राप्ति का श्रेष्ठ साधन माना है।"[2]

इस प्रकार हम यह देखते है कि तुलसी का अध्यात्म कोई साधारण विचार नही है जिसका सामान्यतया परिसीमन किया जा सके। सगुण भक्ति धारा के होते हुए भी तुलसी ने द्वैत, अद्वैत और विशिष्टाद्वैत का निरूपण जिस सूक्ष्म दृष्टि से किया है, उसका आकलन करना तथा सयोजन करना आसान नही है। तुलसी साहित्य का गहन अध्ययन करने पर उसके एक एक शब्द की गम्भीरता एवं गुंफन की गति को गमिान करना सामान्य बुद्धि से परे है।

आध्यात्मिक चेतना मनुष्य के आन्तरिक विचारो को परिष्कृत करने पर अपनी महत्वपर्ण भूमिका निभाता है, इसलिए तुलसीदास जी ने अपनी सरल एवं सुगम शैली में रामचरित मानस जैसे प्रबन्धकाव्य की रचना करके विनयपत्रिका, कवितावली, दोहावली आदि रचनाओं से साथ अपनी आध्यात्मिकता की शैली को भी जन मानस तक पहुँचाने का प्रयास किया है कहना नही होगा कि भारतीय जनमानस ही नही अपितु भारत के बाहरी देशो मे भी तुलसी के अध्यात्म तमाम प्रकार के विद्वानो का सम्मेलन होता है जिसके माध्यम से तुलसी की रचनाओं का आध्यात्मिकता का गहन अनुशीलन – परिशीलन करके विश्लेषण किया जाता है।

आध्यात्मिक संत तुलसीदास –

भारतीय अध्यात्म की परंपरा में तुलसीदास एक वैशिष्ट मूलक परंपरा के प्रर्वतक कहे जाते है, क्योकि उन्होंने रामचरित मानस में कुछ वेद सम्मत बातो का समावेश किया है। भारत अध्यात्म प्रधान आरित्तक देश है जो वेद के प्रमाण को मूल मानता है इसके साथ साथ श्रुतिया भी प्रमाणित आधार मानी जाती है। तुलसीदास ने प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द प्रमाणों की उपयोगिता स्वीकार की है इसी के आधार पर उन्होंने अपनी चिन्तन शैली को आगे बढ़ाते हुए अध्यात्म के अन्तः साक्ष्य परक मूल्यों का निरूपण किया है; परन्तु इतना ही तुलसीदास के मुख्य प्रतिपाद्य भगवान राम की अनुभूति कराने मे समर्थ नही है और ब्रह्म को अजन्मा निर्गुण, निर्विकार, निरंकार, निष्पृह निष्काम कहा गया। इन प्रमाणों की उपयोगिता यह है कि यह असत्वावादक आवरण को नष्ट कर देते है किन्तु अभानापादक आवरण का नाश आत्म साक्षात्कार या ब्रह्म साक्षात्कार से सम्भव है। इस प्रकार हम देखते है सन्त तुलसीदास ने विभिन्न दृष्टिकोणों से अध्यात्म का निरूपण किया है।

---

1 – तत्वदीप – 2/119
2 – आष्टाध्यायी – पृष्ठ 474

भारतीय आध्यात्मिक संतो के अनुसार तुलसीदास जी ने भी मोक्ष मार्ग का निरूपण करने मे व्यक्ति की शक्ति और सीमा तथा देशकाल की परिस्थितियो का विशेष ध्यान रखा है, और भक्ति साधना के लिए उन्होंने एक सीमा तक ही बॉधा है, क्योकि साधक इन्द्रियो से शिथिल हो जाएगा तो वह भक्ति मार्ग को सही ढ़ंग से नही अपना सकेगा। इसलिए तुलसीदास को निर्दिष्ट किया कि वही भक्ति मार्ग के अधिकारी है जिनको किसी आलम्बन की आवश्यकता नही है।

अध्यात्म अनुभव कारक ज्ञान साधन –

ज्ञान विज्ञान के प्रकरण में तुलसीदास ने रामचरित मानस को काकभुसुण्डि के मुख से अनुभव कारक अध्यात्म सम्बन्धी विभिन्न साधनो का व्यस्थित उपस्थापन कराया है, जिसमें उन्होंने ब्रह्म और जीव के आत्मिक सम्बन्ध का अध्यात्म परक वर्णन किया है।

जीवह्रदय तम् मोह विषेसी । ग्रन्थि छूटि किमि परइ न देखी ।।
तोष मरूत तब क्षमा जुडावै । धृति सम जावन देइ जमावै ।।
मुदिता मथै विचार मथानी । दम अधार रज सत्य सुबानी ।।
तब मथि काढि लेइ नवनीता । विमल विराग सुभग सुपुनीता ।।[1]

इस प्रकार हम देखते है कि तुलसीदास जी ने इन चौपाइयो में अनुभव का एक ऐसा अध्यात्म रूपी नवनीत निकाला है जो जन सामान्य हितोपकारक और ज्ञान परक अनुभूतियों का अनुभव कराता है। इसे हम ज्ञान पंथ की संज्ञा देते हुए एक संशलेषित विचार प्रवाह की मंदाकिनी कह सकते है।

सतसंग गुरू सम्पत्ति –

तुलसी के आध्यात्मिक ज्ञान चर्चा के विशेषज्ञ विद्वान डा० बल्देव प्रसाद मिश्र ने सर्वप्रथम गुरूकृपा को ही सर्वोत्तम सम्पत्ति माना है, साथ ही उन्होंने सतसंग को भी महत्व प्रदान किया है। डा0 मिश्र के अनुसार 'सतसंग से ही ज्ञान का उदय होता है, और आध्यात्मिक विचारो का भान होता है तथा गुरू के बिना विवेक ज्ञान की कोई सम्भावना नही है।'[2] 'गुरूवचन से विवेक लोचन निर्मल हो जाते है।'[3] यदि यह देखा जाए तो ज्ञानोपलब्धि की विधि यह है कि जिज्ञास् व्यक्ति तत्वदर्शी ब्रह्म निष्ठ ज्ञानी आचार्य की शरण में जाकर प्रणिपाद सेवा और परिप्रंश्न द्वारा गुरू के उपदेशों को ग्रहण करे और अध्यात्म सम्बन्धी प्रश्नो का निराकरण करे।

पथ प्रदर्शक मार्ग –

सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक दृष्टि से परीक्षण करने पर यह स्पष्ट हो जात है कि वास्तव में ज्ञान मार्ग ये दोनो साधन ऐसे है जो भक्ति के समीप ले जाते है, यदि इन दोनो कारको के तह तक पहुॅचा जाए तो सर्वप्रथम ज्ञान मार्ग भक्ति मार्ग का पथ प्रदर्शक सिद्ध होगा। इसीलिए संत तुलसीदास ने ज्ञान मार्ग को पहली प्राथमिकता दी है।

---

1 – रामचरित मानस उत्तरकाण्ड 97, 98, 99, 94
2 – रामचरित मानस 4/15 ख
3 – रामचरित मानस 1/1 सोरठा 5

"भक्ति ही भवसंतप्त जीव की दुःख निवृति का उपाय है।"[1] इसलिए जब अनन्य भक्ति के द्वारा बुद्धि का आत्यान्तिक लय हो जाता है तब ईश्वर का साक्षात्कार रूप बोध होने पर मुक्ति होती है। "भक्ति अमरत्व प्राप्ति का अनन्य उपाय है।"[2] इसीलिए कहा गया है इस संसार रूपी विषवृक्ष के दो अमृतफल है। पहला भगवत भक्ति और भक्त समागम। इसी प्रकार "पांचरात्रआगम में कहा गया है कि न्यास ही परम धाम का साधन है।"[3]

जीव की सहज प्रवृत्तियॉ –

तुलसीदास जी का मन कुछ सहज प्रवृत्तियों से प्रेरित समझा जा सकता है क्योकि प्राचीन मनीषियों की तरह उन्होंने भी जीव की आध्यात्मिक दृष्टिकोण से चार सहज प्रवृत्तियॉ मानी है। (क) आहार (ख) निद्रा (ग) भय (घ) मैथुन[4] ये प्रवृत्तियॉ सभी प्राणियों मे समान रूप से पायी जाती है। भौतिक दृष्टि से प्रथम तीन प्रवृत्तियॉ आत्मरक्षा से सम्बन्धित है और अन्तिम आत्म विस्तार से, लेकिन तुलसीदास जी का मत है कि मनुष्य इन चारो प्रवृत्तियो से ऊपर उठकर राम मे मन को जोड़ दे। प्यास पपीहा धुए को बादल समझकर अपने नेत्रो की हानि करता है, भूखा कुत्ता पुरानी हड्डी का चाटता है, मछली आहार के लोभ मे अपने प्राण गवॉ देती है।[5] इसी प्रकार की दश अन्य जीवो की है। जीव का सारा मोह निंद्रा है।[6] किसी आधार पर भय की गणना नारी के स्वाभाविक गुणो या अवगुणो से की गयी है, इसलिए संसार भय से त्रस्त, तुलसी ने सुरक्षा पाने के लिए राम की शरण गही है।[7] अन्त में मैथुन प्रवृत्ति जिसको काम प्रवृत्ति के नाम से जाना जाता है जीव की बड़ी दुर्दम्य प्रवृत्ति है, यथा – "संगभ करहि तलाब तलाई, सिस्नोदर पर जमपुर त्रासन, नारि विवश नर सकल गोसाई।"[8] आदि उदाहरण काम प्रवृत्ति की बलवता का परिचय देते है।

संत तुलसीदास ने जीव के ब्रह्माण्ड रूपी शरीर का निरूपण करते हुए सत्व आदि गुणो से घिरे हुए विविध कोषो की ओर भी संकेत किया है। जीवात्मा को परिछिन्न करने वाले वे आवरण जिनसे यह शरीर बना है, कोष कहे जाते है अन्नमय कोष, प्राणमय कोष, मनोमय कोष, ज्ञानमय कोष और आनन्दमय कोष ये पॉच है। तुलसीदास के अनुसार देहाभिमान की दृष्टि से जीव की चार अवस्थाए है, जागृत, स्वप्न, ससुप्त और तुरीय। इन चारो अवस्थाओं में तुरीयावस्था अन्तिम है। द्वैतवाद और शुद्धाद्वैत वाद का निरूपण करते हुए तुलसी ने मानव की सहज प्रवृत्तियों में मन को सर्वोपरि रखा है। तुलसी साहित्य का अध्ययन करेन पर हम इस तथ्य पर पहुँचते है कि जितना सरल और सुगम आध्यात्मिक दर्शन तुलसी साहित्य में मिलता है। उतना अन्यंत्र किसी भी साहित्य में उपलब्ध नही है।

---

1 – शाण्डिल्य भाष्य सूत्र 3/2/6
2 – शाण्डिल्य भाष्य सूत्र 3/2/4
3 – शाण्डिल्य भाष्य सूत्र 37/26 – 27
4 – हितोपदेश प्रस्ताविका – 25
5 – विष्णु पुराण 90/2 – 3, 92/2 – 4
6 – रामायण 2/93/1
7 – विष्णु पुराण 117/5
8 – रामायण 1/24/3

तुलसी का अध्यात्म दर्शन मनुष्य की सामान्य प्रवृत्तियो का सहज प्रतिबिम्ब है दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि तुलसी अध्यात्म एक दर्पण है जो यथार्थ स्थिति को प्रस्तुत करता है सुक्ष्म अवलोकन से लेकर स्थूल अवलोकन तक तुलसी का अध्यात्म समान धारा में चलता है और बिना किसी गतिरोध के अन्तिम पड़ाव प्राप्त कर लेता है। यही तुलसी के अध्यात्म की विशेषता है, यही कारण है कि तुलसी को आध्यात्मिक संत के नाम से अभिहित किया गया है।

(ग) भक्ति, भक्ति का आध्यात्मिक आधार –

तुलसीदास की भक्ति भावना को समझने के लिए हमें भक्ति मार्ग के संक्षिप्त भारतीय इतिहास पर विहंगम दृष्टि डाल लेने की आवश्यकता है। वैदिक साहित्य का नाम निगम साहित्य भी है उसके अनुशीलन से हमे पता लगता है कि भिन्न भिन्न शक्तियों के लिए भिन्न देवताओ की कल्पना करते हुए भी आर्यो ने एकेश्वरवाद पर अपनी पूर्ण आस्था रखी और इसी आस्था के कारण उन्होंने कभी वरूण कभी इन्द्र, कभी रूद्र, कभी विष्णु को सर्वशक्तिमान निरूपित किया।

इसी कम में वैदिक साहित्य के समान ही प्राचीनता का दावा रखने वाला आगम जिसे दूसरे शब्दों में हम तंत्र साहित्य कहते है। हिन्दी विश्वकोष में उल्लेख है कि – "इस तंत्र शास्त्र के सिद्धान्त बाहर से ही यहॉ आये।"[1] "उन्होंने कई अनार्य पद्धतियॉ भी प्रचलित की।"[2] भक्ति मार्ग मे इन ग्रन्थों का भी पूरा प्रभाव पड़ा है। वैष्णव सम्प्रदाय के पंचरात्रआगम इसी साहित्य के अर्न्तगत आते है।

भक्ति मार्ग के सम्बन्धित पुराण साहित्य यदपि निगमागम की अपेक्षा नया है; फिर भी उनका बहुत कुछ कथा भाव वैदिक साहित्य से ही लिया गया है। देवताओ की आकृति और प्रकृति के अनुसार ही उनके चरित्रो की चर्चा उनके गुण कर्म स्वभाव पर ध्यान रखते हुए उनके नाम लीला, रूप और धाम महिमा का वर्णन किया गया है।

अनेक लोगो की राय है कि रामानुजाचार्य ने ईसाइयो से भी भक्ति का बहुत कुछ तत्व लिया है। डा० ताराचन्द्र का कहना है कि मुस्लिम संतो का उन पर बहुत प्रभाव पडा है। जो कुछ भी हो परन्तु इतना तो निश्चित है कि उन्होंने अपने सिद्धान्तो को एकदम भारतीय मुख देकर और अधिक श्रुति सम्मत बना लिया है। निम्बकाचार्य, मध्वाचार्य और बल्लभाचार्य के मत में थोड़ा सा परिवर्तन रामानुजाचार्य ने भक्ति के सिद्धान्तो को ही प्रधानता दे दी। इस प्रकार हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि भक्ति का महत्व आदि काल से चला आ रहा है तथा देशकाल और परिस्थिति के अनुसार थोड़े बहुत परिवर्तन भी होते रहे लेकिन भक्ति के प्रति भक्तों की आस्था में आमूल चूल परिवर्तन नही आया। अतः हम विस्तार में न जाकर भक्ति की संक्षिप्त व्याख्या करते हुए उसके आध्यात्मिक आधार का यथाशक्ति बुद्धि सम्मत विवेचन करेगे।

---

1 – कुंजिका मंत्र तंत्र और वसु महोदय का हिन्दी विश्वकोष 697 भाग 22 वॉ
2 – चिन्मयस्याप्रमेस्य निष्कलस्याशरीरिणः।

भक्ति की परिभाषा –

भक्ति के अर्न्तगत सामन्यतया तीन विन्दुओ पर विचार किया जाता है। (क) भक्ति (ख) भगवान (ग) भक्त। भक्ति शब्द 'भज्‌सेवायाम्' धातु से क्तिन प्रत्यय का 'योग करने पर बनता है'[1] यह प्रत्यय भाव, अधिकरण और करण में प्रयुक्त होता है। 'क्तिन प्रत्यय का भाव में प्रयोग करने पर भजन को भक्ति कहेगे।'[2] उपर्युक्त प्रत्यय के भाव अर्थ से सिद्ध 'भक्ति' शब्द साध्या या प्रेमाभक्ति का द्योतक है तथा अधिकरण और करण में प्रयुक्त 'क्तिन' प्रत्यय से निकला भक्ति शब्द साधन भक्ति को लक्षित करता है। देवी भागवत के अनुसार 'पूज्य में अनुराग होना ही भक्ति है।'[3] शांडिल्य तत्व सुधा में कहा गया है कि 'ईश्वर में सर्वाधिक स्नेह होना ही भक्ति है।'[4] नारद भक्ति सूत्र में कहा गया है कि व्यास के मत से 'पूजा आदि में अनुराग होना ही भक्ति है।'[5] भक्ति मीमांसा नामक ग्रन्थ में 'ईश्वर के प्रति मन की उल्लास वृत्ति को भक्ति कहा गया है।'[6] श्री मधुसूदन सरस्वती के मत से 'भगवद् गुण श्रवण आदि से द्रवीभूत चित्त को सर्वेश्वर भगवान के विषय में अविच्छिन्न रूप से भगवदाकार वृत्ति को भक्ति कहते है।'[7]स्वामी विवेकानन्द के अनुसार – 'निष्कपट होकर ईश्वर की खोज करना ही भक्ति है।'[8] शंकराचार्य के मत से 'अपने स्वरूप का अनुसंधान करना भक्ति है।'[9] महामहो उपाध्याय डा० गोपीनाथ कवि राज के मत से 'भक्ति आनन्द दायिनी शक्ति की एक विशेष वृत्ति है।'[10] आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भक्ति का विवेचन करते हुए लिखा है कि 'श्रद्धा और प्रेम के योग का नाम भक्ति है। जब पूज्य भाव की वृद्धि के साथ श्रद्धा भाजन के समीप लाभ की प्रवृत्ति हो, उसकी सत्ता के कई रूपो के साक्षात्कार की वासना हो, तो हृदय में भक्ति का प्रार्दुभाव समझना चाहिए।'[11]

---

1 – भक्तिः। अष्टाध्यायी, 4/3/95

2 – भजनं भक्तिः

3 – पूज्येष्वनुरागो भक्तिः। (देवी भागवत 7/31)

4 – सर्वस्मादधिकः स्नेहो भक्तिरित्युच्यते वुधैः। (शांडिल्य तत्व सुधा)

5 – पूजादिष्वनुराग इति पराशर्यः। (नारद भक्ति सूत्र 16)

6 – भक्तिर्मनस उल्लासविशेषः। (भक्ति मीमांसा 1/1/2)

7 – द्रुतस्य भगवद्धर्माद्धारावाहिकता गता ।
सर्वेवे मनसो वृत्तिर्भक्तिरिव्यभिधीयते ।। (भगवत् भक्ति रसायन 1/3)

8 – भक्ति – स्वामी विवेकानन्द

9 – स्वरूपरूपानुसंधानं भक्तिरिव्यभिधीयते । (विवेक चूड़ामणि /32)

10 – कल्याण भक्ति रहस्य (हिन्दू संस्कृति अंक 24/1) पृष्ठ 437

11– चिन्तामणि – आचार्य रामचन्द्र शुक्ल – प्रथम भाग – पृष्ठ 32

इस प्रकार हम देखते है कि सभी सात्विक गुण निविध रूप में स्थित रहते है इस प्रकार ईश्वर की परम श्रद्धेयता सिद्ध हो जाती है। परम श्रद्धेय ईश्वर के प्रति जब हमारे हृदय में परमानुक्ति उत्पन्न हो जाती है, तब उसे भक्ति की अभिधा प्राप्त होती है महर्षि शांडिल्य और आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की परिभाषाओं का यही आशय है।

तुलसी साहित्य में नवधा भक्ति –

गोस्वामी जी राम चरित मानस के अरण्स काण्ड में नवधा भक्ति का दो बार उल्लेख किया है पहले प्रसंग में भागवत की नवधा भक्ति का उल्लेख हुआ है और दूसरे प्रसंग में अध्यात्म रामायण में प्रतिपादित नवधा भक्ति का उल्लेख किया गया है यहाँ हम दोनो प्रसंगो में विवेचित नवधा भक्ति का अध्ययन करेगे।

श्री मदभागवत् में नवधा भक्ति का उल्लेख इस प्रकार है – भगवान विष्णु के नाम, रूप, गुण और प्रभावादि का श्रवण, कीर्तन और स्मरण तथा भगवान की चरण सेवा पूजा और वन्दन एवं भगवान में दास भाव, सख्य भाव और अपने स्वत्व का समर्पण कर देना यह नौ प्रकार की भक्ति है –

श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम्।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्म निवेदनम्।।[1]

रामचरित मानस के निम्नांकित प्रसंग में गोस्वामी जी ने साधन भक्ति के श्रवणादि नव अंगो का उल्लेख किया है। भगवान राम लक्षमण को भक्ति के स्वरूप का ज्ञान कराते हुए कहते है –

भगति कि साधन कहउँ बखानी । सुगम पंथ मोहि पावहि प्रानी ।।
प्रथमहि विप्र चरन अति प्रीती । निज निज कर्म निरत श्रुति रीती ।।
एहि कर फल पुनि विषय विरागा । तब मम धर्म उपज अनुरागा ।।
श्रवनादिक नवभक्ति दृढ़ाही । मम लीला रति अति मन माही ।।
संत चरन पंकज अति प्रेमा । मन क्रम बचन भजन दृढ़ नेमा ।।
गुरू पितु मातु बंधु पति देवा । सब मोहि कहँ जनै दृढ़ सेवा ।।
मम गुरू पावत पुलक सरीरा । गदगद गिरा नयन वह नीरा ।।
काम आदि मद दंभ न जाके । तात निरन्तर बस मै ताके ।।

वचन कर्म मन मोरगति, भजन करहि निःकाम।
हिन्ह के हृदय कमल महुँ, करउँ सदा विश्राम ।।[2]

---

1 – श्री मदभागवत् (7/5/23)

2 – रामचरित मानस (अरण्य काण्ड 16/3 से 16 तक

गोस्वामी जी ने अध्यात्म रामायण के भाव ग्रहण कर निम्नांकित नवधा भक्ति का उल्लेख किया है। भगवान श्री राम शबरी से भक्ति का रहस्य बतलाते हैं –

नवधा भक्ति कहउँ तोहि पाही । सावधान सुनु धरू मन माही ।।
प्रथम भगति संतन्ह कर संगा । दूसरि रति मम कथा प्रसंगा ।।

गुरू पद पंकज सेवा , तीसरि भगति अमान ।
चौथि भगति मम गुनगान करइ कपटि तजि गान ।।
मंत्र जाप मम दृढ़ बिस्वासा । पंचम भजन सोबेद प्रकासा ।।
छठ दम सील बिरति बहु करमा । निरत निरन्तर सज्जन धरमा ।।
सातवॉ सम मोहि मय जग देखा । मोते संत अधिक करि लेखा ।।
आठवॅ जथा लाभ संतोषा । सपनेहुॅ नहि देखइ कर दोषा ।।
नवम सरल सब सन छल हीना । मम भरोस हियॅ हरष न दीना ।।
नव महुॅ एकउ जिन्ह के होई । नारि पुरूष सचराचर कोई ।।
सोई अतिसय प्रिय भामिनि मोरे । सकल प्रकार भगति दृढ़ तोरे ।।[1]

नवधा भक्ति के इस प्रसंग में अध्यात्म रामायण का प्रभाव है। नवधा भक्ति के सात अंग तो कमभेद से अध्यात्म रामायण और रामचरित मानस में प्रायः समान है। शेष दो अंग भावार्थ की दृष्टि से एक है।

भक्ति की साध्यता –

भक्ति शास्त्र मे कहा गया है कि भक्ति अंगी है और ज्ञान तथा कर्म आदि उसके अंग है।[2] ज्ञान योग और कर्म भक्ति की अपेक्षा रखते है, इसलिए इनकी अपेक्षा भक्ति की श्रेष्ठता सिद्ध हो जाती है।[3] नारद के मत से प्रेमाभक्ति कर्म, ज्ञान और योग से श्रेष्ठ होती है।[4] ज्ञान भक्ति प्रेमाभक्ति का साधन है।[5] जिस प्रकार भोजन और राजा के स्वरूप का ज्ञान हो जाने से कमशः क्षुधा निवृत्ति और राजा की कृपा की प्राप्ति नही हो जाती है, उसके लिए प्रथक रूप से प्रयत्न करने पड़ते है, उसी प्रकार ज्ञान से ईश्वर के स्वरूप का बोध तो हो जाता है, किन्तु उनक़ी कृपा की प्राप्ति नही होती है। प्रभु की कृपा की प्राप्ति भक्ति से ही संभव है। इसीलिए सुमुक्ष भी भक्ति का ही आश्रय ग्रहण करते है। इस प्रकार भक्ति कर्म योग और ज्ञान पुरूष वर्ग में है, और भक्ति स्त्री वर्ग में। माया ज्ञानियों को अपने प्रभाव में कर लेती है, किन्तु वह भक्ति से डरती है। इसलिए वह भक्तो का अहित नही कर पाती ।

---

1 – रामचरित मानस (अरण्य काण्ड) 35/4 से 36/4 तक
2 – शांडिल्य भक्ति सूत्र – 10
3 – शांडिल्य भक्ति सूत्र – 22
4 – नारद भक्ति सूत्र – 25
5 – नारद भक्ति सूत्र – 32

भक्ति में उपासना पद्धति – हम भक्ति के शास्त्रीय रूप का प्रतिपादन करते समय हम इस तथ्य का निरूपण कर चुके है कि साधक की प्रवृत्ति के भेद से भक्ति तीन प्रकार की होती है। (1) सात्विकी (2) राजसी (3) तापसी। सात्विकी श्रद्धा से युक्त होने के कारण सात्विकी उपासना अति उदान्त एवं स्वयं प्रकाशक होती है। उपास्य में अनन्याशक्ति ही इसका सर्वस्व है। जब उसकी आसक्ति अपनी पराकाष्ठा में पहुँच जाती है, तब सम्पूर्ण विश्व को उपास्यमय देखने लगता है। गोस्वामी जी के उपास्य भगवान राम है, जो ब्रह्म है। अवतार की दृष्टि से श्री राम मर्यादा पुरूषोत्तम थे। अतएव उनसे सम्बन्धित भक्ति भावना से अपने आप सात्विकता आविर्भूत हो जाती है।

अनन्य भक्ति – गोस्वामी जी ने चातक को अपनी अनन्य प्रेमा भक्ति का प्रतीक माना है, भले ही बादल अपने प्रेमी चातक की याद को भुला दे, औलो की वर्षा करे बज्रपात के द्वारा उसके शरीर को नष्ट कर दे, इसके बावजूद चातक अपने प्रेमी बादल की ओर ही देखता रहता है। चातक चाहे जितना भी निर्मल हो जाए, वाणी अवरूद्ध हो जाए फिर भी उसके ह्रदय में बादल के प्रति अनन्य प्रेम होता है। जो कभी समाप्त नही होता, तुलसीदास जी ने दोहावली के 36 दोहे मे (चातक छतीसी) इसी की (चातक) अनन्य निष्ठा की प्रसंशा है।

रटत – रटत रसना लटी, तृषा सूखिगे अंग ।
तुलसी चातक प्रेम का, नित नूतन रूचि अंग ।।
बरषि परूष पाहन पयद, पंख करौ दुई टूक ।
तुलसी परी न चाहिए, चतुर चातकहि चूक ।।[1]

भक्ति का मूल तत्व –

तुलसीदास जी की धारणा है कि भक्ति का मूल तत्व महत्व की अनुभूति है और हमे अपनी इन्द्रियो के द्वारा अपने आराध्य का ही मनन, चिन्तन, दर्शन और श्रवण करना चाहिए। हमारी अनुरक्ति अपने आराध्य पर ही हो। उसी का बल हो ऐसी चित्तवृत्ति बना लेना ही मानव जीवन की सार्थकता है। अनुरूप विभवादि के द्वारा भक्तो के ह्रदय में आस्वादन योग्यता को प्राप्त ही रीति प्रीति ही भक्ति रस कहलाती है। डा0 वाडध्वाल का मत है कि वासनाएं स्वतः भली या बुरी नही होती है। उनका बुरा होना उनके आलम्बन पर निर्भर करता है। जो वासना पुत्र कलत्र, धन, आदि की ओर आकर्षित होने पर मोह कहलाता है, और बंधन का कारण बनती है, वही वासना आराध्य के प्रति उन्मुख होने पर उपासना या भक्ति कहलाती है और जीव की मुक्ति का कारण बनती है। भक्ति आचार्यो ने इस भक्ति रस के दो प्रमुख भेद बताये है।

---

1 – दोहावली – 280, 282

(क) अमिश्रित भक्ति रस –

इस रस में स्थाई भाव के रूप में केवल भगवद रति की व्यंजना की जाती है। इसमें काम रस और हास्य आदि का मेल नही होता। विशुद्ध वात्सल्य और प्रीति ये तीनो अमिश्रित भक्ति रस के प्रधान गुण है।

(ख) मिश्रित भक्ति रस –

इस रस में भगवद रति के साथ काम रस और हास्य रस का मिश्रण रहता है। श्रंगार, करूण, हास्य, भयानक, अदभुद, युद्धवीर और दानवीर ये सात इसके अर्न्तगत आते है।

कवि सूरदास के अनुसार भक्ति भावना समुद्र की एक लहर के समान है जो अचानक ही उमड कर तट प्रान्त को जलमय कर देती है – उसकी कोई सीमा नही, कोई थाह नही, कोई आदि नही परन्तु वह कोई अवरोध नही मानती दूसरी तरफ ज्ञान एक ऊँचे पर्वत के समान है, गम्भीर और गहन है। ज्ञान के गहन मार्ग पर चलने वाले उद्धव भक्ति के इस तरल आवेग से अभिभूत हो गये और उन्होंने भक्ति की सच्ची विजय को प्राप्त किया परन्तु तुलसीदास को तो किसी प्रकार की भक्ति की श्रेष्ठता प्रतिपादित करनी थी और उन्होंने हठ् पूर्वक उसे प्रमाणित भी कर दिया। यह सर्वविदित है, कि वेदो में भक्ति की कही भी चर्चा नही है। प्राचीन उपनिषदो में भी तत्व ज्ञान है, केवल छान्दोग्य उपनिषद् में एक स्थल पर उपासना की चर्चा की गयी है। जिसका सम्बन्ध भक्ति से जोडा जा सकता है।

वेदों मे सभी जगह ज्ञान और कर्म की ही महत्ता का वर्णन किया गया है, परन्तु भक्ति की श्रेष्ठता प्रतिपादित करने के लिए उन्ही वेदो से तुलसी ने भगवान राम की स्तुति कराया है, इसे हम हठवादी विचारधारा की संज्ञा दे सकते है। इतना ही नही, भक्ति के लिए जिस सगुण रूप की आवश्यकता पडती है। भगवान राम के उसी सगुण रूप की चर्चा भी तुलसी ने वेदो से कराया है। इस प्रकार श्रुति और मुनि देवगण और विधाता जनक याज्ञावल्यय सतानन्द भारद्वाज अगस्त्य आदि के वचनों का ही प्रमाण देकर ही मानसकार गोस्वामी जी ने ज्ञान के ऊपर भक्ति की श्रेष्ठता प्रदर्शित की है।

भक्ति का आध्यात्मिक आधार –

जगत के सम्बन्ध में गोस्वामी जी ने अपनी आध्यात्मिक विचार धारा से मध्यवर्ती मार्ग का अनुशरण किया है। उन्होंने 'ब्रह्म सत्यम' जगन्मिथ्या के सिद्धान्त को एक नयी दृष्टि देने की चेष्टा की है। उन्होंने जगत को शंकर आदि अद्वैत मार्गी दार्शनिको की भॉति एकदम असत्य एवं भयावह ही नही घोषित किया वरन् उसके नित्य एवं सुन्दर पक्ष को ही विशेष रूप से बल दिया गया है। वस्तु स्थिति यह है कि गोस्वामी जी ने इस क्षेत्र में भी अपनी अंकुठित व्यवहार वुद्धि का तथा उदात्त संश्लेषण का ही सुन्द परिचय दिया है।

ब्रह्म के निर्गुण और सगुण रूप में अभेदभाव प्रदर्शित करते हुए मानसकार ने सगुण ब्रह्म के प्रति अपना पक्ष पात प्रकट किया है। तात्विक विवेचन करने पर निर्गुण और सगुण में सूक्ष्म अन्तर मिलता है। यदि हम सूक्ष्म दृष्टि से देखे तो हम इस तथ्य पर पहुँचते है कि यदि जीव मे तत्व ज्ञान हो तो ईश्वर और जीव में कोई भेद नही है। परन्तु यहॉ जीव और ईश्वर के अभेद भाव में एक भी यदि

जुड गया वही पर भेद दृष्टि उत्पन्न हो जाती है। इसी क्रम में यदि हम तुलसीदास जी द्वारा वर्णित माया को आध्यात्मिक दृष्टि से निरूपित करे तो यह दो प्रकार की मिलती है। (क) विद्या माया (ख) अविद्या माया।

माया का निरूपण करना इसलिए आवश्यक समझा जाता है, क्योकि तुलसी ने दशरथ नन्दन ने राम को मायापति कहा है। सरलता की दृष्टि से हम निम्नलिखित माध्यम से विवेचन करेगे।

राम की माया का स्वरूप –

तुलसीदास के अनुसार ब्रह्म राम की शक्ति का नाम माया है इसलिए उनका एक नाम मायापति भी है। उनकी व्यक्ताव्यक्त शक्ति रूप माया को सीता कहते है। तुलसी के राम – भक्ति – दर्शन में सीता और माया शब्द समशील है। जिस प्रकार राम के दो रूप है, साकार और निराकार। उसी प्रकार सीता के भी दो रूप है व्यक्त और अव्यक्त। व्यक्त रूपा सीता के लिए तुलसीदास माया शब्द का ही प्रयोग करते है, किन्तु जब वही अव्यक्त माया साकार रूप में होती है तो वाणी के विषय के रूप में सीता के रूप में कही जाती है।

तुलसी पूर्व वाङ्मय मे माया शब्द का व्यवहार शक्ति इन्द्रजाल की शक्ति, कपट प्रज्ञा, मिथ्याचार, रहस्यमय दैवीशक्ति, योग शक्ति, मोह कारणी शक्ति जगत का वैतथ्य अविधा कार्य आदि नामो से विविध अर्थो में प्रयोग किया गया है।

माया के दो रूप –

तुलसीदास जी ने ब्रह्म, जीव, ज़गत, जड, चेतन आदि के आध्यात्मिक स्वरूप का तत्व दर्शन की दृष्टि से विवेचना करते हुए विद्या और अविद्या माया का वर्णन किया है, जीव के सम्बन्ध में मै देह से भिन्न चेतन आत्मा हूँ – इस प्रकार की बुद्धि माया है जो संसार निवृत्ति का कारण है। माया दूसरा भेद अविद्या माया है जो जीव के संसार का कारण है तुलसी ने अविद्या माया के लिए केवल माया या अविद्या शब्द का ही प्रयोग किया है। इसी प्रकार जीव और जगत दोनो की सत्ता अस्वतंत्र है पर दोनो ही. वशवर्ती ही है। इसी क्रम में तुलसीदास जी ने जीव के सम्बन्ध में भी अपनी आध्यात्मिक और दार्शनिक विचार धारा को व्यक्त किया है।

जीव के त्रिबिध शरीर –

संसारी जीव को अपने कर्मफल भोग के लिए किसी न किसी भोगायतन का सहारा लेना पड़ता है, क्योकि इसी भोगायतन का नाम ही शरीर है। जीव की चेष्टाओं, इन्द्रियों और अर्थो के आश्रय को ही शरीर कहा गया है। 'विनय पत्रिका' के एक पद में तुलसीदास जी ने जीव की जीवन यात्रा का व्यापक निरूपण किया है।[1] उनकी मान्यता है कि जीव भगवान से विलग नही था। विलग होने पर उसने (जीव) देह को गेह मान लिया और माया के कारण अपने मूलरूप को भूल गया और अनेक योनियों में जन्म ले लेकर अनेक यातनायें सहता रहा। इस प्रकार जीवन त्यागी जीव के भोगायतन शरीरों एवं तद्स्थान दृष्टि से जीव की चार अवस्थाओं पर हम चर्चा करेगे ।

---

1 – अनुराग सो निज रूप सो जग में विलक्षल देखिये – वि0 135/11

(क) कारण शरीर

जीव के तीन शरीर है, कारक शरीर, सूक्ष्म शरीर, स्थूल शरीर यद्यपि तुलसीदास जी ने इसका स्पष्ट निरूपण नहीं किया परन्तु यह मान लेना भी उचित नहीं है कि उनको यह मान्य नहीं रहा होगा। अद्वैत वेदांत के अनुसार जीव के स्वरूप ज्ञान को आवृत करने वाली अविद्या माया ही जीव के अगले जन्म का कारण होने के कारण उसका कारण शरीर है।

(ख) सूक्ष्म शरीर

जीव के कारण शरीर से उसके सूक्ष्म शरीर की उत्पत्ति होती । यह शरीर अज्ञानोपहित जीव को वासना रूपेण उसके कर्म फलो का अनुभव कराता है। 'विनय पत्रिका के अनेक पदो में'[2] तुलसी ने मन के विविध विकारो का जो विस्तृत निवेदन किया है वह इस सूक्ष्म शरीर की गतिविधियों का ही उपस्थापन है।

(ग) स्थूल शरीर –

महाभूतो के सत्यप्रधान अंश से एक ज्ञान कियाशक्त्यात्मक, चित्र रूप सदृश स्वच्छ द्रव उत्पत्ति होती है, तथा वाह्य क्रियाओं का ज्ञाता ही कर्ता स्थूल शरीर है। इसी प्रकार तुलसीदास ने अपने साहित्य में वुद्धि, अहंकार, चित्त और मन को आध्यात्मिक एवं दार्शनिक रूप प्रदान किया है।

बुद्धि के दो अर्थ है। प्रज्ञा और बेधि पहले अर्थ में अन्तःकरण की वह विद्या जिसके द्वारा जीव पदार्थो का अध्यवसाय या निश्चय करके कर्म में प्रवृत्त होता है, बुद्धि कहलाती है। मन का निरूपण सामर्थ्य अथवा विवेकपूर्ण निश्यच रूप ज्ञान बुद्धि है। बुद्धि के इसी वैशिष्ट्य के कारण उसे विज्ञान कहा गया है इस प्रकार तात्विक विवेचनो के आधार पर बुद्धि का निरूपण शंकरानन्द मधुसूदन सरास्वती आदि ने अपने विचार व्यक्त किये है।

अन्तःकरण की दूसरी विद्या अहंकार है इस प्रसंग में यह भी स्मरणीय है कि अहंकार और अभिमान पर्यायवाची भी है तथा दोनो मे व्यापक सम्बन्ध है। अहंकार 'मै' का अभिमान है जो जीव की प्रवृत्तियो का बीज और धर्मग्लानि का मुख्य कारण है। भागवत पुराण में अहंकार को मोह का हेतु कहा गया है। लेकिन तुलसीदास जी ने अहंकार को मोह का कारण बताते हुए उसे अतिशय दुःखदायक मानस रोग बताया है। राम को स्वामी और अपने को उनका सेवक मानने का अभिमान इस वृत्ति का उदान्ति कारण है।

इसकी तीसरी विद्या चित्त है पंतजलि में चित्त का व्यवहार मन पर्याय के रूप में किया गया है। वेदान्त में चित्त मन का एक रूप है। चित्त समष्टि मन है, और चित्त व्यष्टि मन है। चित्त को बेताल कहकर तुलसी ने उसकी भयानकता और चंचलता को ध्वनित किया है। योग दर्शन के अनुसार चित्त की पॉच वृत्तियॉ है, प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्र और स्मृति। इन वृत्तियो का निरोध हो जाने पर भी जीव क्लेश मुक्त होता है।

---

2 – विनय पत्रिका, 59, 88, 89, 90,124, 245

अन्तःकरण की चौथी विद्या मन है। अद्वैत वेदान्त में अन्तःकरण के संकल्प, विकल्पात्मक या संशयात्मक रूप को मन कहा गया है परन्तु तुलसी ने मन का व्यवहार दोनो ही अर्थो में किया है। मन स्वभावतः दुर्निग्रह चंचल और विषय लोलुप है। इन्द्रिया इसे विषय जाल में फॅसाये रखती है। मन की अतिशय प्रबलता और अजेयता से हारकर तुलसी ने राम से उसके वर्जन की प्रार्थना की है।

इस प्रकार तुलसीदास जी ने अपने साहित्य में सरल एवं सुगम अध्यात्म के माध्यम से यह बात बिल्कुल स्पष्ट कर दी है कि जो मनुष्य ज्ञानवन्त होकर भी राम भजन के बिना ही निर्वाण पद की कामना करता है, उसे हम महामूढ़ की संज्ञा दे सकते है। यही कारण है कि तुलसीदास जी ने अपनी सभी कृतियों में रामकृपा को ही सब का मूलाधार मानते है। उसी से ज्ञान और भक्ति दोनो की प्राप्ति होती है। सामाजिक जीवन की विभीषिकाओ के बीच रहते हुए भी वह अपनी परमार्थिक साधना को अक्षुण्ण बनाए रखने वाले कर्म योगी का व्यक्तित्व है। कहना न होगा कि गोस्वामी जी का सम्पूर्ण जीवन दर्शन एक सच्चे भक्त अथवा संत की गहरी अनुदृष्टि पर आधारित है। एक शब्द में उनका सम्पूर्ण चिन्तन उनकी महानतम अनुभूति का परिणाम है। तुलसी के कथनानुसार सच्चा भक्त एवं दार्शनिक वही हो सकता है, जो सच्चा अहिंसक एवं परमार्थिक हो। नीति एवं धर्म की रक्षा के लिए जो सहर्ष अपने प्राणो के बलिदान के लिए तैयार रहे, गोस्वामी जी की दृष्टि में वही सच्चा अहिंसक है। इस प्रकार गोस्वामी जी की आध्यात्मिक चिन्तन धारा मनुष्य को पलायन वादी नही बनाती, बल्कि उसे निरन्तर जीवन साधना में संलग्न रहने की प्रेरणा देती है। यदपि यह सच है इस संसार के नश्वर किन्तु चमकीले प्रलोभनो से बचने के लिए वह हमे प्रभातकाल के तुषार – कणो की क्षणभंगुरता का भी कभी – कभी स्मरण दिलाये बिना नही रहती, किन्तु दूसरे दार्शनिको के निष्कर्षो की तरह वह हमे विश्व को सर्वथा घृणा और त्यज्य बताकर सहसा जंगल के रास्ते की ओर निकल भागने का अव्यवहारिक संन्देश भी नही सुनाती यही तुलसी की आध्यात्मिकता की विशेषता है।

(घ) तुलसी की भक्ति का आध्यात्मिक लक्ष्य –

"भक्तिः परानुरक्तिरीश्वरे" ईश्वर में प्रकृष्ट अनुराग का होना ही भक्ति है। इससे विदित होता है कि भक्ति में एक तो अनुराग की प्रबलता होनी चाहिए दूसरे उस प्रबल अनुराग का समर्पण परमात्मा की ओर होना चाहिए। काम, लोभ और मोह में प्रबल अनुराग की मात्रा रह सकती है, परन्तु भगवान की बात वहाँ कहाँ शुष्क वेदान्त के वार्तालाप में अथवा पाखण्ड पूर्ण जप में ईश्वर का नाम तो रह सकता है, परन्तु नाम चर्चा भर में परानुरक्ति नही रहती।

तुलसीदास जी एक ऐसे संतो में से है जिनकी भक्ति का लक्ष्य मात्र अपने आराध्य पर ही अपनी इन्द्रियो को समर्पित कर देना है। तुलसीदास की भक्ति का लक्ष्य साधुमत और लोकमत दोनो का समन्वय रूप है इसलिए वे केवल व्यष्टि के भक्ति मार्ग के कल्याण की बात को ही लेकर नही चले इसलिए विशुद्ध भक्तिमार्ग ही असल में समन्वय मार्ग ही है। यदपि भक्ति के सम्बन्ध में कई आचार्यो ने अपने विचार व्यक्त किये है, जिनमे कुछ प्रमुख आचार्यो के विवेचन का हम यहाँ सूक्ष्म

अध्ययन करेगे। रामानुजाचार्य ने "स्नेह पूर्वक सतत् ध्यान को भक्ति माना है।"[1]योगिराज जयतीर्थ मुनीन्द्र के मत से – "भगवान के अपरिमित अनवद्य और कल्याणकारी गुणों के ज्ञान से सपुत्पन्न, उनके प्रति अपने सभी सम्बन्धियो और पदार्थो से ही क्या प्राणो से भी अत्यन्त सुदृढ़ अखण्ड प्रेम के प्रवाह को भक्ति कहते है।"[2]

इसी क्रम में भक्ति मीमांसा नामक ग्रन्थ में –'ईश्वर के प्रति मन की उल्लास वृत्ति को भक्ति कहा गया है।'[3] पं0 गिरिधर शर्मा का मत है कि – 'वैदिक साहित्य में भक्ति सर्वत्र भाग अर्थ में प्रयोग हुआ है।'[4] किन्तु मेरे मत से वेद के भाग में अतिरिक्त श्रद्धा और अनुराग पूर्वक सेवा के अर्थ में भी भक्ति शब्द का अर्थ प्रयोग किया जा सकता है। आचार्य बल्देव उपाध्याय और डा0 सम्पूर्णानन्द के मत से वैदिक संहिताओं में अनुराग सूचक भक्ति शब्द का सर्वदा आभाव है। डा0 मुंशीराम शर्मा का मत है कि नवधा भक्ति का विकास भागवत् भक्ति के प्रचार होने पर हुआ है। अतएव वैदिक मंत्रो में नवधा भक्ति के सभी रूपो को खोजना असंगत होगा। इस आधार पर जो डा0 मुंशीराम शर्मा का कथन है, युक्ति संगत प्रतीत होता है अतः मै भी इस कथन से सहमत हूँ।

वेदान्त दर्शन में जीव मात्र को भक्ति की ओर उन्मुख करते हुए कहा गया है, कि श्रुति, स्मृतियों में आदेश होने से ब्रह्म का उपासना करना प्रत्येक जीव का कर्तव्य है, और उपासना करने से निराकार प्रभु साकार होकर दर्शन देते है, क्योकि भक्ति के ऊपर ईश्वर का विशेष अनुग्रह होता है। सकट उपस्थिति होने पर भी भक्ति सम्बन्धी कर्म या भागवत धर्म का परित्याग नही करना चाहिए क्योकि श्रुति और स्मृति दोनो के निश्चयात्मक वर्णन से यही विधेय कर्म सिद्ध होता है।
भागवत में भी भक्ति योग का उल्लेख करते हुए कपिल मुनि ने कहा है कि जस प्रकार गंगा का जल अखण्ड रूप से समुद्र की ओर बहता रहता है उसी प्रकार भगवान के गुणों के श्रवण मात्र से तैलधरावत अविच्छिन्न रूप से पुरूषोत्तम में मन का आसक्त होना और उनके प्रति निष्काम और अनन्य प्रेम का होना भक्ति योग का लक्षण है। अब भक्त का धर्म है वह भगवान की कथा सुनने में श्रद्धा रखे प्रभु का निरन्तर ध्यान कर जो कुछ मिले, उसे प्रभु को समर्पित कर दे, और दास्यभाव से भगवान को आत्म निवेदन करे। साधक के हृदय में भक्ति के उदय होने का कम निर्धारित करते हुए भागवतकार ने लिखा है – कि सतसंग करने और भक्तो की चर्चा करते रहने से भगवान के दिव्य गुणो, अनन्त शक्ति ऐश्वर्य के कारण साधक के हृदय में भगवान के प्रति श्रद्धा उत्पन्न होती है। श्रद्धा से प्रेम उत्पन्न होता है, और अन्त में श्रद्धा और प्रेम के संयोग से भक्ति का उदय होता है।

---

1 – गीता 7/1 रामानुजाचार्य कृत भाष्य
2 – नारद पांच रात्र
3 – भक्ति मीमांसा 1/24
4 – कल्याण – भक्ति अंक – (32/1 पृष्ठ 253)

महाभारत के शान्ति पर्व के अन्तर्गत नारायणीय खण्ड में भक्ति के महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहा गया है कि एक बार नारद ऋषि नर और नारायण के दर्शनार्थ बदरिकाश्रम गये वहा नारद को नारायण के दर्शन हुए। 'जो आधा प्रकृति के रूप में सनातन परमात्मा की पूजा में लीन थे नारायण की प्रेरणा से नारद को आद्या प्रकृति के दर्शन हेतु मेरूश्रंग पर स्थित स्वेत द्वीप पहुँचे।'[1] वहाँ नारद को भक्तो के दर्शन हुए। स्वेत द्वीप वासी भक्त इन्द्रियो से विहीन भी वस्तु को न खाने वाले पाक रहित छत्र के समान सिर वाले, मेघ की गर्जना के समान निनाद करने वाले तथा सूर्य के समान देद्दीव्यमान थे। स्वेत द्वीप मे नारद की स्तुति से प्रसन्न होकर भगवान ने नारद को अपना विश्व रूप दिखलाया। इसी प्रसंग में कहा गया है कि पूर्व काल में राजा वसु उपरिचर और सप्तचित्र शिखंडियो को कठिन तपश्चर्या के पश्चात शाश्वत धर्म का पालन करने पर भगवान के दर्शन हुए थे। सप्तचित्र शिखंडियो में मारीचि अत्रि अंगिरस पुलरत्य, पुलह कृतु एवं वसिष्ठ ऋषि थे। ऑठवे स्वाम्भुव थे इन्ही आठ ऋषियो के मनन चिन्तन के फलस्वरूप लक्षश्लोकात्मक भक्ति शास्त्र का उद्‌भव हुआ।

महर्षि शाण्डिल्य कृत भक्ति सूत्र में भक्ति की तात्विक व्याख्या उपलब्ध होती है, उन्होंने लिखा है कि प्रेमा रूपा भक्ति अंगी है और ज्ञान तथा योग उसके अंग है क्योकि ज्ञान और योग भक्ति की अपेक्षा रखते है। इस प्रकार अंगी भक्ति अपने अंगो कर्म, योग और ज्ञान से श्रेष्ठ सिद्ध हुयी। भक्ति की दृढ़ता एवं निर्मलता का ज्ञान लौकिक प्रीति की भॉति भगवत कथा, श्रवण नाम, कीर्तन आदि में रामांचा, अश्रुपात आदि चिन्हों से होता है।[2]

इस प्रकार अन्यान्य विद्वानो के मतानुसार भक्ति की व्याख्या एवं विभिन्न प्रकार के विचारो के अवगत होने के पश्चात हम यह देखते है कि गोस्वामी तुलसीदास जी की भक्ति भावना का स्वरूप आध्यात्मिक होते हुए भी समर्पण एवं दास्य भक्ति पर आधारित है। सम्पूर्ण तुलसी साहित्य का गहन अध्ययन करने पर प्रायः परा अपरा, प्रेमा दास्य, सख्य आदि भावो की भक्ति का निदर्शन तो होता ही है, प्रत्युत सूर की भॅाति सख्य भाव के साथ तुलसी की समर्पण भक्ति सर्वोपरि है, यदपि इस समर्पण के पीछे एक अव्यक्त शक्ति का हाथ है जिसने तुलसी से तुलसी दास बना दिया। तुलसी के सम्पूर्ण साहित्य में भक्ति का आध्यात्मिक स्वरूप दृष्टिगत तो होता ही है लेकिन इसके साथ – साथ उनके साहित्य में दार्शनिक विचारधारा की भी कमी नही है।

---

1 – महाभारत / शान्ति पर्व 335 / 7–9
2 – शाण्डिल्य भक्ति सूत्र – 10 / 22 / 43 / 48 / 56

विनय पत्रिका में संकलित पद इस बात के प्रमाण है कि तुलसी की भावना सख्य प्रधान न होकर दास्य भक्ति पर आधारित है, सर्व प्रथम उन्होंने अपने काव्य में स्वान्तः सुखाय शब्द का प्रयोग किया है इसका आश्रय उद्धत करते हुए उन्होंने लोक समाज को अपनी आन्तरिक भावना के उद्गार को व्यक्त करते हुए यह दर्शाया है कि मेरी रचना अपने आराध्य के प्रति समर्पण की स्वनिभूति है। न कि दूसरो के सामने अपनी विद्वता का परिचय देना। गोस्वामी तुलसीदास को अंजनी नंदन हनुमान जी ने साक्षात वानर रूप में प्रकट होकर राम का गुणगान करने के लिए प्रेरित किया। यदि हम सम्पूर्ण तुलसी साहित्य का तात्विक आध्यात्मिक, दार्शनिक मंथन करे तो हमे केवल उनकी दास्य भक्ति के ही दर्शन होते है और दास्य भक्ति का आध्यात्मिक स्वरूप ही समर्पण है तुलसी की चिन्तन धारा इसी सूत्र को आधार मानकर निरन्तर अविचल प्रवाह में प्रवाहित होती रहती है। अनेकानेक विद्वानो के गहन, अनुशीलन, परिशीलन, चिन्तन, मनन आत्ममंथन के बाद यही निष्कर्ष निकलता है कि तुलसी की आध्यात्मिक भक्ति भावना का स्वरूप अपनी सम्पूर्ण इन्द्रियों को निग्रही करके अपने आराध्य के प्रति समर्पित होना ही दास्य भक्ति का वास्तविक स्वरूप है।

इस प्रकार इस अध्याय में हमने तुलसी की आध्यात्मिकता उनका साहित्य, भक्ति और भक्ति का आध्यात्मिक आधार तथा भक्ति के आध्यात्मिक लक्ष्य के बारे में यथाशक्ति अनुशीलन करने का प्रयास किया और अन्त में यह पाया कि तुलसी की आध्यात्मिक भक्ति का लक्ष्य लोकहित की भावना को प्रेरित करने वाला है, तथा एक सभ्य संसंस्कृत समाज की रचना के उद्देश्य से परिपूर्ण मानव कल्याण की भावना से ओत – प्रोत है।

अध्याय - तृतीय

सच्ची भक्ति में मूलतः तुलसी दास सगुण और निर्गुण का भेद नही मानते। फिर भी राम काव्य में सगुण भक्ति की प्रधानता है। तुलसी की दृष्टि से 'राम सृष्टि के कर्ता, भर्ता और संहर्ता है।[1]' उनका कर्तृत्व, भर्तृत्व और संर्हृत्व कादाचित्क होने के कारण उनका तटस्थ लक्षण है। "राम विश्व के परम कारण है।"[2] इसीलिये उन्हे कारण का भी कारण और ब्रम्हादिक जनक कहा गया है। "वह जगत से अभिनन्दन उसके निमिन्त एवं उत्पादन दानो ही कारण है।"[3] तुलसी दास कहते है, कि समस्त प्रकार के संसारिक मोह के बन्धनों से मुक्त होकर भगवान की शरण में स्वतत्व को अर्पण कर देना अनन्य भक्ति भाव कहा गया है। अनन्य भक्ति होने पर ही भक्त के योगक्षेम का दायित्व भगवान स्वयं वहन करते है। निर्गुण उपासना में विवेक की प्रमुखता होती है। साधक विवेक पूर्ण दृढ़ता के साथ परमात्म तत्व को प्राप्त कर लेता है।सुगमता की दृष्टि से धर्मग्रन्थों में परमात्म बोधन हेतु ज्ञानयोग, कर्मयोग, भक्तियोग की चर्चा है। इन्हे ही ज्ञान मार्ग, कर्म मार्ग की संज्ञा दी गयी है। जिस प्रकार सूत्रधार के संकेत पर कठपुतली विभिन्न प्रकार के नृत्य प्रस्तुत करती है उसी प्रकार इस सृष्टि के प्रमुख सूत्रधार भगवान राम है और सम्पूर्ण जीवन उन्ही के संकेत मात्र से चलता है। सभी प्रकार के शुभ–अशुभ कर्मो के भोक्ता प्राणी स्वतः होते है। जलती हुइ अग्नि में जिस प्रकार से हजारो स्फुलिंग उत्पन्न होते है उसी प्रकार अव्यत्क परमात्मा से हजारे जीवात्माओ की सृष्टि होती है। और अन्त में उसी में लीन हो जाती है। अतएव यह निश्चित है कि जगत और जीवात्मा की उत्पत्ति परमात्मा से ही है। यही संदेश हमारे तुलसी के हिन्दी राम काव्य का प्रमुख संदेश है।

रामानुज के ब्रह्म की भाँति तुलसी के राम भी स्वभावतः सगुण है। उनके गुण अमित है। इसीलिये उनके गुणो के गण, ग्राम, संनिपात, राशि, सिन्धु, निधान, धाम, आगार, मन्दिर आदि का उल्लेख करके तुलसी ने उनके गुणो की अतिशयता पर बल दिया है। "वह स्वभावतः करूणमय है।"[4] "इसीलिये वह करूणा के धाम, आयतन, अयनःनिधि आकर, सिन्धु आदि कहे गये है।"[5] वह सेवकजनो के रन्जनकारी, सुखदायक, परमस्नेही और भक्तवत्सल है। वह इतने भावबल्लभ तथा भावग्राहक है कि भक्त की विनय सुनते ही उसकी प्रीति को पहचान कर सहज ही रीझ जाते है।

1 – तासु भजन की जिय तहँ भर्ता।
जो कर्ता पालन संहर्ता।।
रामायण 6–7–2
2 – रामायण 6–3–19–20, ब्रह्मसूत्र 1–1–2, विष्णु पुराण 1–2–2
3 ब्रह्मसूत्र 1 14 25 28 , शांडिल्य भक्तिसूत्र 3 1 5
4 करूणामय, मृदु राम सुभाउ रामायण 2–40–2
5 – गीतावली 7–5–7 , 7–6–4 , कवितावली 7–10
विनय पत्रिका 56–9 , 53–2 , 54–8

इसीलिये भक्त उन्हे माता–पिता मानता है। वे व्यापक रूप से सर्वरक्षक, सर्वोपकारी, कल्याणकारी और मंगलमूर्ति है। यद्यपि राम काव्य में एक से बढकर एक भक्तो के दर्शन होते है फिर उन सबमें अन्जनीसुत हनुमान जी भक्मि सर्वोपरि है। इसीलिये हनुमान जी भक्त शिरोमणि है। हनुमान त्याग, धैर्य, साहस, सहिष्णुता, कर्मठता, तत्परता, निष्ठा, सह्रदयता आदि की साक्षात् प्रतिमूर्ति है वह अन्जनी के गर्भरूपी समुद्र से चन्द्ररूप उत्पन्न होकर देवकुल रूपी कुमुदो को प्रफुल्लित करने वाले, पिता केसरी के सुन्दर नेत्ररूपी चकोरो को आनन्द देने वाले और समस्त लोगो का संताप हरने वाले है। जितेन्द्रिय मारूत के समान वेग वाले बुद्धिमान में श्रेष्ठ, सम्पूर्ण इन्द्रियों को जीतने वाले एवं सम्पूर्ण वानरों में अग्रगण्य हनुमान जी की महिमा लोक विदित है।

वह राम काव्य के एक ऐसे सफल एवं सशक्त अध्यात्म शिल्पी है जिनकी शिल्पकला की परख करने वाला तथा उस शिल्प की बराबरी करने वाला तुलसी द्वारा रचित राम काव्य में ही नही अपितु सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य में ऐसा शिल्पकार अभी तक दृष्टिगत नही हुआ। गहन, अनुशीलन, परिशीलन, चिन्तन, मनन करने पर अन्जनीसुत हनुमान एक ऐसे अध्यात्म के शिल्पी सिद्ध होते है जिसका जितनी भी गहराई से अध्ययन किया जाय उतना ही उसकी तह पर पहुँचना दुष्कर होता जायेगा।

देखना यह है कि तुलसी साहित्य में उनके जीवन का प्रतिबिम्ब किस–किस रूप में पड़ा है। सुविधा की दृष्टि से हम उसे दो भागो में विभाजित करेंगें (क) प्रत्यक्ष (ख) अप्रत्यक्ष , प्रत्यक्ष से अभिप्राय उनके द्वारा अपने जन्म, माता–पिता, पुत्र–कलत्र, रोग–शोक, आनन्द उल्लास, रूचि अरूचि तथा मृत्यु आदि से है। और अप्रत्यक्ष से अभिप्राय उन सामाजिक राजनीतिक और सांस्कृतिक सूत्रों से है जिन्हे पकड़कर उन्होने अपने काव्य का भव्य भवन खड़ा किया है। सर्वप्रथम हम उनके जीवन के प्रत्यक्ष प्रतिबिम्ब पर दृष्टिपात करेंगे। इस दृष्टि से उनके लिखे हुये बारह सर्वमान्य प्रामाणिक ग्रन्थों में से चार का विशेष महत्व है – कवितावली, विनय पत्रिका, दोहावली और राम चरित मानस इन ग्रन्थों में से उनके जीवन की अनेक बातो पर प्रकाश पड़ता है।

राम काव्य के रचयिता कवि कुल शिरोमणि माँ वीणा पाणि के वरद पुत्र तुलसीदास जी ने अन्जनी नन्दन आन्जनेय की वन्दना में प्रयुक्त अपनी लेखनी को अतिन्यून की संज्ञा दी है अर्थात तुलसीदास जी की अपनी अभिव्यक्ति है कि मुझमें वह सामर्थ्य बिल्कुल नही है जिससे मैं अपनी काव्य प्रतिभा के बल पर हनुमान जी के उज्जवल चरित्र का चरित्रांकन कर सकूँ। वह अपौरूषेय, शत्रुहन्ता, मदहन्ता, महापराक्रमशाली, महाभट, दारूणभट और अतुलित बल के धाम है। तुलसीदास जी ने यहॉ तक लिखा है कि मैं तो हमेशा अन्जनी नन्दन आन्जनेय के नाम पर टुकड़े माँग कर खाता आया हूँ। अब हम अन्जनी नन्दन आन्जनेय का भक्ति परक अध्ययन करेंगे।

क राम काव्य में अन्जनी नन्दन आन्जनेय —

हनुमान आदर्श सेवक है जो अपने स्वामी के लिये सम्भव असम्भव सब कार्य निरालस भाव से करते है। मित्रता के लिये निषाद, विभीषण, और सुग्रीव का चरित्र आदर्श भाई के भरत का

चरित्र, आदर्श माता के लिये कौशल्या का चरित्र और आदर्श सेवक के लिये हनुमान का चरित्र राम काव्य में भली भॅाति जाना जाता है।

तुलसी के रामकाव्य में चार पात्र – लखनलाल जी, श्री भरत लाल जी, श्री हनुमन्त लाल जी और भूत भावन भगवान शंकर जी प्रमुख रूप से गिने जाते है। इन चारो पात्रों का सेवा भाव और अनन्य भक्ति का भाव उच्च कोटि का है। इसका निर्णय स्वयं भगवान शंकर ने किया है। वे अन्य भक्तों को अवश्य मानते है परन्तु हनुमान जी के समान भाग्यवान भक्त और किसी को नही बताते। इसका प्रधान कारण है कि स्वयं राम तथा माता जानकी ने श्री हनुमान जी को जितना स्नेह दिया और हृदय के जिस भाग में स्थान दिया वहॉ तक शायद और कोई नही पहुँच सका। अशोक वाटिका में ठहराई गई सीता जी को खोजते हुये तमाम बाधाओ को पार करते हुये जब हनुमान जी वहाँ माता जानकी के समक्ष उपस्थित हुये और श्री राम के पावन कथा के माध्यम से अपना परिचय देकर अपने को प्रभु रामचन्द्र जी का दास प्रमाणित कर लेते है, तब वे माँ जानकी के उस दुर्लभ अनुग्रह को प्राप्त करते है, जिसको प्राप्त कर लेने के पश्चात सृष्टि में कोई ऐसी चीज नही रह जाती जिसकी जीव कामना करे। वैसे यदि देखा जाए तो सम्पूर्ण चराचर विश्व की सृष्टि ही माँ की संतान है, सभी पर उनका ममत्व और स्नेह बराबर भाव में रहता है, इसके बावजूद माँ जानकी का विशेष आर्शीवचन अन्जनी नन्दन आन्जनेय के प्रति उनके अतिशय स्नेह के प्रति प्रगाढ़ता और असीम मातृ – वत्सलता का परिचय देता है।

आशिष दीन्हि राम प्रिय जाना। होउ तात बल शील निधाना।।
अजर अमर गुन निधि सुत होहू। करहुँ बहुत रघुनायक छोहू।।
करहुँ कृपा प्रभु अस सुनि काना। निर्भर प्रेम मगन हनुमाना।।
बार बार नायसि पद शीशा। बोला बचन जोरि कर कीसा।।
अब कृत – कृत्य भयउँ मै माता। आशिष तब अमोघ विख्याता।।[1]

आज अंजनी नन्दन आंजनेय के अपासको की संख्या सर्वाधिक होगी। हिन्दू ही नही अपितु अन्य धर्मावलम्बी भी श्रद्धापूर्वक हनुमान जी की भक्ति उनका दर्शन दृढ़ आस्था के साथ करते है। सम्पूर्ण जनमानस उनसे यथामति प्रेरणा लेता हैं और अपनी प्रगाढ़ भक्ति की आस्था के साथ अपनी निष्ठा को प्रतिष्ठित करता है। किन्तु बिडम्बना है कि आज पूजा उपासना और भक्ति का महत्व ही नवीन पीढ़ी को विस्मृत होता जा रहा है। आज प्रायः देखा जाता है कि लोग दूसरो को कष्ट पहुँचाने के लिये, अहित करने के लिये मन्दिर में जाकर अपने आराध्य से प्रार्थना करते है कि हनुमान जी मेरे पड़ोसी का अनर्थ हो जाये, उसका सर्वनाश हो जाये; उसकी मनोकामनाएं पूर्ण न हो, उसकी संतान उन्नति न करे आदि अथवा मेरे पास खूब धन हो जाये तो मैं आपको लड्डू चढ़ाऊँगा।

1 – सुन्दरकाण्ड (रामचरितमानस)

कार्य की सिद्धि न होने पर ऐसे व्यक्ति भला बुरा भी कहते है, दूसरो को भी दिलों में दुर्भावना उत्पन्न करते है, ऐसी स्वार्थ परता से भरी भक्ति फलदायी कैसे सिद्ध हो सकती है। इतिहास गवाह है कि आज तक दूसरो को हानि पहुँचाकर, दूसरो का अहितकर अथवा अपने अहम् की पुष्टि के लिये देवता की शरण में जाने वाले लोग न केवल निराश, हताश, उदास हुये है, बल्कि उनको उल्टे मुँह की खानी पड़ी है। राम काव्य का एक उदाहरण है परमवीर, उद्‌भर विद्वान, काल को अपनी पाटी में बाँध रखने वाला महान पंडित, शास्त्रज्ञ, भगवान शंकर के परम भक्त रावण को न केवल पराभव प्राप्त हुआ अपितु उसका सर्वनाश ही हो गया। धर्मग्रन्थो में इस प्रकार के अनेक दृष्टान्त मिलेंगे।

वास्तविकता यह है कि शक्ति साधना और उपासना का लक्ष्य यदि व्यक्तिगत होकर लोकहित में नही हुआ तो उसकी परिणति साधक के अनुकूल नही हो सकती। यह आवश्यक है कि साधक का ह्रदयाकाश निस्कपट, निर्दोष और स्वार्थ शून्य हो। हम किसी आराध्य का स्वरूप तभी स्वीकार करते है जब आन्तरिक आकर्षण से उस आराध्य के प्रति हमारी आस्था और विश्वास दृढ़ता के स्वरूप में परिवर्तित होता है। इसी संदर्भ में मै तुलसी दास के विशेष परिप्रेक्ष्य में अंजनी नन्दन आंजनेय की लोक रंजक, भक्ति रंजक तथा भक्त हितैषिणी चर्चा करना उचित समझती हूँ।

विभीषण को राम भक्ति के वरदाता –

लंका में राम की विजय पताका फहराने के बाद लंका की राजगद्दी पर विभीषण का राज – तिलक करने के लिये श्री राम ने भाई लक्ष्मण और हनुमान को आदेशित किया था। विभीषण का राजतिलक हो जाने पर हनुमान जी ने विभीषण को वरदान दिया था कि तुम स्वर्णमयी लंका के अधिपति होकर भी हर समय भगवान के भक्ति रूपी चरणों के पराग के पिपासु बने रहोगे। प्रजा पालन, धर्म की मर्यादा, सामाजिक मर्यादा, प्रजा का उत्थान, सह्रदयता और आदर्शवादिता के गुण तुमसे विलग नही होगें।

तुम पर कभी भी किसी प्रकार की आपदा की छाया भी नही पड़ेगी। इस प्रकार हनुमान जी के चरित्र से परोपकार भावना एवं लोक कल्याण की भावना का दर्शन होता है।[1]

श्रीराम के चरण कमल पराग के रसिक भँवरे –

तुलसी के राम काव्य से रामचरित की जो शीलशक्ति सौन्दर्यमयी स्वच्छ धारा निकली उसने जीवन के प्रत्येक स्थिति के भीतर पहुँचकर भगवान के स्वरूप का प्रतिबिम्ब छलका दिया। हनुमान जी भी उसी की एक महत्वपूर्ण कड़ी है। हनुमान जी भक्ति की साक्षात् मूर्ति है उनकी सेवाभावना और परोपकार तत्परता से प्रेरणा लेकर हम उनके जीवन दर्शन की झाँकी का अवलोकन कर सकते है। मर्यादा पुरूषोत्तम श्री राम की सेवा में पूर्णरूपेण समर्पित अन्जनी नन्दन आन्जनेय अपने सुख – दुख, भूख – प्यास, मान – अपमान, निराशा, भय – शोक का तनिक भी ध्यान नही करते। ब्रम्हशास्त्र से बॉधे जाने पर वह अपने आराध्य के प्रति इतने समर्पित दृष्टिगोचर होते है कि वह अपने सम्पूर्ण तन मन की सुधि भूलकर केवल रामकाज को पूर्ण देखना चाहते है।

1 – जयति भुवनैक भूषण, विभीषण वरद् , विहित कृत राम – संग्राम साका।
विनय पत्रिका – 26/5

किसी भी विकट स्थिति का सामना करके वह अपने स्वामी की हित साधना के साध्य के साधक पूरी निष्ठा के साथ होना चाहिये। वह अपने सम्पूर्ण इन्द्रियो को अपने आराध्य के हित साधन में लगा देना चाहते हैं।

मोहि न कछु बॉधे कइ लाजा।

कीन्ह चहउँ प्रभु कर काजा।।[1]

यह राममय भाव हनुमान के सम्पूर्ण जीवन चरित्र में सर्वथा चरित्रार्थ होता है। हनुमान जी ने सम्सपूर्ण जगत को राममय देखा और श्री राम जी के दासो के दास बने रहे। अन्जनी नन्दन आन्जनेय मनसा, वाचा, कर्मणा, सत्यधर्मव्रती, रोग विनाशक, महाबली, कामदेव को जीतने वाले सदैव भगवान श्री राम के चरण कमल पराग के रसिक भँवरे रहे है।[2] इस प्रकार सम्पूर्ण रामकाव्य के हनुमान जी प्रमुख धुरी कहे जा सकते है।

सेवा रूपी धुरी को धारण करने वाले –

भक्ति का भाव है जिसे भाव विस्तार में परोपकार भी कहा जा सकता है। भक्ति के तत्व को हृदयन्गम करने के लिये उसके विकास पर ध्यान देना आवश्यक है। राम की लीला के भीतर वे जगत् के सारे व्यवहार और जगत् के सारे व्यवहारो के भीतर राम की लीला में परम भक्त हनुमान की महत्वपूर्ण भूमिका है। राम के भक्तो में अद्वितीय, अप्रतिमम, कर्मयोगी और अन्य सेवक होने के नाते हनुमान जी को विशेष रूप से याद किया जाता है। हनुमान जी परोपकार में अपनी सुख शांति का ध्यान कभी नही रखते। वह सेवा रूपी धर्म की धुरी को रंच मात्र भी विलग नही हाने देते। हनुमान जी परोपकार बस ही दीन दुखियो तथा प्रताड़ितो के प्रति अत्यधिक मर्माहत होते है। वे ऐसे सच्चे परोपकारी है कि पथ भ्रष्ट प्राणी को जैसे भी हो सन्मार्ग की ओर प्रेरित करते है। किष्किन्धा में बालि के शासन काल में सुग्रीव चूँकि ईश्वर भक्त था और बिना किसी अपराध के बालि द्वारा प्रताड़ित किया जा रहा था। अतः हनुमान जी ने इस विकट घड़ी में सुग्रीव का साथ दिया और राम से मित्रता कराकर उसका हित साधन किया। बाल्मीकि रामायण के अनुसार भगवान राम हनुमान द्वारा किये गये उपकारो के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करते है। इस पर भी राम जी द्वारा ज्ञापित कृतज्ञता से हनुमान जी प्रफुल्लित नही होते तथा भगवान राम के प्रति अपनी दास्य भावना को तिरोहित नही होने देते।

1 – राम चरित मानस लंका काण्ड

2 – वचन मानस कर्म, सत्यधर्म व्रती, जानकीनाथ, चरणानुरागी

विनय पत्रिका 29/2

बाल्मीकि रामायण में ज्ञापित कृतज्ञता एक लोकैषणा भी है 'हनुमान तुम इतने महान परोपकारी हो मै तुम्हारे एक एक परोपकार पर अपने प्राण न्योछावर करूँ इस पर भी शेष के लिये ऋणी रहूँगा'।[1]

इस प्रकार हम देखते है कि भगवान राम का पूरा परिवार ही हनुमान जी के उपकार से प्रभावित है। समुद्र पार करके सीता की खोज करना भीमकाय राक्षसो से आत्म रक्षा करना, संजीवनी बूटी लाकर लक्ष्मण को जीवनदान करना, मरणोन्मुख भरत को राम के अयोध्या आगमन की सूचना देकर एक नये जीवन का संचार करना, पाताल में अहिरावण का अंत कर श्री राम और लक्ष्मण को मुक्त कराना, अपने ही मानस पुत्र मकरध्वज से युद्ध कर उसको ज्ञान कराना, लंका युद्ध में उपस्थित रहकर श्री राम को विजय श्री प्राप्त करने में सहायक बनना आदि हनुमान जी का उदान्त चरित्र पग पग पर परोपकार से भरा हुआ है।

सिद्धसुर सज्जनानन्द सिन्धु हनुमान –

अन्जनी नन्दन आञ्जनेय का ज्ञान रूप व्रत सदा ही निश्चल है। वह सत्यपरायण और धर्म का आचरण करने वाले सिद्ध देवगण और योगिराज आदि द्वारा सेवित भव के भयरूपी अन्धकार का नाश करने वाले है। बन्दर के आकार में साक्षात् शिवस्वरूप हनुमान जी राक्षस रूपी पतंगों को भस्म करने वाली श्री राम चन्द्र जी के क्रोधरूपी अग्नि की ज्वालमाला के मूर्तिमान स्वरूप है। इसके साथ साथ एकादश रूद्रों में प्रमुख और जगत् पूज्य ज्ञानियों में अग्रगण्य, काम विजेता, भगवान राम के हितकारी और सदैव उनके भक्तों के साथ रहने वाले रक्षक हनुमान जी से बढ़कर और कोई नही है। हनुमान जी साक्षात् "राक्षसों के कशल क्रोध रूपी अग्नि का नाश करने वाले तथा सिद्ध देवता और सज्जनो के लिये आनन्द के समुद्र है।"[2]

जगत वन्द्य महा तेजस्वी –

अंजनी नन्दन आञ्जनेय दिव्य भूमि की सुन्दर खदान से निकली हुयी मनोहर मणि के समान है और भक्तों के संताप तथा समस्त प्रकार की चिंताओं का नाश करने वाले है। ब्रह्मलोक के समस्त भोग ऐश्वर्यो से वैरागी मन, वचन और कर्म से सत्य रूप धर्म के व्रत का पालन कर श्री जानकीनाथ रामजी के चरणों के परम प्रेमी है। "अभिमानी रावण के सामने उसकी स्त्री मंदोदरी के बाल खीचने वाले, जानकी जी को दुख को देखकर उत्पन्न हुये क्रोध के वशीभूत हो राक्षसियों को यमराज के समान दण्ड़ित करने वाले हनुमान जी के चरणों की शरण के अलावा अन्यत्र कही भी सुख नही है।"[3]

---

1 – एकैकस्योपकारस्य प्राणान दास्यामि ते कपे।
शेषस्ये होपकाराणां भवाम् ऋणिनो वयम्।। बाल्मीकि रामायण 7/40/23

2 – यातु धानोद्वत – कुद्ध कालाग्नि हर, सिद्ध सुर सज्जानन्द सिधो
विनय पत्रिका 41/27/2

3 – जयति मन्दोदरी केश कर्षण , विद्यमान दशकंठ भट मुकुट मानी।
भूमिजा दुख संजात रोषान्त कृत जातना जन्तु कृत जातु धानी।।
विनय पत्रिका 44/29/4

कल्याण स्वरूप मोक्ष के प्रदाता –

हिन्दी राम काव्य में राम सरीखे कहीं स्वामी नही है और हनुमान जी सरीखे सहायक नही है। सदैव श्री राम जी की कृपा दृष्टि से परिपूरित अन्जनी नन्दन हनुमान जी पर भरोसा करने वाले भक्त को कभी भी कोई सता नही सकता। हनुमान जी के समान भक्तों को प्रसन्न करने वाला, शत्रुओं का नाश करने वाला, दुष्टों का मुँह तोड़ने वाला इतना बड़ा बलवान संसार में कोई और नही है।[1] बड़े – बड़े लोकपाल भी जिनकी कृपा कटाक्ष चाहते है ऐसे रणबाँकुरे अन्जनी नन्दन आन्जनेय की सेवा करने वाला भक्त सदैव निडर , संसार के सभी सुखो का भोक्ता तथा कल्याण रूप मोक्ष को प्राप्त करता है। इस प्रकार जो भी व्यक्ति अपना चैन चाहते है हनुमान जी की सेवा कर उनके गुणो को गाता है उन्हे अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष चारो फल सदैव हस्तगत रहते है।[2]

तुलसी के काव्य में अन्जनी नन्दन आन्जनेय एक ऐसा अनूठा भक्त है जिसके सामने अन्य भक्त जैसे – शबरी, जटायु, गजेन्द्र, सुतीक्षण, अहिल्या आदि सब फीके पड़ जाते है। हनुमान जी भक्ति की मानी का शानी अन्य कोई नही हो सकता। इस प्रकार उनके संदर्भ में जितना कुछ कहा जाये अत्यल्प होगा।

(ख) आन्जनेय अध्यात्म के शिल्पी –

आत्मा सत्‌चित्‌ और आनन्दमय है परन्तु प्राणी माया और मोह के बन्धन में पड़कर इस तथ्य को पूर्णतया भुला देता है और विषयरूपी जल को मथकर उससे परमानन्द रूपी घी को निकालना चाहता है जो सर्वथा अनुचित, असंगत ही नही असंभव भी है। "आत्म चिन्तन एवं आत्म मंथन के द्वारा समाज के हित साधन और प्राणियों के भलाई हेतु चिन्तन करने का नाम ही अध्यात्म है।"[3] हिन्दी राम काव्य में तुलसी दास ने अनेकानेक कर्मफल जन्मों का वर्णन किया है। उन्होने मन की आशक्ति को त्यागकर कर्मप्रधान शुद्ध चित्त होकर परमात्मा को प्राप्त करने का सहज उपाय बताया है। राम काव्य परम्परा के अमर गायक गोस्वामी तुलसीदास ने बारम्बार शीतल और मधुर अमूर्त रूप सहज सुख ब्रह्मानन्द जो अत्यन्त निकट है, से सामीप्य सम्बन्ध स्थापित करने पर जोर दिया है। मानव इस कर्मभूमि में जन्म लेकर अनेकानेक प्रकार के कर्मबन्धनों विषयाशक्ति, मोह, ममता ,माया, लालच आदि में उलझ कर उस परमानन्द परमात्मा की सहज प्रकृति से विमुख हो जाता है, और विभिन्न प्रकार की अमानवीय दुर्धर्ष यातनाओं के जाल में फँसकर बन्धु बान्धव आदि की उदर पूर्ति में उलझ जाता है, और ईश्वर की ओर विमुख होकर इस भौतिक संसार की संसारिकता में खो जाता है, तथा असीम कष्टों को भोगता हुआ कर्म बन्धन में उलझता ही चला जाता है।

---

1 – साहेब कहूँ न राम से , तोसे न उसीले।
सेवक को पर्दा हटे , तू समरथ शीले।।
विनय पत्रिका 47–32–1–4

2 – लोकपाल अनुकूल विलोकियो , चहत विलोचन कोर को।
तुलसीदास चारो करतल , जस गावत गई बहोर को।।
विनय पत्रिका 46–31–4–6

3– भाष्य सूत्र 6–5–11–7 आदि शंकराचार्य

अन्जनी नन्दन आन्जनेय इन सभी कर्मबन्धनों की विमुक्तता का एक ऐसा प्रतिरूप है जिस पर कोई भी संसारिक माया जाल अपना प्रभाव नही ड़ाल पाता। हनुमान जी को यदि ज्ञान निधान की संज्ञा से अविहित किया जाये तो यह नाम अक्षरसः सत्य प्रतीत होगा। देवता, मुनि, राक्षस, गन्धर्व, किन्नर आदि सभी अन्जनी नन्दन आन्जनेय को श्रद्धा से सर झुकाते है कारण कि अन्जनी नन्दन आन्जनेय विशाल हृदय रूपी तालाब में राम रूपी मृदु जल लबालब जल भरा हुआ है जिसमें संसारिक भोगो की तृषा को मिटाने के लिये श्री राम नाम रूपी जल पीने के लिये सम्पूर्ण जगत् के भक्त हनुमान जी की अनुमति चाहते है। हनुमान जी इन्द्रिय निग्रही, आत्म संयमी, कालजयी मानमर्दन कर्ता, सत्य व्रत, सत्य कत, सत्यरथ, और संकट हर्ता है। इसी परिप्रेक्ष्य में उनके अध्यात्म शिल्प का यथाशक्ति अध्ययन एवं विवेचन मेरा किंचित प्रयास ही है।

ब्रम्ह के विशुद्ध रूप में निरूपण कर्ता –

शुद्ध बुद्ध परमात्म स्वरूप विशुद्ध ग्यान विग्रह, योग स्वरूप, परमानन्द स्वरूप, ब्रह्म चारियों के शिरोमणि, सीता के शोक संताप के विनाश में निपुण, प्रबल प्रतापी भगवान श्री राघवेन्द्र के आलिंगन रूप, दिव्य वर प्रसाद से सम्पन्न, मानव मात्र के लिये राक्षस पिशाच के भय के विनाशक, आधि – व्याधि, शोक, संताप, ज्वर, दाह आदि के प्रसमन करने वाले , योगियों द्वारा ध्येय, रावण का संहार करने वाले, वेदों की रक्षा करने वाले, ब्रह्म के स्वरूप का निरूपण हनुमान जी के अतिरिक्त इतना स्पष्ट कौन कर सकता है। मर्यादा पुरूषोत्तम भगवान, राम के रूप में जन्म लेकर सम्पूर्ण पृथ्वी को रावण के पाप भार से मुक्त करने के लिये ही साक्षात् ब्रह्म से ही अयोध्या में अवतार लिया था और अपनी अन्य सभी शक्तियों के साथ शंकर सुवन रूद्रावतार हनुमान के रूप में जन्म लेने के लिये आदेशित किया था। यही तथ्य है कि हनुमान जी उस परब्रह्म के उसी विशुद्ध रूप का साक्षात्कार अपने हृदय में संजोये हुये थे। "इसीलिये वेद वेदांग के ज्ञाता होने के साथ साथ हनुमान जी ब्रह्म के भी विशुद्ध ज्ञाता कहे जाते है।"[1]

भक्ति एवं वैराग्य विज्ञान के ज्ञाता –

जगत् में शायद ही कोई ऐसा हो जो अन्जनी नन्दन आन्जनेय का निष्ठावान भक्त न हो। भगवान राम नारायण चतुर्भुज, सर्वव्यापक, अधीश्वर, मूल प्रकति, महत्तत्व, परमाणु और महाचैतन्य शक्ति युक्त, सनातन देव है। 'अप्रमेय, अपव्यय, अखिल ब्रम्हाण्ड के स्वामी, विश्व मर्यादा के रक्षक, अखिल विश्व में रमने वाले, गुप्त रहस्य का ज्ञान रखने, ज्ञेय स्वरूप प्रभुराम राक्षसों को मारने के लिये ही नर रूप में उत्पन्न हुये है।'[2] समय समय में नष्ट धर्म को व्यवस्थित करने के लिये प्रजा हितार्थ प्रभु राम स्वयं उत्पन्न होते है। ये सभी शास्त्र, संतो एवं विद्वानों का सुविचारित सुनिर्णित मत है।

---

1 – जयति वेदान्त विद विविध – विद्या – विशद वेद वेदांग विद ब्रह्मवादी ।
विनय पत्रिका 26/8

2 – बाल्मीकि रामायण 7/8/26/27, विनय पत्रिका 80/54/1/3

हनुमान जी सदैव राम की सेवा में रत् रहने, उन्ही के चरणों में जीवन का हर क्षण अर्पित करने, राक्षस रूपी पतंगो को भस्म करने, श्री राम चन्द्र जी के चरण कमल पराग का नित्य प्रति पान करने वाले और श्री राम के वियोग से दुःखभिभूत भरत आदि अयोध्यावासी नर – नारियों का ताप मिटाने के लिये कल्प वृक्ष के समान सिद्ध हीन होने वाले , भक्त भरत के समक्ष श्री राम आगमन क़ी सुखद सूचना लेकर प्रस्तुत होने वाले अन्जनी नन्दन आन्जनेय से अधिक भक्ति एवं वैराग्य विज्ञान का ज्ञाता अन्य कोई और नही है। राम काव्य ग्रन्थों के अध्ययन से मै इस तथ्य पर पहुँची हूँ कि राम काव्य में हनुमान जी से अधिक भक्ति एवं वैराग्य की महारथ अन्य किसी को हासिल नही है। इसीलिये वह "समताग्रणी, कामजेताग्रणी, रामहित, कालजपी, रामभक्तानुवर्ती, राम संदेशधर , कौशला कुशल कल्याण भाषी, राम विरहार्क, संतप्त, भर्तादि, नर नारि, शीतल कर्ण, कल्प साषी हनुमान जी तुलसी के मानस रूपी अयोध्या में सदैव निवास करते है।"[1] इससे सिद्ध होता है कि भक्ति और वैराग्य में हनुमान जी उस निर्मल स्वर्ण की भाँति है जो संकट की कसौटी में विधिवत् खरा उतरकर संकट मोचन हो गया है।

लोभ, मोह और माया की फौज से विलग –

अवध बिहारी श्री राम और लक्ष्मण को अपने हृदय में सदैव बसाने वाले, अपनी हुँकार मात्र से रावण के अंग – अंग के जोड़ को ढ़ीले कर देने वाले, पूर्ण सम्पन्न, चन्द्रमा जैसे श्री राम चन्द्र जी के मुख को अनिमेष दृष्टि से देखने वाले, राज्य बहिष्कृतों को पुनः स्थापित करने वाले हनुमान जी के समान अन्य कोई दूसरा सामर्थ्य वान नही है। "श्री राम लक्ष्मण को आनन्द देने वाले, रीछ और बानरों की सेना को एकत्र कर समुद्र पर सेतु का निर्माण करने वाले, सूर्यकुल केतु श्री राम जी को संग्राम में विजय लाभ कराने वाले, संग्राम रूपी कोल्हू में राक्षसों के समूह को योद्धा रूपी तिलों को डाल – डालकर घानी की तरह पेरने वाले, रावण, कुम्भकरण, मेघनाद जैसे महाबली योद्धाओं का नाश करने वाले, सम्भव को असम्भव और असम्भव को सम्भव करने वाले अन्जनी नन्दन आन्जनेय लोभ, मोह और माया आदि से पूर्णतया परे है।"[2] दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते है कि हनुमान जी जिस कर्म क्षेत्र में जन्म लेकर एवं ऐसे अद्वितीय उदाहरण बन गये है जिसका कोई शानी नही है क्योकि इस संसार में कोई भी प्राणी लोभ, मोह और माया के बन्धन से अछूता नही रहा है। पृथ्वी, पाताल समुद्र और आकाश सभी स्थानो में अबाध गति से चलने वाले अन्जनी नन्दन आन्जनेय भाव – भय का नाश करते हुये जानकी जीवन श्री राम चन्द्र जी के साथ रहकर सदैव उनकी सेवा में लीन रहते है।

---

1 – श्यामगाताग्रणी, कामतेजाग्रणी, रामहित, रामभक्तानुवर्ती
जयति संग्रामजय, रामसंदेहसहर, कौशला – कुशल – कल्याण भाषी
विनय पत्रिका 42 / 27 / 3 / 4

2 – जयति सौमित्रि रघुनन्दनान्दकर , ऋक्ष कपि कटक संकट विधाई।
बद्ध बारिधि सेतु अमर मंगल हेतु , भानुकुल केतु रण विजय दाई।।
विनय पत्रिका – 38–6–7

हनुमान जी यह नही चाहते है कि मेरे रहते हुये मेरे स्वामी भगवान राम को भक्तों का दुःख देखना पड़े। हनुमान जी की अनन्य निष्ठा केवल अपने आराध्य पर ही है। आनन्द स्वरूप परात्पर प्रभु श्री राम के नाम रूपी लीला धाम में तथा सीता और राम में कोई भेद नही है, अतः हनुमान जी लोभ, मोह, माया से बचने के लिये "राम चरित सुनिबे को रसिया" होने के नाते यह याचना भगवान राम से की ।

यावद् रामकथा बीर चरिष्यति महीतले।
तावच्छरी रे वत्स्यन्तु प्राणा मम न संशयः।।[1]

इस प्रकार हनुमान जी प्रभु राम की लीला विभूति का अनुभव करते हुये उनकी लीला के रस का निरन्तर सेवन कर संसारिक मायाजाल से विरत् रहते है।

भक्त हितैषी , भैषज्य के अद्वैतदर्शी –

दिन घड़ी पल त्रिगुणात्मक ज्ञाता प्रारब्ध (सत् , रज, तम) कर्म ज्ञाता (प्रारब्ध, संचित, क्रियमाण) और माया का नाश करने वाले यंत्र, मंत्र, तंत्र और अविचार के जानने वाले एकादश रूद्रों में श्रेष्ठ जगत् पूज्य ज्ञानियों में अग्रगण्य भीष्म, द्रोणाचार्य और कर्ण आदि से रक्षित काल की दृष्टि के समान भयानक दुर्योधन की सेना कोगास के मुख्य कारण ग्रह प्रेत बाधा रोग बाधा आदि का नाश करके भक्तों में सुखों की पयस्वनी बहाने वाली भक्तों के भैषज्य के अद्वैतदर्शी अन्जनी नन्दन आन्जनेय से बढ़कर अन्य कोई परम भक्त हिन्दी राम काव्य में मिल पाना नितान्त दुष्कर है।[2] बह्म लोक तक के समस्त भोग ऐश्वर्यो से विरागी जीवन व्यतीत करने वाले मन वचन और कर्म से सत्य रूपी धर्म के व्रत का पालन करने वाले गरूण के बल, बुद्धि और वेग के बड़े भारी गर्व को खर्व करने वाले तथा कामदेव का नाश करने वाले बालब्रह्मचारी हनुमान जी के अतिरिक्त हिन्दी राम काव्य में अन्य कोई पात्र नही हुआ। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के प्रदाता संसारिक आवागमन से मुक्त कालजयी द्वति भीति से परे सदैव राम पद पंकज सेवारत हनुमान जी द्वैत – अद्वैत दोनो से परे होकर सदैव श्री राम की सेवा में लीन रहते है। इस प्रकार हम तुलसी के राम काव्य में जितनी गहराई तक जाते हैं , हम पाते है कि आन्जनेय जैसा ज्ञानवान, वैराग्यवान, प्रतिभावान, दयावान, मूर्तिमान, प्रकाशमान, देदिप्यमान, प्रज्ञावान अन्य कोई पात्र नहीं है।

तुलसीदास पर आंजनेय का प्रभाव–

संतो का मत है , कि जीव का परमकल्याण भगवान की भक्ति में ही है। समस्त प्राणियों को भक्त एवं सन्त बनाना ही सन्तो का लक्ष्य रहा है। सभी धर्मो की सफलता ही भगवान की भक्ति में ही है। परन्तु यह किसी बड़े सौभाग्यशाली साधक को ही प्राप्त होती है।

---

1 – बाल्मीकि रामायण 7–51–56
2 – जयति भीमार्जुन व्याल सूदन गर्वहर, धनंजय रथ त्राण केतू ।
भीष्म द्रोण कर्णादि – पालित, कालद्वक सुयोधन चूम निधन हेतू ।।
विनय पत्रिका 28 / 3

इसलिए सभी लोग भक्ति मुक्ति प्राप्त नही कर पाते। जगत् में आदि कवि हुए बाल्मीकि और आदि काव्य हुआ उनके द्वारा रचित बाल्मीकि रामायण पर उसका भी प्रसार संस्कृत भाषा में होने के कारण जब कुछ सीमित सा होने लगा तो भगवान की कृपा से गोस्वामी तुलसीदास जी का प्राकट्य हुआ। जिन्होंने सरल सरस हिन्दी भाषा में मानस की रचना की। उन दिनों मध्यकाल में भारत की परिस्थिति बड़ी विषम थी। वेद पुराण शास्त्र जलाये जा रहे थे। धर्म प्रेमी निराश से हो गये थे। तभी भगवान की कृपा से श्री रामानन्द जी के सम्प्रदाय में महाकवि का प्रादुर्भाव हुआ था।

किंवदन्ती और जनश्रुत के अनुसार बारह महीने तक कवि माता हुलसी के गर्भ में रहकर अमुक्त मूल नक्षत्र में जन्म लेने वाले बालक तुलसीदास रोये नहीं। उनके मुख में बत्तीसों दाँत मौजूद थे, और जन्म लेते ही सर्वप्रथम उनके मुँह से राम शब्द निकला था। अमंगल की आशंका से भयभीत होकर दशमी की रात को श्रावण शुक्लपक्ष उस नवजात शिशु को उसकी माँ ने अपनी दासी के साथ उसके ससुराल भेज दिया, और ठीक उसके दूसरे दिन संसार से चल बसी। चुनिया नाम की दासी ने साढ़े पाँचवर्ष तक बालक तुलसीदास का लालन पालन किया, तत्पश्चात वह भी अपना पंच भौतिक शरीर त्याग कर इस संसार से विदा हो गई। अनाथ बालक तुलसीदास दर बदर भटकनें लगा। एक दिन जगजननी पार्वती को इस होनहार बालक पर दया आई वह प्रतिदिन एक गरीब ब्राह्मणी का भेष धारण कर उसके पास आती और मातृत्व स्नेह से अपने हाँथो भोजन कराकर अदृश्य हो जाती थी।

महात्मा तुलसीदास की जाति के सम्बन्ध में भी मतभेद है। कोई उन्हें सरयूपारी, कोई सनाढ्य और कोई कनौजिया बताते है। स्वयं तुलसीदास जी ने इस विषय में जो कुछ लिखा है, वह परस्पर विरोधी कथन सा प्रतीत होता है। कभी तो वे कहते है, मेरी कोई जाति पाँति नही है और न मै किसी के काम का हूँ , और न कोई मेरे काम का है।[1] कभी कहते है, कि यदि लोग मुझे बुरा कहते तो कहा करे, मुझको इसका कोई दुःख नही, क्योकि मुझे सामाजिक बन्धन में बँधना ही नही है।[2]

---

1 – मेरे जाति पॉति न चहौ काहू की जाति पॉति।
मेरे कोऊ काम को न हौ काहू के काम को।।
(कवितावली छन्द 107)

2 – लोग कहै पोच सो न सोच न संकोच मेरे।
ब्याह न बरेखी जाति पॉति न चहत हौ।।
(विनय पत्रिका छन्द 76)

तुलसीदास जी भले ही उच्च कुल में जंन्में हो उनका बाल्यकाल अत्यंत दुःखमय बीता। उनको द्वार द्वार दैन्य प्रदर्शन करना पड़ा।[1] और चार चनों को चार फल मानना पड़ा।[2] उनकी स्थिति यह थी कि उन्होंने खौची भर अन्न माँगकर खाया था। और राम के भरोसे ही जिये थे।[3] यही कारण था कि स्वावलम्बी हो गये थे। उनका स्वभाव ही ऐसा वन गया था, कि बंधु बांधवो आदि पर न तो भरोसा करते थे, और न ही किसी से दुश्मनी करते थे। वे राम नाम से जुड़े व्यक्ति को सर्वोत्तम व्यक्ति की संज्ञा देते थे। इससे सिद्ध होता है, कि इसी तथ्य को लेकर तुलसीदास जी ने राम चरित मानस में सर्वप्रथम "सियाराम मै सब जग जानी , करउँ प्रनामु जोरि जुग पानी"को सर्वप्रथम उद्धरित किया है। यह चौपाई उनके द्वारा उद्वैलित लोकमंगल की भावना को व्यक्त करती है। लोगोंके विशेष आग्रह पर दाम्पत्य सूत्र बन्धन को स्वीकार कर सामाजिक जीवन की राह पर चलने के लिए वे तत्पर तो हो गये, लेकिन अपनी असीम प्रेमशवित के कारण जीवन साथी द्वारा फटकार लगाने पर गृहस्थ जीवन त्याग कर "राम पदार बिंद अनुरागी" हो चले। वो काशी के प्रहलाद घाट पर गृहस्थ भेष छोड़ कर साधुभेष में अयोध्या पुरी, रामेश्वर, द्वारिका, बद्रीनारायण, मानसरोवर आदि स्थानो से तीर्थाटन करते हुए पहुँचे। वे काशी के प्रहलाद घाट पर प्रतिदिन बाल्मीकि की रामायण की कथा सुनने जाया करते थे। वहॉ एक विचित्र घटना घटी थी तुलसीदास जी प्रतिदिन नित्य नैमित्कि किया करने जंगल में जाया करते थे। लौटते समय जो अवशेष जल होता, उसे एक पीपल के वृक्ष के नीचे गिरा देते। उस पीपल पर एक प्रेत रहता था। उस जल से प्रेत की प्यास मिट जाती थी। जब प्रेत को मालूम हुआ कि ये महात्मा है, तब एक दिन प्रत्यक्ष होकर उसने कहा कि तुम्हारी जो इच्छा हो कहो मै उसे पूरी करूँगा। तुलसीदास जी ने कहा कि मै भगवान राम का दर्शन करना चाहता हूँ। प्रेत ने कुछ सोचकर कहा कि, कथा सुनने के लिए प्रायः हनुमान जी कोढ़ी के वेष में आते है। वे सबसे पहले आते है, और सबसे पीछे जाते है। समय देखकर तुम उनके चरण पकड़ लेना और हठ करके भगवान का दर्शन कराने का अनुरोध करना। तुलसीदास जी ने वैसा ही किया। श्री हनुमान जी ने कहा, कि तुम्हे चित्रकूट में भगवान के दर्शन होंगे, वही से तुलसीदास जी ने चित्रकूट की यात्रा प्रारम्भ कर दी।

---

1 – द्वार – द्वार दीनता कहि काढ़ि रह परि पाहूँ।

(विनय पत्रिका छन्द 275)

2 – बारेंते ललात बिललात द्वार द्वार दीन

जानत हो चारि पल चारि ही चनन को

(कवितावली छन्द 73)

3 – खाई खोंची मॉगि मै तेरो नाम लिया रे।

तेरे बल बलि आजु लौ जगि जागि जिया रे।।

(विनय पत्रिका छन्द 33)

चित्रकूट पहुँचकर वे मंदाकिनी के तट पर रामघाट पर ठहर गये। वे प्रतिदिन मंदाकिनी में स्नान करते मंदिर में भगवान का दर्शन करते रामायण का पाठ करते और निरन्तर भगवान के नाम का जप करते। एक दिन वे प्रदक्षिणा करने गये। मार्ग में उन्हें अनूप रूप भूप शिरोमणि अनंत ब्रह्माडं नामक कोटि काम कला विजेता भगवान राम क़े दर्शन हुए। उन्होंने देखा, दो बड़े ही सुंदर राजक़ुमार दो घाड़ों पर सवार होकर शिकार खेलने जा रहे है। उन्हे देखकर तुलसीदास मंत्र मुग्ध हो गये। परन्तु ये कौन है – यह नही जान सके। पीछे से हनुमान जी ने उन्हें धैर्य दिया कि प्रातः काल फिर दर्शन होगें। तब कही जाकर तुलसीदास को आत्मसंतोष हुआ। परन्तु जिज्ञासा वश रात्रि में दर्शन की लालसा की आशा में निद्रादेवी के आगोश में नही आ सके।

संवत 1607 मौनी अमावस्या बुधवार को प्रातः काल गोस्वामी तुलसीदास पूजा के लिए चन्दन घिस रहे थे। तब भगवान राम और लक्ष्मण ने आकर उनसे तिलक लगाने को कहा। हनुमान जी ने सोचा, कि शायद इस बार भी तुलसीदास जी न पहचाने इसलिये उन्होंने तोते का वेष धारण कर चेतावनी के रूप में यह दोहा पढ़ा।

चित्रकूट के घाट में भई सन्तन की भीर।
तुलसीदास चंदन घिसै तिलक देत रघुवीर।।

इस दोहे को सुनकर तुलसीदास अतृप्त नेत्रों से भगवान की मनमोहिनी, लुभावनी, सुहावनी, लावण्य मयी छवि सुधा का पान करने लगे। देह की सुधि भूलकर आँखो से प्रेमाश्रुधारा बह चली। भगवान ने कहा, बाबा मुझे चंदन दो परन्तु भगवान की उस रूप माधुरी को देखकर तुलसीदास जी बेसुध हो गये थे तब भगवान ने स्वयं अपने हाथ से तुलसीदास के ललाट में चंदन का तिलक किया और अंर्तध्यान हो गये। तत्पश्चात पीन की मीन की भाँति तड़पते हुए विरी वेदना में आकुल हो गये। सारा दिन बीत गया परन्तु तुलसीदास जी को अपनी देह क़ा मान नही रहा। रात में आकर हनुमान जी ने उनको जगाया और सांत्वना प्रदान की। उन दिनों तुलसीदास की बड़ी ख्यात हो गयी थी। उनके द्वारा कई चमत्कारिक घटनाये भी हुयी , जिसके कारण लोग उनके दर्शन करने आने लगे। परन्तु इन सबके पीछे हनुमान जी की असीम अहैतुकी अनुकम्पा थी।

संवत 1616 में जब तुलसीदास जी कामदगिरि के पास निवास कर रहे थे, तब श्री गोकुल नाथ जी की प्रेरणा से सूरदास जी उनके पास आए। उन्होंने तुलसीदास जी को सूरसागर ग्रंथ दिखाया, दो पद गाकर सुनाये उस लालित्य पदावली , शब्दावली को सुनकर तुलसीदास के ह्रदय की अवलि अलि प्रसन्नता से भर गई। उन्होंने पुस्तक को ह्रदय से लगाया और सूरदास जी का ह़ाँथ पकड़कर उन्हें संतुष्ट किया। तत्पश्चात सात दिन तक सत्संग करने के बाद वो वापस लौट गये।

जगजननी पार्वती की इस अहैतुकी कृपा से अविभूत तुलसी पर भगवान शंकर की कृपा हुई और उनकी प्रेरणा से राम शैल पर निवास करने वाले श्री अनंतानंद जी के प्रिय शिष्य नरहंयानंद जी ने इस बालक को खोज निकाला और उन्होंने इसका रामबोला नामकरण किया। संवत् 1561 माघ शुक्ल पंचमी के दिन नरहंयानंद जी ने अयोध्या ले जाकर उनका यज्ञोपवीत संस्कार कराया। बिना दीक्षित किये ही बालक रामबोला ने गायत्री मंत्र का स्पष्ट उच्चारण किया। इस पर उपस्थित विद्वत जन

समुदाय भौचक्का रह गया। बालक रामबोला इतनी प्रखर बुद्धि का था, कि गुरू एक बार जो भी कहते, उसे कंठस्थ हो जाता था। कुछ दिनों के पश्चात वे (गुरू, शिष्य) वहाँ से सुकर क्षेत्र पहुँचे। वहाँ पर उन्होंने रामबोला को राम चरित्र सुनाया, इसके पश्चात काशी आकर तुलसीदास जी ने पन्द्रह वर्ष तक वेद वादांग का अध्ययन किया।

संवत् 1583 में भारद्वाज गोत्र की सुन्दर कन्या से उनका विवाह हुआ। यहीं से उनकी जिन्दगी में एक अचानक मोड़ आता है। पत्नी के ससुराल चले जाने पर उसके अलगाव को सह सकने में असमर्थ विकशल रूप धारण किये, यमुना की बाढ़ की परवाह न करते हुये, तुलसीदास जी ससुराल जा पहुँचे। इस तीव्र देहाशक्ति को देखकर उनकी पत्नी ने उन्हें कुछ तीखे शब्दों से आहत किया। उसने कहा था कि, जितना मेरे इस अस्थि पंजर शरीर के बाह्य आकर्षण में अवलिप्त हो, यदि उतना ही श्री राम के कमल रूपी चरणों में अवलिप्त हो जाते तो दुःख सागर से बेड़ा पार हो जाता। यह वाक्य मानो तुलसीदास जी के लिए वरदान दिया गया हो, उन्ही पैरों लौटकर तुलसीदास जी ने अपना सम्पूर्ण जीवन राम को समर्पित कर दिया।

कहते है, जब ईश्वर कृपा करना चाहता है, सहैतुकी स्थिति उत्पन्न कर देता है जो एक कारण मात्र होती है। कर्ता तो ईश्वर ही होता है। साधु वेष धारण करके तुलसीदास तीर्थाटन करते हुए काशी पहुँचे। मानसरोवर के पास उन्हें काकभुशुण्डि के दर्शन हुए। अनेक प्रश्नों के समाधान के पश्चात् काकभुशुण्डि जी ने तुलसीदास जी को संक्षेप में राम चरित्र सुनाया जिसको प्रेरित करने में हनुमान जी की मुख्य भूमिका थी। काशी में प्रहलाद घाट पर एक ब्राहमण के घर तुलसीदास जी ने निवास किया। वहाँ उनकी कवित्व शक्ति स्फुरित हो गई और वह संस्कृत में रचना करने लगे। यह एक अद्भुत बात थी, कि दिन में वे जितनी रचनाए करते थे, रात में वे सबकी सब रचनायें गायब हो जाती थी। यह घटना रोज घटती , परन्तु वे समझ नही पाते थे , कि मुझे क्या करना चाहिये।

आँठवे दिन तुलसीदास जी को स्वप्न हुआ। भगवान शंकर ने कहा कि, तुम अपनी भाषा में काव्य रचना करो। नींद उचट गई तुलसीदास जी उठकर बैठ गये। उनके ह्दय में स्वप्न की आवाज गूँजने लगी। उसी समय भगवान शिव और माता पार्वती दोनो ही उनके सामने प्रकट हुए। तुलसीदास जी ने उनको साष्टाँग प्रणाम किया। शंकर जी ने तुलसीदास जी से कहा, भक्त अपनी मातृभाषा में काव्य रचना करो। संस्कृत क्लिष्ट शब्दावली की भाषा है। यह भाषा सामान्य जनमानस की बुद्धि से परे है। जिससे सबका कल्याण हो वही करना चाहिये। इसलिये तुम अयोध्या जाकर वही काव्य रचना करो। मेरे आर्शीवाद से तुम्हारी यह कृति सामवेद के समान सफल होगी। इतना कहकर अर्न्तध्यान हो गये। तत्पश्चात उनकी कृपा की प्रशंसा करते हुए तुलसीदास जी अयोध्या पहुँचे। वहाँ उन्हें संसारिक चिन्तायें बिल्मु स्पर्श नही कर पाती थी। संवत् 1631 में चैत शुक्ल रामनवमी के दिन प्रायः वैसा ही योग जुट गया था , जैसा कि त्रेता में राम जन्म के समय था। उस दिन प्रातःकाल हनुमान जी ने प्रकट होकर तुलसीदास जी का अभिषेक किया। शिव, पार्वती, गणेश, नारद और शेष ने आर्शीवाद दिये। और सबकी कृपा और आज्ञा प्राप्त करके श्री तुलसीदास जी ने श्री राम चरित मानस की रचना प्रारम्भ की। दो वर्ष

सात महीने छब्बीस दिन में रामचरित मानस की रचना समाप्त हुई । संवत् 1633 अगहन मास के शुक्ल पक्ष में राम विवाह के दिन सातो काण्ड पूर्ण हो गये।

यह कथा पाखण्डियों के प्रपंच को मिटाने वाली है, पवित्र सात्विक धर्म का प्रचार करने वाली है। कलि काल के पास कलाप का नाश करने वाली है। भगवत्प्रेम की छटा को छिटकाने वाली है। भगवत्प्रेम श्री शिव जी की कृपा के अधीन है, इस रहस्य को बताने वाली है। जो कि यह समस्त पुण्यों का भण्डार है। राम चरित मानस की समाप्ति मंगलवार को हुई थी। इसलिए हर काण्ड के अन्त में " **शुभमिति हरिः ओम् तत्सत्** "। देवताओं ने जय – जयकार की ध्वनि की और फूलों की वर्षा की।

एक दिन हनुमान जी ने स्वप्न में तुलसीदास जी से कहा, कि मनुष्य लोक में इस ग्रन्थ की कथा को सुनने के अर्हपात्र मिथिलापुर के संत श्री रूपारूण स्वामी जी है। वे निरंतर राम भाव में निमग्न रहते है, और राम जी को अपना दामाद समझ कर प्रेम करते है। अतः उन्हीं को इस राम चरित मानस की कथामृत का पान कराओ। हनुमान जी की आज्ञा पाकर गोस्वामी जी ने उनको रामचरित मानस सुनाया इसके बाद अनेकानेक लोगो ने राम चरित मानस की कथा सुनी। उन्ही दिनों भगवान की आज्ञा हुई कि तुम काशीवास करो। तुलसीदास जी ने वहाँ से प्रस्थान किया और काशी में आकर रहने लगे, मानस के प्रचार से काशी के संस्कृत पण्डितों के मन में बड़ी चिन्ता हुई। उन्होंने गोस्वामी जी पर निन्दा करना शुरू किया और पुस्तक को नष्ट करने का उपाय सोचने लगे। पण्डितों ने पुस्तक को चुराने के लिए दो चोर भेजे, लेकिन चोरों ने देखा कि कुटिया के आस पास दो वीर बालक अद्वितीय देह कांति से युक्त धनुषबाण लिए हुए पहरा दे रहे है।चारों को श्री भगवान के दर्शन हो गये उनकी बुद्धि सुधर गई। पुस्तक न लाने में उन चोरों से हताश होकर पंण्डितो ने प्रसिद्ध तांत्रिक बटेश्वर मिश्र से प्रार्थना किया। कि तुलसीदास जी का किसी प्रकार अनिष्ट होना चाहिए , उन्होंने मारण मंत्र का प्रयोग किया और भैरव को भेजा। भैरव तुलसीदास के आश्रम गये वहाँ हनुमान जी को तुलसीदास की रक्षा करते देखकर वे भयभीत होकर लौट आये। मारण का प्रयोग करने वाले बटेश्वर मिश्र के प्राणों पर ही आ बीती , इस प्रकार हनुमान जी के प्रेरणा से तुलसीदास उत्तरोत्तर मार्ग दर्शन प्राप्त करते रहे।

ऐसा प्रतीत होता है कि चित्रकूट में उनके ज्ञान चक्षु खुले थे। विनय पत्रिका के पद के आधार पर "अब चित चेति चित्रकूटहि चलु" से स्पष्ट होता है, ऐसे कलि प्रभावित समय में जहाँ कल्याण पथ मुक्त है, और मोह माया का बल बढ़ रहा है ऐसे कलि प्रभावित समय से विलग हो जाना ही श्रेयष्कर है। और बिलगाव के पश्चात राम की शरण के अतिरिक्त अन्य कोई जगह उपयुक्त नही हो सकती है। तुलसीदास जी की सम्मति में यदि राम से सच्चा स्नेंह चाहिए तो प्रेम पूर्वक चित्रकूट में निवास करना चाहिए।[1]

---

1 – तुलसी जो राम सो सनेहुँ साँचो चाहिए तौ।
सेइये सनेह सो विचित्र चित्रकूट सो।।
(कवितावली उत्तरकाण्ड छन्द 141)

तुलसीदास जी को काशी के कारण गंगा जी भी विशेष प्रिय थी। उन्होंने कहा है कि गंगा जल पान करता हूँ और राम का नाम लेकर उदर पूर्ति करता हूँ।[1] कहते है इसके पीछे हनुमान जी का हॉथ था। उन्होंने ही तुलसीदास जी को प्रहलाद घाट पर निवास बनाने की प्रेरणा दी थी। यद्यपि महात्मा तुलसी ने अपने जीवन में नाना प्रकार की कठिनाइयाँ झेली थी । ऐसा उनके ग्रन्थों में दिए गये संकेतो से स्पष्ट होता है। फिर भी उन्होंने पर्याप्त यश अर्जित किया। जो तुलसी वन को घास की घास के समान थे, राम नाम जपने के कारण तुलसीदास हो गये। तुलसीदास जी की कुछ व्याधियों के निवृन्ति में हनुमान जी की विशेष कृपा हुई थी। रोग समाप्त के पश्चात तुलसीदास हनुमान जी की भूरि – भूरि प्रशंसा करते हुए कहते है। यह रोगों की फौज अन्जनी नन्दन आन्जनेय की कृपा से समाप्त हुई। गहन अनुशीलन करने पर यह तथ्य सामने उभर कर आता है, कि तुलसी साहित्य की प्रखरता को लाने में हनुमान जी का मुख्य श्रेय है। तुलसी साहित्य से उनके जीवन के आंतरिक और बाह्य दोनो पक्षों पर प्रकाश पड़ता है। यदि कहा जाय कि उनके जीवन और साहित्य दोनों में बिम्ब प्रतिबिम्ब भाव है, तो अतिशयोक्ति नही होगी। उनके साहित्य का अध्ययन करने वाला कोई भी सजग पाठक स्थल स्थल पर उनके जीवन की झलक पाकर उनकी महत्ता से परिचित हो सकता है।रामबोला को संत तुलसीदास तक पहुँचाने का श्रेय अन्जनी नन्दन आन्जनेय को है। यही कारण है, कि सर्वप्रथम तुलसीदास जी ने अपने रामकाव्य में हनुमान जी की वंदना की है। इसी परिप्रेक्ष्य में भगवान शिव, पार्वती शेष लक्ष्मण, भरत की वंदना के पश्चात् विनय पत्रिका में वंदना के हनुमान जी की वंदना सबसे अधिक दस पदों में की है। इसलिये तुलसीदास जी पर आन्जनेय का प्रभाव अमिट है।

---

1 – भागीरथी जलपानु करौ।
अरू नाम द्वै राम के लेत निते हौ।।
(कवितावली छन्द 102)

(घ) तुलसी की दृष्टि में आराध्य राम एवं आध्यात्मिक आञ्जनेय ÷

परमार्थ वादी मुनियों का मत है, कि राम परमार्थ रूप है।[1] नित्य और उनका अंश होने के कारण जीव की सत्ता भी परमार्थिक ही है। तुलसी ने उसे राम के रूप में परमार्थ रूप और परम्तत्वमय ही कहा है। राम ही तुलसी के मुख्य प्रतिपाद्य है। कही – कही शिव से भी उनका अभिप्राय राम से ही है।[2] राम का स्वरूप भवातीत, अगाध और अप्रमेय है। वे ऐसा मानते है। तुलसी का मत है, कि मेरे आराध्य राम वचन, अगोचर, बुद्धिपर अविगत, अनिर्वचनीय और अपार है। श्रुति नेति – नेति के द्वारा ब्रह्म का निरूपण करती है। तदनुसार तुलसीदास ने भी राम की अनिर्वचनीयता का प्रतिपादन किया है। जिसकी कोई माप नही है। थाह नही है, जो ज्ञानातीत और कल्पना से परे है, उनके स्वरूप का निरूपण कैसे हो सकता है। इस पर तुलसीदास का उत्तर अपने आराध्य राम के बारे में यह है, कि जो बखान हुआ है वह वेद आदि के द्वारा यथा शक्ति किया गया बौद्धिक अनुमान है, तथा मुनिजनों का बुद्धिबिलास है। राम का निरूपण करते समय तुलसीदास ने बताया है, कि राम जीव और जगत के परम प्रकाशक है।[3] यह भी उनकी चिनमयता का प्रतिपादक है। तुलसी के आराध्य राम परमानन्द, निर्भरानन्द, सहज आनन्द निधान, आनन्द भवन आदि नामों से सुशोभित है और उनके इसी रूप की तुलसी ने अभिव्यक्ति भी की है।[4] यद्यपि तुलसी ने निर्गुण या अगुण और सगुण शब्दों का निराकार तथा साकार के अर्थ में भी व्यवहार किया है, तथापि वे निराकार और साकार की भाँति प्रतियोगी शब्द नही है। क्योंकि तुलसी का निर्गुण निराकार मात्र या सगुण साकार मात्र नहीं है। तुलसी की दृष्टि में तत्वतः निर्गुण और सगुण में कोई भेद नही है।[5] अभिनव गुप्त ने कहा है, कि यदि महेश्वर एक रूप से स्थिर रहता है, तो वह भी घट आदि की भक्ति महेश्वरत्व एवं संवित्व से रहित हो जाता है।[6] राम कथा साहित्य के कवि तुलसी ने पद्म पुष्प सरोवर के सादृष्ट द्वारा उपपत्ति पूर्वक राम के सगुण रूप माधुरी का चिन्ताकर्षक वर्णन किया है। तुलसीदास ब्रह्म को स्वभावतः निराकार मानते है या साकार ? रामानुज, महत्व और निम्बार्क ने ब्रह्म के स्वभाविक निराकार को स्वीकारा है।[7] किंतु बल्लभ संप्रदाय के अनुसार वह स्वभावतः आकार है। तुलसीदास में दोनों ही संप्रदायो का समन्वय है। नाम और रूप को उनकी उपाधि मानकर उन्हें अनाम, अरूप, अव्यक्त एवं निराकार कहकर उन्होंने पहली धारणा का समर्थन किया है।[8] और अनेक नाम सर्वरूप व्यक्त, विश्व विग्रह, बैकुण्ठ निवासी पयोनिधिवासी आदि कर दूसरी धारणा का समर्थन किया है।

---

1 – रामायण 1/108/3 , 2/93/4, विष्णु पुराण 1/15/55, गीता 2/39, तैतरीय उपनिषद् 2/9
2 – रामायण 3/15 विष्णु का एक नाम शिव है। (विष्णु पुराण सहत्रनाम /7)
3 – सब कर परम प्रकाशक जोई , राम अनादि अवधपति सोई।
जगत प्रकाश प्रकाशक रामू , मायाधीश ज्ञान गुन धामू। रामायण 1/117/3.4
4 – ब्रह्म सूत्रो के वैष्णों भाष्यो का तुलनात्मक अध्ययन पृष्ठ 229/30
5 – अगुनहि सगुनहि नहि कुछ भेदा । गावहि मुनि पुराण बुध वेदा ।।
6 – अगुन अरूप अलख अज सोई । भगत प्रेम बस सगुन सो होई ।। (रामायण 1/116/1)
7 – ब्रह्मसूत्र 3/1/14 ब्रह्मसूत्रो के वैष्णव भाष्यों का तुलनात्मक अध्ययन पृष्ठ 232
8 – रामायण 1/21/1, 1/13/2, 1/22/1, 7/72/3, विनयपत्रिका 93/3, 50/3, 55/7

राम चरित मानस के सुतीक्ष्ण अगस्त्य संवाद और वेदों की उक्तियों से भी यह सिद्ध होता है, कि तुलसी को राम की निराकार स्वरूपता भी मान्य है, किन्तु वे उनके साकार रूप को ही अजनीय समझते है। अपनी विनय पत्रिका में निबद्ध प्रार्थना उन्होंने स्वभावतः साकार राम की ही सेवा में निवेदित की है। इस अभाषित विरोध का परिहार यह है, कि राम केवल अनुभव ग्रन्थ है – राजयोगी, ज्ञाननिष्ठ, निर्गुणोंपासक उनका अनुभव निराकार रूप में करता है। और भक्ति मार्गी भावनिष्ठ सगुणोपासक अपनी भावानुसार आकार रूप इस प्रकार बोपदेव द्वारा प्रतिपादित साकार विष्णु का चतुर्विधित्व तुलसी को मान्य नहीं है। इस प्रकार राम का अवतार चरित्र उन्हें सर्वश्रेष्ठ प्रतीत हुआ, अतएव राम चरित मानस आदि में उनके लीला कथानक का उन्होंने व्यास शैली में निवंधन किया है। तुलसी ने निर्गुण निराकार राम की अपेक्षा साकार राम की भक्ति को गौरव दिया, इसके भी कई कारण थे।

(क) – राम का सगुण रूप इतना मनमोहक है, कि विदेह जनक का निर्गुण रूप में लीन बीतरागमन उन्हें देखते ही ब्रह्म सुख को बरबस त्याग कर उनमें अनुरक्त हो गया, इसीलिए तुलसी ने राम की जितनी भी स्तुतियाँ की या करायीं उन सबमें उनके सगुण रूप पर ही विशेष बल दिया है।

(ख) – सगुण के ज्ञान के लिए निर्गुण का ज्ञान आवश्यक नही है। किंतु निर्गुण ज्ञान के लिए सगुण ज्ञान आवश्यक है।

(ग) – वैष्णव वेदान्तचार्यो की दार्शनिक मीमांसा धर्मानुकूल लोकोपयोगी होने के कारण अधिक ग्राह्य थी।

(घ) – भगवान के सगुण रूप को निर्गुण से श्रेष्ठ मानते हुए भी तुलसीदास जी निर्गुण के विरोधी नही है। गोपियों के मुख से निर्गुण की जो तुलसी ने करायी है उसका कारण उद्धव के द्वारा, पात्रा पात्र का विचार किये बिना ही ब्रजबालाओं पर लादा गया अवांछनीय ज्ञानोपदेश है। कवि के मन में निर्गुण के प्रति कोई तिरस्कार भावना नही है।

(ङ) – तत्कालीन हिन्दी साहित्य की भक्ति धाराओं का भी प्रभाव कम नही है। वैष्णव भक्ति धाराओं मे कवि सगुण भक्ति के प्रति भावात्मक प्रेरणा थी। वेद विदूषक निर्गुणियाँ संतो तथा प्रेम मार्गी सूफियों की निराकारोपासना ने उद्दीपन का कार्य किया।

(च) – सगुणोपासना के द्वारा पुराण निगमागम संमत वैष्णव, शैव, शाक्त आदि साधनाओं का सुगमता के साथ समन्वय भी हो जाता है। तुलसीदास ने राम चरित मानस में इसी विचारधारा समन्वय को व्यक्त किया है।

(छ) – केवलाद्वैत वादी वेदांतियो ने ब्रह्म को परमार्थतः निर्गुण माना है। शुद्धाद्वैत वादियों का मत है, कि ब्रह्म परमार्थतः सगुण है। कबीर अपने राम को निर्गुण और सगुण से परे मानते है। तुलसी के राम एक साथ ही निर्गुण सगुण दोनो है। उनकी दृष्टि में राम के दोनो ही रूप वास्तविक तथा परमार्थिक है।

(ज) — मनोवैज्ञानिक दृष्टि से स्वभाव का चंचल मन को निरूद्ध करके निर्गुण निराकार ब्रह्म पर एकाग्र करना दुःसाध्य है। " निर्गुण मन ते दूरि है " उसको टिकाने के लिए कोई निश्चित आधार होना चाहिये। सगुण ब्रह्म के नाम, रूप, गुण और लीला तथा धाम से नेत्र, कर्ण आदि अनेक इन्द्रियों की तुष्टि हो जाती है। अतएव निर्गुणोपासना में किये गये इन्द्रियोंदमन की अपेक्षा सगुणोपासना में किया गया चित्तवृत्तियों का उदारीकरण कम कष्ट साध्य एवं निर्गुण रूप सुलभ है।

(झ) — दूसरी दृष्टि से, भगवान का निर्गुण रूप सुलभ है। सगुण रूप तो कोई विरला ही समझ पाता है। इस कठिनाई का ईश्वर विषयक कारण है। उनकी अवतार लीला की विचित्रता और रहस्यमयता। भाव विषयक कारण है। मानस रोग, गृहसभ्यता। उसमें श्रद्धा की कमी तथा भगवत् कृपा की अपात्रता। काकभुशुण्डि का एतविषयक प्रवचन भक्त की सात्विक श्रद्धा एवं राम कृपा के महत्व का प्रतिपादन है। सगुण रूप उन्हीं मनुष्यों के लिए आगम है, जो श्रद्धारहित तथा राम कृपा से वंचित है। इस कृपा से वह अनायास ही सुलझ हो जाता है।

(ञ) — सगुण ब्रह्म का निरूपण करना इसलिए कठिन है, क्योंकि अवतार लीला विभिन्न रुपों में अनेकानेक ग्रन्थो में वर्णित है जिस पर आस्था का अड़िग कर पाना मानव मात्र के लिए अत्यन्त दुष्कर है। इसका कारण है, हर लीला की अलग – अलग विशिष्टताए है, जिनके कारण मानव मन की चंचलता का स्थिर होना नितान्त दुसाध्य है।

(ट) — आचार्य शास्त्रीय दृष्टि से निर्गुण निरकार भक्ति के अधिकारी द्विजन्मा योगी ही है। क्योकि स्त्रियों तथां शूद्रो को योग तप करने का अधिकार ही नहीं है। दूसरी ओर सगुण भवित के क्षेत्र में इस प्रकार की कोई सीमा नही है। उसका आवलम्बन सभी सामान्य ग्रहस्थ स्त्री और शूद्र भी कर सकते है।

(ठ) — निर्गुण निराकार ब्रह्म जीव की भाविक संतुष्टि नही कर सकता। उस उदासीन र्निलेप परमात्मा से आत्म कल्याण की आशा करना व्यर्थ है। त्रिताप लोक प्राणी को तो ऐसा आराध्य चाहिए, जो उसके प्रति सहानुभूति प्रदर्शित कर सके। सगुण साकार राम इसी से भजनीय है। भजन पर उनकी अपार ममता है। वो उसी की ममता का सदैव ध्यान रखते है। स्नेहमयी जननी के समान निरन्तर भक्त की रखवाली करते है।

इस प्रकार हिन्दी रामकाव्य में तुलसी ने सगुण भक्ति पर निरंतर जोर दिया है। शायद इसलिए कि सगुण राम रूप कष्ट साध्य नही है। इसी परिप्रेक्ष्य में अब हम हिन्दी रामकाव्य जो तुलसी से विशेष संदर्भित है अन्जनी नन्दन आन्जनेय की अध्यात्मिकता का यथापरक बुद्धिसम्मत विवेचन करने का एक न्यून प्रयास करेगें। यद्यपि विशेष ग्रहनता परिपूर्ण है।फिर भी यथा संभव विश्लेषण कर विषय को प्रतिपादित करेगें। भारतीय दर्शन शास्त्रों में अनेक कथाए विभिन्न भाषओं में लिखी। उन्होंने जिस प्रकार से हनुमान जी का वर्णन किया, वह तर्कसंगत है हनुमान ज़ी तो वीतराग थे। उनकी माता अन्जना भी उत्कृष्ट सती थी। हनुमान जी कर्तव्य निष्ठ थे, और श्री राम के परम अनन्य भक्त थे। श्री हनुमान जी को अन्जनी पुत्र पवनसुत, शंकर सुवन केशरी नन्दन आदि पद संत शिरोमणि कवि शिरोमणि श्री तुलसीदास जी ने श्री हनुमान जी के लिए प्रयुक्त किये है। प्रायः इसी बात पर भ्रम होता है, कि एक

साथ वे इतने व्यक्तियों के पुत्र कैसे हो गये ? किन्तु यदि यस्तु स्थिति पर विचार किया जाए तो सबका सुव्यवस्थित है। भगवान शंकर के अवतार होने के कारण वे शंकर सुवन हो गये। "आत्मा वै जायते पुत्रः" इस शास्त्र के वचनानुसार वानर राज केसरी के औरस पुत्र कहलाये।पुन्जिक नाम की अप्सरा श्राप भ्रष्ट होकर काम रूप वानरी के रूप में अवतरित हुई। एक बार वे वस्त्राभूषणों से सुसज्जित होकर पर्वत पर विचरण कर रहे थे। पवन देव ने एक सपाटे में उसकी ओर वहन किया उसने तुरन्त कहा कौन मुझ पतिव्रता का स्पर्श करके मौत का आमंत्रण कर रहा है। इस पर पवन देवता बोले ऐसी बात नही है। पृथ्वी के भार को हरण करने वाले रावण आदि असुरों को नाश करने वाले के लिए साक्षात् विष्णु भगवान अवतार ले रहे है, मै उनकी सेवा के लिए तुम्हारे उदर में पुत्र रूप में आना चाहता हूँ। पवन सुत और अन्जनी पुत्र रूप में इनकी विख्याति का यही कारण है।

हनुमन्नाम का शास्त्रीय आधार ÷

हन्+उन = हनुस्त्रीत्व पक्षे ऊङ् + हन = हनू + मतूप = हनुमत अथवा हनुमत = हनुमानू चम्पू रामायण से भी इन्द्रकृत हनुमान के हनुभंगव की पुष्टि इस प्रकार होती है इन्होंने विद्या द्वारा सूर्य का पुत्रत्व (शिष्यत्र) और जन्म द्वारा पवन पुत्रत्व प्राप्त किया। ये इन्द्र के वज्र प्रहार से हनुगंग रूप से चिह्नित हुए। और इन्हें रावण के यश रूप चन्द्रमा का शरीर धारी कृष्ण पक्ष कहते है[1] परन्तु पद्म पुराण में हनुमान नाम के विषय में विचित्र कल्पना है। हनुरूह नामक नगर में बालक हनुमान ने जन्म संसकार प्राप्त किया, इसीलिए हनुमान नाम से प्रसिद्ध हुआ।[2] आदि काव्यानुसार ब्रह्मा द्वारा प्रेरित होकर सूर्यदेव ने बालक हनुमान को अपने तेज का सौवा भाग प्रदान करते हुए आर्शीवाद दिया कि मैं इसे शास्त्र ज्ञान दूँगा जिससे यह श्रेष्ठ वक्ता होगा। शास्त्र ज्ञान में इसकी समता करने वाला भूमंडल में कोई नही होगा।[3]

अध्यात्म रामायण में हनुमान के बल और बुद्धि के परीक्षा लेने के निमित्त देवताओं द्वारा प्रेरित सुरसा समुद्र के ऊपर उपस्थित होती है। हनुमान के बुद्धि कौशल साहित्य साहस और निर्भीकता को देखकर वह स्तब्ध रह जाती है और पवनपुत्र को नमस्कार करते हुए रामकाज विषयक प्रतिज्ञा को पूरी करो वाक्य दोहराते हुए कहती है, जाओं श्री राम चन्द्र जी का कार्य सिद्ध करो।[4]

---

1 – तषन पवन मोर्यः प्राप्तवान् पुत्राभांव। शतभरव कृतपालि विहन्या जन्माना च ।।
स तु दशमुख कीतिरस्तोमसोमस्य पक्षश्चरम इव। तनु नाम प्राय रामं हनूमान।।
(चम्पू रामायण 4/10)

2 – पुरे हनुरूहे यस्माज्जातः संस्कारमाप्तवान्।
हनुमानिति तेनगात् प्रसिद्धि स मही तले ।। (पद्म पुराण)

3 – तदास्य शास्त्रं दास्यामि येन वाग्मी भविष्यति।
न चास्य भविता कश्चित् सदृशः शास्त्रदर्शने।। (बाल्मीकि रामायण 7/30/14)

4 – गच्छ साध्य समस्य कार्य बुद्धिमतांवर ।। (अध्यात्म रामायण 5/1/23)

उद्धव से ज्ञान चर्चा करते हुए भगवान श्री कृष्ण कहते है, कि यज्ञों में ज्ञान यज्ञ, पुरोहितों में वशिष्ठ युगों में सतयुग और सेवकों में हनुमान तथा कथावाचकों में वेदव्यास मैं ही हूँ।[1] गोस्वामी तुलसीदास ने मानस के आरम्भ में ही श्री सीता राम के गुण समूह रूप पवित्र बन में बिहार करने वाले विशुद्ध विज्ञान सम्पन्न कवीश्वर वाल्मीकि जी और कवीश्वर हनुमान जी की वन्दना की है।[2]

इसी प्रकार अंशों के सम्बन्ध में अन्य वेद शास्त्रों में भी प्रमाण मिलते है। जिस प्रकार उस ब्रह्म के और अनेक अंशी उत्पन्न हुए है, उसी प्रकार हनुमान जी के अंशावतार के सम्बन्ध में कुछ और अन्य उदाहरण दृष्टव्य है।

तत्वतः सम्पूर्ण सृष्टि में परम ब्रह्म परमात्मा के अतिरिक्त अन्य किसी का अस्तित्व नही है। स्थावर जंगम रूप में जो कुछ भी तत्व दृष्टि गोचर हो रहे है, वे सब ब्रह्म के प्रतीक है। विश्व का विकास उसी ब्रह्म का लीला विलास है।[3] उस एक ही अव्यय – सनातन तत्व को मेधावी लोग इन्द्र वरूण वायु आदि भिन्न भिन्न नामों से सम्बोधित करते है, उस प्रकार परमतत्व वस्तुतः अनेकता नही है।[4] जब कल्प के आदि में इस परम चैतन्य तत्व ने अपने को एकाकी देखा अनुभव किया उसमें सृष्टि के लिए संकल्पोदय हुआ और उसने कामना की मै एक हूँ , बहुत हो जाऊँ प्रजा सृष्टि करूँ।[5] तब स्वयं ही वह बहुरूप हो गया, और सृष्टि कम चला।[6] वह अमृत स्वरूप मृत्यु और परिवर्तन स्वरूप विकार से रहित तथा नित्य, सत्य परमानन्द घन है, ऐसा ब्रह्म के सनातन स्वरूप के निर्धारण के सम्बन्ध में वैदिक उक्ति है।

तंत्र-वाङ्मय में अन्जनी नन्दन आञ्जनेय –

तंत्र-वाङ्मय में हनुमान जी का सादर स्मरण किया गया है। और यहाँ पर हनुमान जी एकमुख, पंचमुख और एकादश मुख रूप में परिवर्षित है। सात्विक प्रकति होने पर भी तान्त्रिक उपासना स्तम्भन विद्वेषण उच्चाटन और मारण इन षट कर्मो में भी सिद्धि प्रदान करते है। पर षटकर्मो से यहाँ काम, कोध, मोह, मात्सर्य ये आंतरिक शत्रु ही अभिप्रत है, बाहर के सामाजिक शत्रु सम्भवतः नही। "ब्रहज्ज्योति षार्णव, धर्माकन्धान्तर्गत हनुमदुपासना " आदि तंत्र ग्रन्थों में हनुमत कवच, स्त्रोत, राहस्त्र नाम, कल्प पटल ध्यान आदि अनेक कियाओं साङैष्पांङ विवरण मिलते है। इनकी कतिपय उपासना पद्धतियाँ ऐसी भी है, जिनके पुरश्चरण सिद्ध होने पर साक्षत दर्शन अन्य देवताओं की अपेक्षा शीघ्र होते है। आपन्न, विपन्न तथा प्रपन्न जन के आकस्मिक भय संकट इनके स्मरण मात्र से दूर हो जाते है।

---

1 – सुख सागर स्कन्ध 11 अध्याय 16 पृष्ठ 1099

2 – राम चरित्र मानस (प्रथम श्लोक)

3 – सर्व खल्विदं ब्रह्म (छान्दोग्योपनिषद 3/14/5)

4 – एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति (ऋग्वेद 1/164/46)

5 – तदैक्षत् बहुस्यां प्रजायेयेति। (छान्दोग्य उपनिषद 6/2/3)

6 – तदात्मानं स्वयं कुरूत। (तैन्तिरीय उपनिषद 2/67/1)

त्रेता युग के चक्रवर्ती सम्राट दशरथ के पुत्रेष्टि यज्ञ में आमंत्रित होकर ब्रह्मा, विष्णु , महेश आदि सभी देवता उपस्थित हुए। देवताओं ने ब्रह्मा के रावण के अत्याचार के सम्बन्ध में निवेदन किया। इस प्रकार ब्रह्मा ने कहा कि उन्होंने रावण को देव दानव अवहयता का वर दे रखा है। देवताओं ने भगवान विष्णु से दशरथ के पुत्र के रूप में रावण का वध करने का निवेदन किया। और भगवान विष्णु ने उनके निवेदन को स्वीकार कर लिया।[1] तब ब्रह्मा ने उन देवताओं से अप्सराओं से तथा किन्नरियों से अपने ही समान पराकमी पुत्र उत्पन्न करने के लिए कहा और ब्रह्मा के आदेशानुसार देवताओं ने वानर संतान उत्पन्न की।[2] इसी उपकम में रूद्रावतार आन्जनेय का प्राकट्य हुआ।

शास्त्रोक्त दौत्य कसौटी पर अन्जनी नन्दन आञ्जनेय –

नाम और नामी अभेद होता है। नाम में नामी का व्यक्तित्व उसका चरित्र, गुण एवं प्रभाव सूक्ष्म रूप से अन्तर्हित हनुमान इस नाम में हनुमान जी का सम्पूर्ण व्यक्तित्व, गुण और चरित्र, पौरूष एवं प्रभाव बीज रूप से अन्तर्हित है। हनुमान शब्द हिंसा तथा गति अर्थवाली "हन" धातु में "उ" प्रत्यय और तद्वितीय "मतुष" प्रत्यय लगाने पर निष्पन्न होता है। जिसका अर्थ है – हनु (दाढ़)।

मेदिनी कोशानुसार "हनु" शब्द के कई अर्थ है – जैसे वेश्या, मृत्यु, अस्त्र तथा दोनो कपोलांग।[3] जैसे इन शब्दों में अस्त्र एवं मृत्यु ये दोनो अर्थ "हन्" धातु के हिंसा के अर्थ से सम्बन्धित है। अस्त्र में गत्यर्थ भी सम्मिलित है, तथा इस शब्द का धात्वर्थ है – क्षेपण एवं दूरीकरण।

अतः इन "हनु" के दोनों अर्थो को "मतुप" प्रत्यय के अर्थ से संयुक्त करने पर हनुमान का अर्थ होता है – अस्त्रवान एवं मृत्युवान। ये दोनो अर्थ हनुमान को प्रक्षेपण प्रहार एवं संहार की प्रचंड शक्ति से निर्दिष्ट करते है। इन्हीं नामार्थो के अनुरूप हनुमान जी सर्व संकट हर्ता, सर्व विधि भूत, प्रेत, पिशाच, ग्रह आदि बाधा के निवारक एवं असुर संहारक माने जाते है।

हनुमान चरित्र एक जीवन दर्शन है। जिसका मनन श्रवण परलोक सुधारने का अवलम्ब है ही इस जीवन में सफलता की एक महत्वपूर्ण कुंजी है, जिसके प्रयोग से जीवन मार्ग के सभी द्वार अनायास ही खुल जाते है। संसारिक जीवन में सभी को एक मित्र की आवश्यकता होती है। जो मित्र ही नही पथ प्रदर्शक भी हो, वह व्यक्ति चाहे साधारण हो, असाधारण अथवा पुरूषोत्तम हो। इस प्रकार यह तीनों आवश्यकताए अन्जनी नन्दन आन्जनेय चरित्र से पूरी हो जाती है।

---

1 – बाल्मीकि रामायण 1/15/4–33

2 – बाल्मीकि रामायण 1/17/2–8

3 – मेदिनी कोश 20/25–26

अन्जनी नन्दन आञ्जनेय का अध्यात्मिक रहस्य –

इसी कम में अब हम तुलसी साहित्य के किसी एक पात्र को लेकर हनुमान जी के अध्यात्मिक रहस्य का चिन्तन करेगें चूँकि शक्ति के बिना भक्ति पूर्ण नही हो सकती, इसीलिए अध्यात्मिक चिन्तन के परिप्रेक्ष्य में श्री हनुमान जी के सीता शोध का अध्यात्मिक रहस्य के बारे में यथामति वर्णन करेगें। अध्यात्मिक अन्तर यात्रा में हनुमान और सीता का रहस्यांर्थ पौराणिक उपाख्यान के वाच्यार्थ से पूरी तरह भिन्न है। हनुमान इस यात्रा के एक यात्री है। और सीता जी उस यात्रा का अंतिम लक्ष्य। यदि हनुमान जी साधक है, तो सीता जी साध्य है। यदि हनुमान जी योगी है, तो सीता जी योगी का लक्ष्य योग है। अन्तः पथ के यात्री हनुमान का पाथेम ज्ञान है। हनुमान वैराग्य है। ज्ञान का पाथेय लेकर वैराग्य द्वारा सीता शोध किया जाना है।

वैराग्य बिना कर्म, ज्ञान और उपासना तीनों अपूर्ण है। वैराग्य ही कर्म को भक्ति के पास, भक्ति को ज्ञान के पास एवं ज्ञान को शान्ति के पास पहुँचाता है। हनुमान वैराग्य साधना के प्रतीक है एवं वैराग्य स्वरूप है।[1]

महर्षि पंतन्जलि वैराग्य की मीमांसा करते हुए कहते है। " दृष्ट एवं आनुश्रविक भोगों से वितृष्ण चित्त का पूर्ण वशीकरण किया जाना ही वैराग्य है।[2]

गुणों से अनाशक्ति ही वैराग्य है। ज्ञान की चरम सीमा ही वैराग्य है।[3]

प्रकृति पुरूषान्यताख्याति से गुण वैतृष्ण का अविर्भाव होना ही परम् वैराग्य है।[4]

योग का मूल वैराग्य है। वैराग्य ही योग का परम साधन है। भगवान श्री कृष्ण ने गीता में जिन्हें ब्रह्म से एकीभाव प्राप्त करने का अधिकारी बताया है। उनमें वैराग्य सम्पन्न व्यक्ति की भी गणना की है। वैराग्य का लक्ष्य शान्ति है। उसका मार्ग ज्ञान है। उसका कर्तव्य कर्म शोध है। समस्त प्राणियों का अन्तिम लक्ष्य शान्ति है। श्री रामोपाख्यान में सीता ही शान्ति है। जहाँ शान्ति होगी वही पूर्णता होगी और जहाँ पूर्णता होगी वही एक रस एवं अखण्ड आनन्द होगा। अतः शान्ति समस्त प्राणियों का नैसर्गिक एवं प्रतिरक्षण प्रवृन्ति व्यापार है, क्योंकि बिना सुख के शान्ति संभव नही है।[5]

---

1 – विनय पत्रिका 58/8, 29/2

2 – योग दर्शन 1/15

3 – योग भाष्य 1/16

4 – योग भाष्य 1/16

5 – नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य न चायुक्तस्य भावना।
न चाभावयतः शान्ति रशान्तस्य कुतः सुखम।। (गीता 2/66)

शान्ति रूपी सीता जब जनकपुरी में जनक के यहाँ अवतरित हुई, तब उन्हें प्राप्त करने हेतु श्री राम को बिना आमंत्रण के भी पैदल यात्रा करनी पड़ी। उन्हें अपनी शक्ति स्वरूपा सीता के लिए भावचाप तोड़ना पड़ा। भावचाप तोड़ बिना ब्रह्म को भी शान्ति नही मिली, इसी प्रकार भव समुद्र को लांघे बिना हनुमान को सीता रूपी शान्ति नही मिली।

प्रवृत्ति मार्ग स्वरूपी लंका में मोहरूपी राजा रावण निवास करता है। वही शान्ति का अपहरण करने वाला है। समस्त संसार मोह निशा में सोता है, किंतु योगी इसमें भी जागता रहता है। और अपनी यात्रा प्रवृन्त रहता है। श्री हनुमान जी सीता शोध के लिए इसी निशा में यात्रा करते है। क्योंकि योगी के लिए संसार की रात्रि ही दिन है, और संसार का दिन ही रात्रि है।

वैराग्य स्वरूप होने के कारण आत्म विज्ञापन नही करना चाहता, कारण यह योग मार्ग के लिए समूह प्रत्यूह है। इसीलिए हनुमान जी रात्रि में यात्रा करते है। "अति लघु रूप धरौ, निशि नगर करौ पइसार" हनुमान जी का सीता शोध हेतु रात्रि में यात्रा करना साधक के लिए अन्तर साधना को पूर्णतया गोपनीय रखना है। एवं जगजामिनी में सदैव जागृत रहने का संकेत है।[1]

अध्यात्म जगत् की कोई भी अन्तर यात्रा हो किन्तु भगवान को आगे किये बिना उसमें सफलता नही मिल पाती, इसीलिए सागर संतरण के पहले हनुमान जी श्री रघुनाथ जी को याद करते है।[2] सीता और राम को, सुग्रीव श्री राम को विभीषण और श्री राम को लक्ष्मण को जीवन दान देकर श्री राम को मिलाया तथा विरह सागर में डूबते हुए भरत को मिलाने का श्रेय हनुमान जी के अलावा और किसी को नही जाता। शान्ति की प्राप्ति हेतु कपट एवं बलात् अपहरण परायण होने का दुष्परिणाम ही है रावण का सर्वनाश। रावण की दृष्टि में शान्ति पूज्या नही है। भोग्या है इसीलिए उसका विनाश होता है। साधक भी अध्यात्मिक सिद्धि को भोग्या नही पूज्या मान कर ग्रहण करे। अन्यथा सिद्धि विलोप एवं साधक का विनाश निश्चित है। शान्ति अपहरण का विषय नही है, साधना का विषय है। परमात्म शून्य जड़ समाधि मे भी शक्ति की प्राप्ति होती है। किंतु वह शक्ति ज्ञान वैराग्य की जननी है। पराभक्ति ही शान्ति है, और यही सीता है। प्रत्येक साधना में परमात्मा की पुरस्सारता अपरिहार्य है।

---

1 – जागु – जागु जीव जड़। जो है जग जामिनी

देह गेह नेह जानि जैसे धन दामिनी (विनय पत्रिका 73/1)

2 – यह कहि नाइ सबिन्ह कहुँ माथा।

चलेउ हरिषि हियँ धरि रघुनाथा।। (रामचरित मानस सुदंर काण्ड)

हनुमान जी का वर्णन उपनिषदों में भी आया है। राम रहस्योपनिषद रामपूर्वतापक्षीय उपनिषद तथा मुक्तिकोपनिषद आदि अनेक उपनिषदों में श्री हनुमान जी का वर्णन है। जहाँ – जहाँ भगवान श्री राम के तत्व रहस्य और महिमा का वर्णन आया है, वहाँ हनुमान जी का भी वर्णन आया है। श्री राम तत्व की जिज्ञासा और रहस्य के वर्णन में उनकी प्रमुख भूमिका है। हनुमान जी के सभी गुणों का एक अद्भुद समन्वय है। ऐसे विलक्ष्ण भी है, जिनमें सभी कार्य को सम्पन्न करने की असीम क्षमता है। सरलता की दृष्टि से हम हनुमान जी के गुणों का वर्णन इस प्रकार करते है। वाल्मीकि जी ने हनुमान जी के कुछ प्रमुख वैशिष्ट्यों को इस प्रकार दर्शाया है।

(क) – वे बेजोड़ बली है, शौर्य के महासागर है। सिंह को कालनेमि अक्षय कुमार और ध्यूम्राक्ष का स्वयं वध करते है।

(ख) – ये बड़े बद्धिमान है। असीम बल के साथ ही इनमें अपार बुद्धि थी तभी तो ये नागमाता सुरसा से पार पा सके। जब वे औषधियों को नहीं पहचान सके, तब पर्वतखण्ड़ उखाड़कर चल देना इनका बुद्धि वैभव ही था।

(ग) – ये वेश परिवर्तन में अत्यन्त कुशल थे। रात्रि के समय बिल्ली के रूप में लंका में प्रवेश करना, नन्दी गाँव में भरत के पास ब्राह्मण के भेष में जाना, सुग्रीव के द्वारा राम और लक्ष्मण का पता लगाने के लिए भिक्षुक के रूप में जाना आदि आदि इनके पेश की विशिष्टता है।

(घ) – हनुमान जी बड़े सुन्दर वक्ता है। रावण की सभा में भी इन्होंने रावण से बात करने में अपनी इस वक्तृत्व शक्ति का अच्छा परिचय दिया था।

(ङ) – हनुमान जी कर्तव्य निष्ठ सेवक तथा सदैव अपने स्वामी की हित की कामना की भावना से अभिप्रेत रहते थे।

(च) – धीरता, गम्भीरता, सुशीलता, वीरता, नम्रता, निरिभिमानिता, श्रद्धा आदि अनेक गुणों से सम्पन्न हनुमान जी को तुलसीदास ने वाल्मीकि के समान विशुद्ध विज्ञानमय कहकर सुंदरकाण्ड मे इनकी "सकल गुण निधानम्" के उदघोष से सादर वन्दना की है।

(छ) – बड़े – बड़े संत महात्मा ज्ञानी और त्यागी को भी इस लोकैषणा के ऊपर भी विजय पाना बड़ा ही कठिन है। किंतु हनुमान जी ऐसे त्याग की एक साक्षात् प्रतिमूर्ति है।

(ज) – हनुमान जी को ज्ञानियों में सर्वश्रेष्ठ और वीरों में सर्वशक्तिशाली कहा गया है। हनुमान जी मंगल विग्रह, बुद्धि कौशल और अतुल बल वैभव का समन्वित रूप है, इसीलिए जहाँ कही भी उनके ज्ञान की प्रशंसा की गई है। वहाँ उनकी अमोघ शक्ति और अलौकिक पराकम की ओर भी संकेत किया गया है।

(झ) – पद्म पुराणानुसार श्री हनुमान जी को सम्पूर्ण विधाए सिद्ध हो गई थी। वह प्रभावशाली, विनयशील और महाबलवान थे तथा समस्त शास्त्रों का अर्थ करने में कुशल और परोपकार परायण थे।

(ञ) – अपने आराध्य की सेवा में सदैत तत्पर रहने वाले, राक्षसो रूपी जंगल को दवानल की तरह जलाकर नष्ट कर देने वाले जितेन्द्रिय बुद्धिमानों में श्रेष्ठ सम्पूर्ण वानर सेना के प्रमुख हनुमान जी जन जन में एक अपूर्ण निष्ठा के आज भी विद्यमान है।

कहना नही होगा कि अन्जनी नन्दन आन्जनेय का आजन्म नैष्ठिक ब्रह्मचर्य पालन का आदर्श सर्वथा अद्वितीय है, इतिहास में इसका ऐसा अन्य श्रेष्ठ उदाहरण कही नही मिलता। अदर्शन, अस्पर्शन, अस्मरण, असंकल्प आदि सामान्य ब्रह्मचर्य के आठ निर्दिष्ट अंग है। किंतु इसके मूल में एतदर्थ योग वेदांत आदि के स्वाध्याय द्वारा दिव्य ज्ञान वैराग्य एवं अभ्यास भी आवश्यक होते है। तथा जन्मानतरीय स्थिति भी देखी जाती है। सभी दृष्टियो से साधन सम्पन्न अन्जनी नन्दन आन्जनेय ने आजन्म ब्रह्मचर्य के परिपालन द्वार अपने को अपरिमिति शक्तिशाली बनाकर अपनी अध्यात्मिक शक्ति के द्वारा राम चरित मानस की कथा को सम्पूर्ण जनमानस में अक्षुण्ण कर अमर बना दिया।

अध्याय - चतुर्थ

चतुर्थ अध्याय

राम काव्य एवं तुलसीदास की आञ्जनेय भक्ति से मानव पीड़ा का निवारण

राम काव्य एवं तुलसीदास –

वैदिक साहित्य में राम शब्द का प्रयोग अवश्य हुआ है किन्तु राम कथा या राम काव्य का मूल स्वरूप आदि कवि बाल्मीकि द्वारा लिखित रामायण में ही परिलक्षित है। भारतीय विद्वान तो इसका रचना काल विकम संवत से तीन हजार वर्ष से भी पूर्व का अनुमान करते है, किन्तु जे० एन० फर्कहार के अनुसार इसकी तिथि ईसा से 600 या 400 वर्ष पूर्व मानी जाती है।[1]

बाल्मीकि रामायण का दृष्टिकोण लौकिक है। अतः बाल्मीकि रामायण में विष्णु और राम का कोई सम्बन्ध नही है और न राम अवतार रूप में ही है। वे केवल मनुष्य है, महात्मा है, धीरोदात्त नायक है। ईसा के 500 वर्ष पूर्व लिखित "वायु पुराण" में विष्णु के अवतार रूप में राम ईश्वरत्व से विभूषित है।[2] जे० एन० फर्कहार का विचार है कि वेदव्यास के महाभारत में विष्णु के छः अवतारो में राम भी परिगणित है (वाराह, नृसिंह, वामन, मत्स्य, राम और कृष्ण)। "मानव धर्म शास्त्र" के अन्तर्गत मोक्ष धर्म के एक विशेष भाग का नाम "नारायणीय" है, जिसमें वैष्णव धर्म का सम्यक विकास हुआ है। इसमें वासुदेव के साथ सात्वत और पंचरात्र नाम भी वैष्णव मत के लिए प्रयुक्त हुये है। नारायणीय में विष्णु के अवतारों की संख्या छः से बढ़कर दस हो गयी। "नारायणीय" के बाद "संहिता" में भक्ति का सम्बन्ध भी विष्णु से हो गया।[3] भारतीय विद्वान आर० सी० भण्डारकर के अनुसार ईसा की छठी शताब्दी के बाद राम की भक्ति का विकास "राम पूर्व तापनीय उपनिषद्" और "रामोत्तर तापनीय उपनिषद्" में हुआा जहाँ राम ब्रह्म के अवतार माने गये है। जिस ब्रह्म के वे अवतार है, उसका नाम विष्णु है। "अगस्त सुतीक्षण संवाद संहिता" में राम का महत्व अलौकिक रूप से घोषित किया गया है। तदन्तर "अध्यात्म रामायण" में राम देवत्व के सर्वोच्च शिखर पर परिलक्षित होते है। "भागवत पुराण" के प्रचार के साथ ही ग्यारहवी शताब्दी में राम की महिमा प्रचारित हुई। इसी समय राम भक्ति ने एक सम्प्रदायं का रूप धारण किया।[4]

---

1 – एन आउट लाइन ऑफ दि रिलीजस लिटलेचर ऑफ इण्डिया, पृ० 4

2 – एन साइक्लोपीडिया ऑफ रिलीजस एण्ड एथिक्स, भाग 12, पृष्ठ 571

3 – एन आउट लाइन ऑफ दि रिलीजस लिटलेचर ऑफ इण्डिया, पृ० 184

4 – वैष्णविज्म, शैविज्म एण्ड माइनर रिलीजस सिस्टम्स, पृष्ठ 47

वस्तुतः बौद्ध धर्म के ह्रास के बाद आठवी शताब्दी में जगद्गुरू शंकराचार्य ने वैदिक धर्म की पुनः स्थापना कर अद्वैत मत का प्रचार किया। इसी शांकर अद्वैतवाद को आधार बनाकर दक्षिण भारत में चार प्रधान मतों की स्थापना हुई – रामानुजाचार्य (1017–1137) का विशिष्टाद्वैत मत, निम्बार्क (बारहवी शताब्दी) का द्वैताद्वैत मत, माधवाचार्य (तेरहवी शताब्दी का उत्तरार्ध) का द्वैत मत तथा विष्णुस्वामी (चौदहवी शताब्दी) का शुद्धाद्वैत मत।

आचार्य शंकर के मतानुसार ब्रह्म एक निर्विकल्प एवं निर्विकार है। ब्रह्म सगुण एवं निर्गुण दोनो है। ब्रह्म सत्य एवं ज्ञान रूप है। सत्‌चित् एव आनन्द ही उसका वास्तविक रूप है। मायोपहित या मायासंवलित ब्रह्म सगुण रूप धारण कर सृष्टि, स्थिति एवं लय की प्रपत्ति करता है। यही मायावाद है।

रामानुजाचार्य का मत विशिष्टाद्वैत वस्तुतः आचार्य शंकर के मायावाद का विरोध करता है। विशिष्टाद्वैत में चित् अचित् और ईश्वर मूलतः तीन तत्व है। ईश्वर नियामक है। जीव और जगत् ईश्वर पर अविलम्बित नियम मात्र है। अद्वैतवाद में आत्मा एक तथा विभु है। विशिष्टाद्वैत वाद में आत्मा अनन्त एक दूसरे से भिन्न है। विशिष्टाद्वैत वाद के अनुसार जीव और जगत दोनो स्वतन्त्र है, किन्तु ईश्वरीय विधान के अधीन है। सम्पूर्ण जगत् ईश्वर का विराट रूप है। जीव और जगत् में विकार होने पर भी सम्बन्धित ईश्वर अविकारी ही रहता है। प्रलयकाल में जीव और जगत् सूक्ष्म रूप से सर्वव्यापी ईश्वर में निवसित रहते है। ईश्वर के साथ जीव एवं जगत् की विशिष्टाद्वैतता रहती है। इसीलिए रामानुज का मत विशिष्टाद्वैत नाम से विख्यात हुआ। विशिष्टाद्वैत में बह्म अखण्डअंशी और जीव ब्रह्म का ही अंश है।

रामानुजाचार्य के मतानुसार दास्य भक्ति ही जीव का चरम लक्ष्य है – "स्नेहपूर्वमनुध्यानं भक्तिः" एवं "भगवत् कैंकर्य" (भगवान के समक्ष किंकर भाव–भक्ति), आत्म समर्पण एवं भगवद्नुग्रह। इस भक्ति मार्ग ने जनसाधारण को अधिक आकृष्ट किया, अतः विष्णु पुराण में वर्णित विष्णु या नारायण की उपासना – पद्धति प्रचलित हुई।

रामानुजाचार्य से चौथी पीढ़ी में सन्त रामानन्द ने विशिष्टाद्वैत के रूप में राम को ब्रह्म का पर्याय मानकर राम – भक्ति का ज्ञान मूलक प्रचार प्रसार किया।

रामानन्द ने 'ॐ रां रामाय नमः' को मूल मंत्र मानकर राम को ईश्वर, सीता को अचित् अर्थात् प्रकृति और लक्ष्मण को चित् के रूप में प्रचारित किया। रामानन्द ने सभी शास्त्रीय मान्यताओं को स्वीकार करते हुए भी उदारता पूर्वक मनुष्य मात्र को सगुण भक्ति का अधिकारी घोषित किया। उनके शिष्यों में निर्गुण मार्गी एवं सगुण मार्गी दोनो थे। इसीलिए राम का जो स्वरूप जनमानस में प्रचारित हुआ, वह निराकार होते हुए भी साकार है। गोस्वामी तुलसीदास ने भी राम के इसी स्वरूप को अपने काव्य का उपजीव्य बनाया था –

यन्मायावशवर्ति विश्वमखिलं ब्रह्मादिदेवसुरा
यत्सत्वादमृषैव भाति सकलं रजौ यथाहेर्भ्रमः।
यत्पादप्लवमेकमे व हि भवाम्बोधेस्तितीर्षावतां
वन्देऽहं तमशेषकारण परं रामाख्यमीशं हरिम्।।[1]

जिनकी माया के वश में सम्पूर्ण विश्व, ब्रह्मादिदेव एवं असुर है, जिनकी सत्ता से रज्जु में सर्प के भ्रम की भाँति यह सकल संसार सत्य सदृश प्रतीत होता है, जिनका चरणारविन्द ही भवसागर से तरने के इच्छुकों के लिए एक मात्र नौका स्वरूप है, उन अशेष कारणों से परे राम नामधेय हरि की मै वन्दना करता हूँ।

वस्तुतः तुलसीदास राम नामधारी ईश्वर हरि का परिचय कराने वाले आदिकवि और विलक्षण प्रतिभा सम्पन्न कपि हनुमान का उपकार मानते हुए दोनो का स्मरण करते है।[2] उनकी कृपा से ही तुलसी को राम काव्य या राम – भक्ति – काव्य की प्रेरणा प्राप्त हो सकी।

रामकाव्य परम्परा के महाकवि तुलसीदास भगवान राम के भक्त और संन्यासी भी थे। वे भौतिक जीवन और सामाजिक न्याय की चेतना की अपेक्षा आध्यात्मिक जीवन और पौराणिक न्याय के अनुगामी थे। उनका युग सनातन धर्मावलम्बियों के लिए अपेक्षाकृत शान्ति सुव्यवस्था उदारता और सामाजिक चुनौतियों का युग था, उन्होंने केवल सनातन धर्मी समाज, विशेष रूप से ग्रामीण समाज और परिवार को अपने राम काव्य की धुरी बनाया और उसके सुधार तथा पुनरूत्थान के पौराणिक आदर्श रखे। इस प्रकार राम काव्य में तुलसी ने भारतीय जीवन की तत्कालीन बौद्धिक चुनौतियों का सामना किया, और सगुण अवतारवाद के द्वारा उन्होंने शैवो, शान्तों, नास्तिको को एक सटीक जवाब दिया। उन्होंने रामकाव्य के द्वार भारतीय ग्रामों की वर्णाश्रम व्यवस्था तथा सम्मिलित कुटुम्ब ईकाई दोनो की पूरी सुदृढ़ता और सुरक्षा का पक्ष प्रस्तुत किया है। इसी आदर्श के लिए उन्होंने राम जैसे क्षत्रिय सम्राट, शिव जैसे योगी, विश्वामित्र जैसे ब्रह्मर्षि और केवट जैसे लोकजन को एकसाथ प्रस्तुत किया। तुलसी ने सम्पूर्ण कलाबोध को संस्कृत की कुलीनता, नागरिकता और राजसभाओं की बारीकियों से निकाल कर लोकभाषा में लाकर रामकाव्य के माध्यम से अन्ततोगत्वा राम कथा का आद्योपान्त सुललित, ग्राम्यीकरण वस्तुतः तुलसीदास की महानतम् उपलब्धि है। स्वयं तुलसी ने भी ग्राम्य समाज के जात्याभिमान, कुलनैतिकता, सामाजिक भेद जैसे अन्तर्विरोध सहन किये है, जिसके फलस्वरूप उन्होंने राम को अपने काव्य का नायक चुना। राम राज्य त्याग कर बनवासी होते है, पत्नी से विमुक्त होते है, परिवार के लांछनों और धोबी द्वारा निन्दा को सहन करते है, तथा अन्त में विजयी होकर आते है। तुलसीदास भी गृह त्याग कर भिखारी होते है, अपमान, गरीबी तथा धार्मिक अन्याय सहते हैं, पत्नी से विरक्त होते है, और लांछनो को सहन करते हुए, गोस्वामी पद को प्राप्त करते है।

---

1 – रामचरित मानस बालकाण्ड, श्लोक 6
2 – रामचरित मानस बालकाण्ड, श्लोक

तुलसी ने परशुराम के रूप में तत्कालीन शैवाचार्यो की झाँकी प्रस्तुत की है। चित्रकूट के नौका प्रसंग में स्वयं तापस बनकर पहुँचे है, रत्नावली की झिड़की को मंदोदरी की झिड़की में रूपान्तरित किया है, तथा राम के वियोग में स्वयं अपने मन को ही परिपूरित किया है। इस तरह तुलसी ने स्वभावतः राम को चुना – हनुमान के माध्यम से ग्रामदेवता की प्राणप्रतिष्ठा कराकर तुलसीदास ने राम जैसे स्वामी को अपना आदर्श निरूपित किया। लोकजीवन के स्वीकृति के प्रमाण में ही राम तुलसीदास और भक्तिकालीन भारतीय ग्रामीण समाज के आदर्श हो गये। इस प्रकार हम राम काव्य में महाकाव्य के प्रयोजनों में भक्तिपरक और लोकश्रद्धा वाले रूपायन पाते है।

अपने रामकाव्य में गोस्वामी जी ने अपने इष्टदेव की ईश्वरता पर बहुत जोर दिया है। तुलसी ने रघुवीर रामचन्द्र को अपना आराध्य माना है। आराधना के लिए इस प्रकार का एक इष्ट चुन लेना वांछनीय है।[1] गोस्वामी जी के राम न केवल ब्रह्म है, न केवल महाविष्णु है, न केवल मर्यादा पुरूषोत्तम है वरन् तीनो के सामंजस्य से पूर्ण परम आराध्य है वही ब्रह्म निर्गुण भी है और वही ब्रह्म पुराण भी है। भिन्न –2 ग्रन्थों में अनेक उदाहरण मिलते है।[2] भगवान राम की यह देवाधिदेवता गोस्वामी जी ने राम काव्य में अनेक प्रकार से प्रदर्शित की है। इसके अतिरिक्त जड़ और चेतन तत्वो पर राम का प्रभाव प्रकट करके तथा सम्मान्य देवों द्वारा उनके महत्व को व्यक्त कराकर उन्होंने अपने दृष्टिकोण की पुष्टि की है। अतः हम राम काव्य के बहुपठित एवं कलात्मक विधान के उपयोगी उपादानों का अध्ययन इस प्रकार करेगे।

---

1 – जासु कथा कुंभज ऋषि गाई। भगति जासु मै मुनिहि सुनाई।।
सोइ मम इष्टदेव रघुवीरा। सेवत जाहि सदा मुनि धीरा।।

रामचरित मानस – 29 – 22 – 23

2 (क) – सर्वेन्द्रियगुणाभासं सर्वेन्द्रियविवर्जितम्।
आसक्तं सर्वभृच्चैव निर्गुणं गुणभोक्तृ च।।

(गीता 13–12)

2 (ख) – सर्व त्वमेव सगुणो विगुणश्च भूमन्।
मान्यत् त्वदस्त्यापि मनोवचसा निरूक्तम्।।

(भागवत 7–9, 48)

2 (ग) – सगुन अगुन गुन मन्दिर सुन्दर। भ्रमतम प्रबल प्रताप दिवाकर।।

(रामचरित मानस 434–23)

2 (घ) – सहस्रशीर्षा पुरूषः सहस्राक्षः सहस्रपात्।
सभूमिं विश्वतो वृत्वाऽत्यतिष्ठछशांगुलम्।।

(ऋग्वेद का पुरूषसूक्त)

(क) – राम काव्य का काव्याभिध्येय –

रामकाव्य में कला के सम्बन्ध में गोस्वामी जी ने सबसे पहली बार जो उद्भूति की है, वह है काव्यत्व की प्रेरणा और उसका उद्देश्य। रामकाव्य के प्रारम्भ, मध्य एवं अन्त तीनो पर कवि ने एक ही बात पर अधिक जोर दिया है, और वह है, द्विजातीय तत्वों से दूर हटकर शुद्ध एवं प्रबुद्ध रूप से काव्य की उद्भावना करते हुए परात्पर ब्रह्म राम में पूर्णनिष्ठा प्रतिपादित करते हुए लोक कल्याण की भावना के प्रति सम्पूर्ण जनमानस को प्रेरित करना। गोस्वामी जी ने अनुभूतियों के सहज एवं स्वाभाविक अभिव्यंजना के लिए, यदि एक ओर रामकाव्य को "स्वान्तःसुखाय" के सम्पुट में बन्द करना चाहा है, तो दूसरी ओर उन्होंने कवि की एकान्त तथा निरंकुश वैयक्तिक्ता को समाप्त करने के लिए भावुक वर्ग की सापेक्षता में भी रखकर उसे देखने की गम्भीर चेष्टा की है। तुलसी की प्रेषणीयता के इस सर्वमान्य सिद्धान्त को सभी विज्ञजन पूरी तरह स्वीकार करते है।

(ख) – रामकाव्य व्यापक उद्देश्य –

रामकाव्य का व्यापक उद्देश्य समाज में फैली संकीर्ण विचारधाराओं के भँवर जाल से बाहर निकल कर एक सुस्पष्ट सामाजिक चिन्तन धारा को प्रवाहित करना है। गोस्वामी जी ने अपने सम्पूर्ण रामकाव्य में दलित वर्ग के उत्थान एवं ऊँच नीच के भेदभाव को समाप्त करने का भरपूर समर्थन किया है। शबरी, केवट, जटायु, अजामिल आदि इसके सटीक प्रमाण है। उन्होंने तत्कालीन युग के अतिशय अलंकरण एवं चार्ताकीय दर्शन की प्रवत्ति के प्रति (जो परिवर्ती संस्कृत के वातायन से निकल कर हिन्दी काव्यधारा को भी प्रभावित करने के लिए परिकरवद्ध हो चुकी थी) अपनी व्यक्तिगत तटस्थता का सुन्दर परिचय दिया है। एतदर्थ उन्होंने प्रथम मंगलाचरण छन्द में ही लोकहित एवं काव्य रचना को समवेत् रूप से प्रस्तुत करते हुए काव्य कला की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती एवं शुभ तथा श्रेय के नियामक गणेश दोनो की ही एक साथ वन्दना की है। गणेश एवं सरस्वती दोनो की ही विशेषताओ से संतुष्ट होकर अर्थात लोक संग्रह जनहित, समाजहित, प्रजाहित और काव्यकौशल का सहअस्तित्व की स्थापना रामकाव्य का प्रथम उद्देश्य है। इसका प्रमाण हमें रामचरित मानस के बालकाण्ड के प्रथम श्लोक में प्राप्त होता है। कवि का आशय है कि पाणीविनायक की अनुकम्पा के बिना काव्य सर्जन एवं काव्य के माध्यम से लोक सर्जन का उद्देश्य पूरा नही हो सकता। स्पष्ट है तुलसी के रामकाव्य का मूल उद्देश्य परमात्मा में आत्मा को सम्बद्ध कर लोक कल्याण हेतु अपने बुद्धि कौशल की प्रखरता को मुखरित करना श्रेयस्कर है।

रामकाव्य की प्रबन्धात्मक परिकल्पना का स्वरूप –

महाकाव्य सम्बन्धी भारतीय मान्यताओं को दृष्टिपथ पर रखकर हम उसकी सीमा में जिन अनिवार्य अथवा शाश्वत तत्वों का पूर्ण समाहार होते देखते है, उसमें सर्गबद्ध कथानक गम्भीर रसान्विति, भावव्यंजना उदान्त चरित्र संयोजना, विविध छन्दों एवं वृन्तो का विन्यास, शब्द शक्तियों से सम्पुष्ट गरिमामयी शैली, महान उद्देश्य की सम्प्राप्ति, समूचे युग जीवन का प्रतिनिधित्व, मानवेतर जगत्

की सौन्दर्यानुभूति आदि तत्व विशेष प्रमुख है। गोस्वामी जी की प्रबन्धात्मक परिकल्पना के अन्तर्गत प्रायः इन सभी तत्वों का समावेश परिलक्षित होता है। प्रायः सभी प्रबन्धात्मक प्राख्यानों में गोस्वामी जी की प्रतिभा की परिकल्पना सम्भाव्य नही है। महाकाव्य के सम्बन्ध में उनकी यह परिकल्पना कितनी पूर्ण एवं सुसंगठित रही है, इसका पता हमें बालकाण्ड में उनके प्रसिद्ध मानस रूपक को देखने पर ही चल सकता है। अपनी प्रवन्ध परिकल्पना के अन्तर्गत उन्होंने अत्यन्त कौशल के साथ मानसरोवर का सांगरूपक बाधते हुए, रामचरित मानस को एक निर्मल जलाशय के रूप में प्रस्तुत किया है।

रामकाव्य में प्रकृति चित्रण का महत्व –

मानवेतर जगत् के संसर्ग से सर्वथा अछूता रहकर कवि का कर्म भी नीरस और शुष्क हो जाता है, लेकिन गोस्वामी जी ने प्रकृति के चित्रण के क्षेत्र में चेतन और अचेतऩ दोनो ही प्रकार के उपादानो को महत्वपूर्ण स्थान दिया है। उनके छन्द, चौपाई, दोहा, सोरठा, रस, अलंकार, अर्थ, भाव, ध्वनि तथा सभी अप्रस्तुत अवरेख उनके राम काव्य में धात्री प्रकृति का ऑचल पकड़कर नटखट शिशुओं की भॉति उछलते कूदते दिखाई देते है। अवएव मानस रूपक के निकट आकर हम देखते है कि प्रकत्ति चित्रण का वह रूप जिसे गोरवामी जी ने अपने रामकाव्य के लिए अनुकरणीय माना है आधुनिक छायावादी प्रकृत्ति चित्रण जिसमें मौन निमंत्रण, अरूप, अर्चना एवं अप्रस्तुत विधान आदि का बाहुल्य है, से भिन्न होते हुए भी कम आकर्षक नही है। **"राम प्रताप प्रकृट यहि मॉही "** के द्वारा कवि ने प्रकारान्तर से राम भक्त की ओर दिशा निर्देश किया है। यह राम प्रताप वास्तव में कवि के सहज भावोच्छवास की स्थिति का ही निरूपक है। इस प्रकार रामकाव्य का प्रकृत्ति चित्रण स्वयं प्रमाण है।

राम काव्य में स्वभाविकता एवं मौलिकता का तत्व –

तुलसी ने राम काव्य मे स्वभाविकता को काव्य के समस्त गुणों से ऊपर माना है। गीतावली उनका गीतकाव्य है पर उसमे भी भावो की व्यंजना उसी रूप में हुयी है, जिस रूप में मनुष्यों को अनुभूति हुआ करती है 'काव्य सृष्टि के सम्बन्ध में उनका यह सिद्धान्त अपेल ही कहा जा सकता है कि " रघुबर प्रेम प्रसूत" की भॉति कविता का आडम्बर भी आत्मव्यंजना का दूसरा नाम है। जब तक काव्य में स्वभाविकता का समावेश नही होगा तब तक सुजन समाज के लिए उसका प्रयोजन न होगा।"[1] युग चेतना को जाग्रत करने एवं समाज व्यवस्था को आमूल चूल परिवर्तन करने का काम तो , काव्य को किन्ही विशेष अवसरों पर ही करना हो सकता है, किन्तु जीवन के सहज धरातल का स्पर्श तो उसे सदैव ही करना होता है और इसके लिए काव्य को सरल और स्वाभाविक होना चाहिए।

1 – 'गोस्वामी तुलसीदास ' रामचन्द्र शुक्ल पृष्ठ 68, 69 सप्तम् सर्ग

यह स्वाभाविकता गोस्वामी जी के काव्य में प्रमुख गुण एवं तत्व के रूप में जगह – जगह पर दिखाई देती है। यह स्वाभाविकता काव्य के अन्तरंग बहिरंग दोनो पक्षों के लिए आवश्यक है। "सरल कवित्त कीरति विमल सोई आदरहि सुजान" के द्वारा उन्होंने काव्य की पक्षीय आडम्बर हीनता पर ही प्रकाश डाला है।[1] सच तो यह है कि हमें तुलसी के समूचे राम काव्य प्रांगण में छिटकी हुयी स्वाभाविक अभिव्यक्ति की शीतल चन्द्रिका कही 'वचनछलहीना' के रूप में तो कही 'सहज सुभाव' के रूप में और कही 'सानी सरल रस मातु बानी' के रूप में जगह –जगह पर देखने को मिलती है।

राम काव्य धर्म, भक्ति और संस्कृति का अनूठा विश्वकोष –

राम काव्य धर्म, भक्ति और संस्कृति का वह अथाह विश्वकोष है, जिसमें मानव धर्म प्रधान विश्व संस्कृति के सभी तत्वों का सम्यक विवेचन हुआ है। संत तुलसीदास जी ने भक्ति को एक योग बताया है और उस योग की प्राप्ति के साधन भी बतायें है। भक्ति यदपि स्वतंत्र योग है और ज्ञान विधान उसी के अधीन है, फिर भी जन साधारण के लिए भगवान ने स्वयं ही भक्ति प्राप्ति का उपाय बताया है। जिस प्रकार जीवन के प्रत्येक कार्य में, चाहे वे लौकिक हो या पारलौकिक हो, श्रद्धा और विश्वास की आवश्यकता होती है उसी प्रकार जीवन की आनन्दभूति मय भक्ति में भी श्रद्धा और विश्वास की परम आवश्यकता होती है।[2] प्रत्येक आचरण के लिए धर्म संस्कृति और श्रद्धा भाव आवश्यक है, क्योकि जब तक किसी कार्य को करने के लिए संस्कृति निष्ठ होकर धर्मानुकूल निष्ठा नही होगी ,तब हम तक उसमें पूर्णतया प्रवृत्त नही हो सकते। यह श्रद्धा और विश्वास ही राम भक्त हनुमान के लिए मूल तत्व है।[3]

---

1 – सरल कवित्त कीरति विमल, सोई आदरहि सुजान।
सहज बैर बिसराम रिषु, जो सुनि करै बखान।।
(राम चरित मानस, बालकाण्ड दोहा 14)

2 – भगति कि साधन करउँ बखानी। सुगम पंथ माहि पावहि प्रानी।।
प्रथमहि विप्र चरन अति प्रीती। निज निज कर्म निरत श्रुति रीती।।
एहि कर फल पुनि विषय बिरागा। तब मम धर्म उपज अनुरागा।।
(रामचरित मानस 17/6–7–8)

3 – बिनु बिस्वास भगति नहिं तेहि बिनु द्रवहि न रामु।
राम कृपा बिनु सपनेहुँ जीव न लह बिश्रामु।।
(रामचरित मानस मूल गुटका 400/35)

भक्ति प्रेम की अनिर्वाचनीय उदात्त लहर है। इस लहर में प्रेमी और प्रेमास्पद में कोई अन्तर नही रह जाता। इसमें तीनों एक लय हो जाते है। जब ध्याता, ध्यान और ध्येय एक रूप हो जाते है, तब दुर्लभ अध्यात्मिकता की सृष्टि होती है। वस्तुतः भक्ति एक ऐसी लहर है जो आराध्य के गुण महात्म्य और कृपा का स्मरण कराकर चित् को द्रवित करती है, तथा धारा प्रवाह मन की सारी प्रवृत्तियों को उसी ओर उन्मुख करती हैं। अंजनी नंदन की इसी आध्यात्मिक तरंग को तुलसीदास ने आत्मसात् किया है।

तुलसीदास की आंजनेय भक्ति से मानवीय पीड़ा का निवारण –

तुलसी के रामकाव्य में अंजनी नंदन आंजनेय एक ऐसे पात्र है, जिनकी निष्ठा का अन्य कोई उदाहरण या उपमान नही है। श्री राम की सेवा में पूर्ण रूप से समर्पित हनुमान अपने सुख–दुःख आदि का कोई ध्यान नही करते। परोपकार द्वारा ही उनका जीवन दर्शन राम भक्तों में सर्वाधिक निखर उठा है। वास्तविकता भी यही है, कि शक्ति, साधना और उपासना का लक्ष्य यदि लोक हित में नही हुआ तो उसकी परिणति साधक के अनुकूल नही हो सकती। हम किसी आराध्य का स्वरूप तभी स्वीकार करते हैं, जब उसके गुणों में साधको के लिए हृदय ग्राही आकर्षण प्रकर्षण होता है। हनुमान जी नैष्ठिक ब्रम्हचारी के रूप में जाने जाते है। बाल्मीकि रामायण में स्वयं राम ने हनुमान के उपकारों के प्रति अपना आभार व्यक्त किया है।[1]

वृद्धावस्था में तुलसीदास जी को रोग ने बुरी तरह से घेर लिया था, चारो तरफ उन्हें अन्धकार प्रतीत हो रहा था। उस रोग से व्याकुल तुलसीदास जी शिव जी , राम और हनुमान की ओर ही देखते है।[2] एक स्थान पर 'बरतोर' शब्द का आशय सम्भवतः बालो के टूटने से उत्पन्न व्याधि का सूचक माना गया है। उसका फूट– फूट कर निकलना मानो रामकाव्य का खाया नमक ही बाहर आता हो।[3] जो कुछ भी पीड़ा थी वह बड़ी भयंकर थी। उससे उनका सारा शरीर ही पीड़ामय हो गया था।[4]

---

1 – मृदंगे जीर्णतां यातु यत् त्वयोपकृतं कपे।
नरः प्रत्युपकारणामापत्स्वायाति पात्रताम्।।
(बाल्मीकि रामायण 7/40/24)

2 रोग भयो भूत सो कुपूत भयो तुलसी को भूतनाथ पाहि पद पंकज गहतु हौ।
(कवितावली, उत्तरकाण्ड छन्द 167)

3– ताते तन पोषियत घोरि बरतोर मिस, फूटि फूटि निकसत लोन राम राय कौ।
(हनुमान बाहुक छन्द 41)

4– पॉय पीर, पेट पीर, बाहु पीर, मुँह पीर, जरजर सकल शरीर पीर भई है।
(हनुमान बाहुक छन्द 38)

ऐसे रोग से निवृत्ति भी हनुमान जी की कृपा से हुई थी। तुलसीदास जी बड़े हर्ष के साथ उनकी प्रसंशा में कहते है, मेरे रोगो की फौज उन्हीं के कारण भाग गयी है।[1] अपने रामकाव्य में तुलसीदास जी ने अपनी सारी व्यथाओं के निराकरण एवं मुक्ति का हेतु हनमान जी को ही मानते है। वे कहते है, मेरे तमाम कुरोगों के लिए अंजनी नंदन आंजनेय से श्रेष्ठ वैद्य कोई नही है। दुष्टों और खलों की फौज हनुमान जी के नाम के स्मरण मात्र से नष्ट हो जाती है। तुलसीदास की सहानुभूति स्वभावतः दीन दुखियों के प्रति अधिक थी यही कारण है कि वे बड़े ही करूण पश्चाताप पूर्ण शब्दों में समाज की दुर्दशा का चित्र अंकित करते है। वे कहते है कि मनुष्य इतना गिर गया है कि , केवल पेट भरने की ही चिन्ता में रहता है, उसे धर्म अधर्म आदि की कोई चिन्ता नही है इन सबके निवारण के लिये तुलसी हनुमत भक्ति के लिए मानव को प्रेरित करते हुये इंगित करते है। जन्म मरणरूप दारूण भय को दूर करने वाले , सौन्दर्य की छटा से अगणित मनमथों से बढ़कर नवीन नील सजल मेद्य के समान सुन्दर कलेवर वाले, दीनो के बन्धु सूर्य के समान तेजस्वी, दानव और दैत्यों के वंश का समूल नाश करने वाले आनन्द कंद , कोशल देश रूपी आकाश में निर्मल चन्द्रमा के समान विचरण करने वाले, शिव शेष और मुनियों के मन को प्रसन्न करने वाले तथा काम कोध लोभादि शत्रुओं का नाश करने वाले भगवान राम के अनन्य एकनिष्ठ, परम विरागी, बीतरागी अंजनी नंदन आंजनेय की भक्ति में ऐसी शक्ति है जो समस्त प्रकार के लौकिक तापो को समूल नष्ट करने में पूर्णतया समर्थ है।

यद्यपि शिव स्वामी कार्तिकेय, परशुराम, दैत्य और देवता बन्धु सभी युद्ध रूपी नदी से पार जाने में योग्य एवं समर्थ योद्धा है फिर भी हनुमान जी पूरी प्रतिज्ञा वाले चतुर योद्धा बड़े कीर्तिमान और यशस्वी है, जिनके गुणों की कथा को शील के भंडार, आश्रितों के रक्षक, शिव के प्रेम रूपी मानसरोवर के हंस, ज्ञानियों के शिरोमणि, गुण कर्म और काल के नियामक भगवान राम ने अपने श्रीमुख से वर्णन किया जिनके अतिशय पराकम से अपार जल से भरा संसार रूपी समुद्र सूख गया। इसलिये भगवान राम के परम सेवक हनुमान के संसार के सुख दुख रूपी राक्षसों के दल का नाश करने वाला अन्य कोई नही है।

(क)रामकाव्य में आध्यात्मिक पीड़ा –

आध्यात्मिक आकाश की तेजोमय किरणों में असंख्य लोक तैर रहे है। यह तेजोमय किरणे उस अव्यक्त परमात्मा के परमधाम से उदभूत होती है, और आलौकिक आनन्दमय चिन्मय लोक इसी तेजोमय ज्योति में तैरते रहते है। जो इस आध्यात्मिक आकाश तक पहुॅच जाता है उसे इस लौकिक आकाश में लौटने की आवश्यकता नही रह जाती।

1– करूना निधान हनुमान महा बलवान, हेरि हॅसि, हॉकि,फूकि फौजे ते उड़ाई है।
खायो हुतो तुलसी कुरोग राढ़ राकसिन, केसरी किशोर रखे वीर बरिआई है।
(हनुमान बाहुक छन्द 35)

सम्पूर्ण जीव एक लोक से दूसरे लोक में विचरण करते है। ऐसा भी नही है कि इस भौतिक जगत का कोई प्राणी आवागमन के बन्धन से मुक्त हो, लेकिन जो परम लोक या आध्यात्मिक आकाश के किसी भी लोक में पहुचना चाहता है, उसे राम की भक्ति का आश्रय लेना अति श्रेयस्कर होगा। भौतिक आकाश से परे आध्यात्मिक जगत है जो अव्यक्त कहलाता है। इसी आध्यात्मिक जगत में पहुँचने की कामना प्रबुद्ध मनुष्य को करनी चाहिए, क्योकि जब मनुष्य को उस धाम की प्राप्ति हो जाती है, तो वह आवागमन के बन्धन से मुक्त हो जाता है।

आत्म चिन्तन के द्वारा परमार्थ चिन्तन करना ही अध्यात्म है। मनुष्य यदि निरन्तर अपने आराध्य का पूजन भजन करता रहे तो उसे सामुज्य से मुक्ति मिलेगी। यह भौतिक जगत भी आध्यात्मिक जगत का प्रतिबिम्ब है। यह जगत प्रतिबिम्ब मात्र है। प्रतिबिम्ब में कोई वास्तविकता नही होती, लेकिन प्रतिबिम्ब से हम यह समझ लेते है कि वस्तु ही वास्तविकता है। इसी प्रकार यदपि मरूस्थल में जल नही होता, लेकिन मृग मारीचिका से भ्रम होता है कि जल जैसी वस्तु होती है। भौतिक जगत में न तो पारलौकिक जल है न सुख है। लेकिन आध्यात्मिक जगत में वास्तविक परमानन्द रूपी असली जल है। अधिकांश सृष्टि आध्यात्मिक आकाश में है, जो व्यक्ति परम ब्रह्म से तदाकार होना चाहता है वह तुरन्त ही परमेश्वर की ब्रह्मज्योति में भेज दिया जाता है, और इसी तरह वह आध्यात्मिक आकाश को प्राप्त होता है। इसीलिए जीवन के अंत में आध्यात्मवादी लोग ब्रह्मज्योति परमात्मा भगवान राम का चिन्तन करते है। गीता में भगवान कृष्ण ने अर्जुन से कहा है – कि मै अपने भक्तों के सहित बैकुंठ लोक, गो लोक, बृंदावन में सदैव निवास करता हूँ, इसमें कोई संदेह नही है अपितु भक्त को तदाकार होना चाहिए।

रामकाव्य के आध्यात्मिक सिद्धान्त को समझने के लिए हमें समूचे भारतीय दर्शन पर एक विहंगम दृष्टि अवश्य डालनी चाहिए। रामकाव्य के रचयिता तुलसी का मत एकदम श्रुतिमत है, इसीलिए गोस्वामी जी के मत को कल्पित मतों की श्रेणी में नही गिना जा सकता क्योकि गोस्वामी जी सुधारक होते हुए भी कान्तिकारी नही थे। इसीलिए उन्होंने सम्पूर्ण रामकाव्य में आध्यात्मिक पीड़ा हेतु भगवान राम के भौतिक धामों के अनुसार उनके दिव्य धाम की चर्चा करके नराकार आराध्य, देवाकार आराध्य और निराकार आराध्य में सामंजस्य स्थापित किया है। गोस्वामी तुलसीदास के रामकाव्य में भगवान का परगोच्च और सच्चा आध्यात्मिक स्वरूप पाया जाता है। जीव यदि संसार में सुख चाहता है तो उसे आवश्यक है कि भगवान की माया शक्ति को समझ ले। गोस्वामी जी का कथन है कि भगवान की माया शक्ति को समझने के लिए पॉचो ज्ञानेन्द्रियों के विषय तथा उन विषयों से उत्पन्न विकार, मन की दौड़ आदि के बारे में जीव को भली भॉति जान लेना परमावश्यक है।

विचार करने पर ही विदित होगा कि जिस प्रकार नाटक का अभिनय केवल अभिनय मात्र है, उसी प्रकार इस संसार रूपी महानाटक का सम्पूर्ण व्यवहार स्वप्नवत है।[1] वह आदि सूत्रधार अध्यात्मवादी, परमात्मा इस नाटक में अपने भॉति भॉति के रूप दिखाता है, परन्तु वास्तव में वह कुछ दूसरा ही रहता है।[2] उस खिलाडी ने अपने खेल में अविद्या की झूठी ग्रन्थियॉ बॉध रखी है जिससे जड़ और चेतन के बीच मजबूत बन्धन सा पड गया है, परन्तु वास्तव में यह बन्धन मृषा ही है, भ्रम ही है महामोह का एक अंग है।[3] अध्यात्मवादियों का मानना है कि जीव वास्तव में सच्चिदानन्द ब्रह्म ही है। केवल वह भ्रम वश अपने को सच्चिदानन्द से पृथक मानता है। अपूर्ण प्रकाश रहने पर जिस प्रकार सॉप का भ्रम होता है, शुक्ति में चॉदी का भ्रम होता है, ऑख में उगली लगाने पर जिस तरह दो चन्द्रों का भ्रम होता है, नौकारूढ़ होकर चलने पर वृक्षों के दौड़ने का भ्रम होता है, उसी प्रकार शरीर होने के कारण महामोह ग्रस्त हो जाने पर चैतन्य को अपने जीवत्व का भ्रम होता है। जबकि ताहि, तेंहि, तै, तोर, तत् और त्वं में कोई भेद नही है।

आध्यात्मिक पीडा का उल्लेख रामकाव्य में अनेक स्थलों में मिलता है। राम दरबार में तुलसी अपनी दास्य भावना को व्यक्त करते हुए कहते है कि शरीर और जीवात्मा के सम्बन्ध के जितने सखा या हितैषी मिलते है वे सब संसार के सभी मायिक सम्बन्ध के मिथ्या टॉको से सिले हुए है। गम्भीरता पूर्वक विचार करने पर ये सभी हितैषी सखागण केले के पेड़ के छिलके के समान है जैसे केले के पेड़ को छीलने पर छिलके ही निकलते है, वैसे ही संसार के सारे सम्बन्ध भी तत्वहीन अज्ञान जनित ही है। ये वैसे ही सुन्दर जान पड़ते है, जैसे मणि – सुवर्ण के संयोग से बीच बीच में छोटे – छोटे कॉच के टुकडे शोभा देते है। इस प्रकार तुलसी ने अपने हृदय के भावों को आराध्य राम के समक्ष विगत होकर निवेदन किया है। अध्यात्म वह अजस्त्र श्रोतस्विनी धारा है, जो आत्म चिन्तन रूपी नदी में, परमार्थ रूपी जल के रूप में प्रवाहित होता है। समूचा रामकाव्य इस चिन्तन धारा का धनी है। भक्ति, ज्ञान, वैराग्य और कर्म ये रामकाव्य के चार प्रमुख स्तम्भ है, जिनमें समूचे रामकाव्य का विशाल महल खड़ा हुआ है।

---

1 – सपने होई भिखारि नृप रंक नाकपति होइ।
जागे हानि न लाभ कुछ तिमि प्रपंच जिय होइ।।
(रामचरित मानस 206 / 12)

2 – जथा अनेक वेष धरि नृत्य करइ नट कोइ।
सोइ – सोइ भाव दिखावई आपुन होइ न सोइ।।
(रामचरित मानस 175 / 11 –12)

3 – जड़ चेतन ग्रंन्थि परि गई। जदपि मृषा छूटत कठिनई।।
(रामचरित मानस 500 – 11)

इस महानतम पवित्र अप्रमेय अद्वितीय कार्य के लिए तुलसी का रामकाव्य रूपी दिव्य प्रकाश सम्पूर्ण भारतीय जनमानस में श्रद्धा और विश्वास रूपी हृदय दीप में भक्ति रूपी तेल से सदैव प्रज्वलित होता रहेगा। तुलसी ने रामकाव्य रूपी वह अनूठा रत्न भारतीय जनमानस को प्रदान किया है जो घिसते घिसते घिस जाएगा फिर भी लोगों के द्वारा सीने से लगाया ही जाएगा।

(ख) आध्यात्मिक पीड़ा निवारण के उपाय –

आध्यात्मिक जगत में भगवत्कृपा भक्ति वेदान्त का प्रमुख अंग है। किसी भी पीडा के निवारणार्थ भगवत्कृपा की अमृतमयी दृष्टि जब तक भक्त के भाव एवं आध्यात्मिक हृदय जगत में नही होती, तब तक भीतर बाहर सर्वत्र व्याप्त पीडा निवारक भगवान ही उसके लिए अग्राह्य होते है, क्योंकि भगवान सर्वप्रथम भाव अथवा भवना में भी अस्तित्व ग्रहण करते है। भाव ही भगवान की सगुण एवं साकार सापेक्ष सत्ता का मुख्य कारण है।

किसी भी प्रकार की पीड़ा के निवारण हेतु भगवान की सतत प्रवाहशीला सहज कृपा सार्वकालिक है। न वह काल सापेक्ष है और न साधन सापेक्ष। भगवत्कृपा तो अहैतुकी है। अतएव अकारण ही पीडा के निवारणार्थ सब पर बरसती रहती है। वह देश, काल, वस्तु और व्यक्ति से परे भी है और उन सब से अनुस्यूत भी।[1] वह रूप रहित रहकर भी सर्व रूपों में प्रकाशित होती है। वह अपने मूलाधार में एक रस है अर्थात् कृपा और कृपालु दो भिन्न तत्व नही है।[2] हम कृपालु से अपने सुख की प्राप्ति और पीडा निवृत्ति हेतु जो भी अभिलाषा रखते है, वह हमें किसी न किसी रूप में प्राप्त हो जाती है।

मनुष्य भौतिक समृद्धि मे शाश्वत सुख, सन्तोष, शान्ति और आनन्द ढूढ़ने का प्रयास करता है, परन्तु भौतिक सुख स्वभावतः अपूर्ण और नाशवान है, अतएव उससे स्थायी सुख कैसे मिल सकता है? अपनी इस चेष्टा में असफल मनुष्य अन्ततः पीडा के निवारण हेतु स्वतः भगवान की ओर आकर्षित होता है तथा साधु सन्तों और सद्ग्रन्थों का आश्रय लेकर अपने अनुकूल आध्यात्मिक मार्ग की खोज करता है। सुख की खोज में भटकते हुए लोग भौतिक सुखों में आनन्द मानने वाले और उसी को जीवन का परम और चरम लक्ष्य मानने वाले भौतिकवादी लोगों को आदर्श मानते है अतः उन्हीं की तरह भौतिक सुख प्राप्त करने का लक्ष्य बनाते है किन्तु गम्भीर विचार, सतसंग, सत्शास्त्र अध्ययन या अन्य किसी प्रकार से भी उसे जब यह दृढ़ विश्वास हो जाता है कि यह संसार दुःखों का आगार है, इसमें सच्चे सुख का लेश मात्र नही है, तब वह अध्यात्म मार्ग की ओर अग्रसर हो जाता है और साधारण सांसारिक जनों की कृपा की अपेक्षा ईश्वरीय कृपा की विशिष्टता को श्रेयस्कर समझता है।

---

1 – मत्तः परतरं नान्यत् किंचिदस्ति धनंजय। मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव।।

(गीता 7/7)

2 – गिरा अरथ जल बीच सम कहियत भिन्न न भिन्न।

(रामचरित मानस 1/18)

ईश्वर विमुख मानव साधरणतः धनवान और सन्तवान मनुष्य की कृपा याचना करता है, परन्तु धन सत्ता वाला मनुष्य किसी पर कृपा करने से पहले इस बात पर विचार करता है कि वह मनुष्य जो कृपा चाहता है अपने लिए कितना उपयोगी सिद्ध हो सकेगा, क्योंकि ऐश्वर्यशाली याचक के अन्य गुण दोषों पर ध्यान नही देता। याचक कृपा द्वारा प्राप्त वस्तु का सदुपयोग करता है या दुरूपयोग, इसकी भी जानकारी वह नही रखता। फलतः भौतिक सुखों की लालस वाला मनुष्य जनसाधारण के लिए दुःख रूप हो जाता है, परन्तु भगवान की कृपा करने की नीति इसमें नितान्त पृथक है। वे जिसके ऊपर कृपा करते है, उसके दोषो को उग्र या सौम्य किसी उपाय से दूर कर उसके अन्तःकरण की शुद्धि करते है। वस्तुतः भगवान को छल कपट नही अच्छा लगता। परमार्थ पथ पर मिथ्याचारी या दम्भी नही चल सकता। इसलिए अध्यात्म मार्ग के पथ पर प्रदर्शक महापुरूष शुद्ध भाव की स्थापना करने तथा दम्भ या चतुराई न करने की सलाह देते हैं।

गोस्वामी जी का समग्र साहित्य प्रसाद पूर्ण है। इसमें मनुष्य जिस लक्ष्य, साधना, ज्ञान, भक्ति आदि को लेकर प्रवृत्त होता है उसे सर्वत्र वही मिलने लगता है। कुछ लोग इस रहस्य को जानकर घबराते है। उनकी प्रत्येक चौपाई में "र", "म" देखकर प्रतिप्रकरण वेद, उपनिषद्, शास्त्र, पुराणों की दुहाई देखकर चारो ओर देव, यक्ष,गंर्धवों को विमान से आते जाते स्तुति करते एवं लीला देखते, देखकर सुन्दर मंगल रूचिर आदि शब्दों के पर्याय आदि का विस्तार देखकर मानस, गीतावली आदि में श्री राम एवं अंजनी नंदन आंजनेय की निष्ठा भरी सेवा को देखकर, मानससर, कल्पित लक्ष्मी, परशुराम के युद्ध यज्ञ तथा चित्रकूट आदि में वर्णन रूपको की श्रंख्ला देखकर उपमा में कोटि कोटि काम रति का तिरस्कार और सर्वत्र अजामिल, बाल्मीकि, व्याध, गणिका, मारीच आदि को कृपा पूर्वक उद्धार करते देखकर उन लोगों को पुनरूक्ति दोष की प्रतीति होती है। फिर भी गोस्वाम जी की कृपा सम्बन्धी अनुसंधान विशेषकर हनुमान जी के सन्दर्भ में अपने ढ़ंग का एक अलग अनुसंधान है। चाहे वह आध्यात्मिक हो या लौकिक हो, परन्तु वह एक उनका कृपा प्रसाद प्रदत्त सहज वरदान है।

गमागील बेली नामक एक अमेरिकन पत्रकार ने लिखा था कि अध्यात्म और आध्यात्मिक पीड़ा ये दोनो संसार में कुछ जानने योग्य है, क्योकि ईश्वर और अपनी आत्मा दोनो का समन्वित रूप है। ओवेन यंग ने लिखा है कि जिस मनुष्य की आस्था ईश्वर से नही हैं वह किसी का मित्र नही हो सकता। यूनानी दार्शनिक प्लेटो का कहना है कि सत्य ही भगवान का स्वरूप है, और यही छाया आध्यात्म हैं। पीड़ा निवारणार्थ अमेरिका के सुप्रीम कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश जानजेजे ने लिखा था – कि ईश्वर जो कुछ भी करता है हमारे हित में ही करता है। जब हम समस्त प्रकार के भोग ऐश्वर्य सम्पत्ति से भरपूर होते है, तो वह हमारी कृतज्ञता की परीक्षा लेते है। जब हम बहुत साधारण जीवन बिताते है तो हमारे संतोष की परीक्षा लेते है। विपत्ति काल में वे देखते है कि हममे उनके प्रति कितना आत्म समर्पण है। इस प्रकार प्रति क्षण वह हमारी परीक्षा ले रहे हैं जिससे वे जान सके कि उनमें हमारा कितना विश्वास है, तथा उनके प्रति हमारी कितनी आस्था है।

परमात्मा को पहचानना कठिन है। क्योकि स्वयं ईश्वर योग माया से आच्छादित है, इसलिए मन्द बुद्धि लोग नही पहचान पाते क्योकि वे लोग माया के वशीभूत रहते है। मन समस्त

संकल्पों का अयन है।[1] भगवान की शरण में जाना ही श्रेयस्कर है क्योकि जीवो के लिए पीड़ा निवारण के विषय केवल परम ब्रह्म परमात्मा ही है और उन्हें भी जीव अत्यन्त प्रिय है। अतः जीव का भी कर्तव्य बनता है कि वह उनसे (भगवान) वैसा ही प्रेम करे जैसा अपने से।[2] फिर भी किसी प्रकार की पीड़ा की परिकल्पना शेष नही रह जाती। जैसे शक्ति से शक्तिमान पृथक नही हो सकता उसी तरह जीव से भगवान। भगवान से जीव का पृथक होना संभव नही है। भक्ति भगवान को सदैव प्रिय है।[3] और पीड़ा के समनार्थ विशेष रूप से आकृष्ट करने वाली और वशीकारणी भक्ति लाभदायक है। भगवान भक्ति का ही नाता मानते है।[4] उन्हें केवल प्रेम ही प्यारा है।[5] सेवक उन्हें इतना प्रिय है कि वह उसकी सेवा से सुख और उसके बैरी से बैर मानते है।[6] अतः उनकी कृपा प्राप्ति का जितना अधिक साधक "निष्केवल प्रेम" है उतना योग मख आदि कोई भी साधन नही है।[7]

---

1 – सर्वेषामा् संकल्पनां मन एकायनमेवम्

(वृहदारण्यक उपनिषद् 2/4/11)

2 – "आत्मानेव प्रियमुपारीत"

(वृहदारण्यक उपनिषद् 1/4/8)

3 – पुनि रघुबीरहि भगति पियारी।

(रामचरित मानस 7/116/2)

4 – कह रघुपति सुनु भामिनि बाता। मानौ एक भगति कर नाता।।

(रामचरित मानस 3/35/2)

5 – रामहि केवल प्रेम पियारा।

(रामचरित मानस 2/137/1)

6 – मानत सुखु सेवक सेवकाई। सेवक बैर बैरू अधिकाई।।

(रामचरित मानस 2/219/1)

7 – उमा जोग जप दान तप नाना मख ब्रत नेम।

राम कृपा नहि करहि तसि तसि निष्केवल प्रेम।।

(रामचरित मानस 7/117 ख)

सेवक पर इस प्रकार की ममता राम की ही विशेषता नही है। यह सारे संसार की प्रथा है। प्रत्येक स्वामी को उसका पुनीत, सुशील तथा सुमति सेवक प्रिय होता है। अपने सेवक पर राम की प्रीति और भी अधिक है। जब सेवक स्वामी को आत्म समर्पण कर देता है तब उसकी पीड़ा निवारण का भार स्वामी स्वयं उठाता है। यही सिद्धान्त राम का है। वे अपने जन की रक्षा स्वयं करते है। सारी लंका जल गयी लेकिन राम की कृपा से विभीषण का घर बचा रहा। भक्त की सीमा का अतिकमण अक्रान्ता के लिए आत्मघातक है। राम के सेवक का अपमान ही रावण के संहार का कारण बना। राम के लिए ज्ञानी प्रौढ़ पुत्र और भक्त शिशु के समान है। भक्त राम के भरोसे है अतएव वे काम, कोध, लोभ आदि से उसकी निरन्तर रक्षा करते है।

भक्त कवि तुलसीदास जी का काव्य राम प्रधान तो है ही उससे भी अधिक वह सभी प्रकार की पीडाओं के निवारण हेतु भगवत कृपा काव्य है। उन्होंन अपनी छोटी बड़ी समस्त रचनाओं में कथा प्रसंगो के सहारे भक्तों की पीड़ा दूर करने में राम – कृपा का उल्लेख किया है। तुलसी के इष्ट देव श्री राम व्यापक ब्रह्म निरंजन होते हुए भी केवल भक्तों के लिए अपने लोक रंजक रूप में प्रवतपाल है और भक्त भय हारी है। जीव के लिए राम की कृपा ही एकमात्र आधार है और यह कृपा जीव को सहज ही प्राप्त होती है। यद्यपि इसकी प्राप्ति के लिए योग, जोग, तप आदि का विधान है लेकिन तुलसीदास जी ने किसी भी साधन विशेष की आवश्यकता नही बतायी है। पीड़ा निवारण के लिए केवल अनन्य शरणागति गुण की आवश्यकता है।

समस्त प्रकार की पीड़ा को दूर करने के लिए रामनाम में संजीवनी शक्ति है। श्री राम कृपा की श्रमहारिणी शक्ति का उदाहरण मानस के लंका काण्ड में मिलता है। राम रावण युद्ध में वानरी सेना हताहत होकर थक सी गयी थी। शिविर में आकर श्री राम की कृपा दृष्टि मात्र से ही सारी सेना अनुप्रणित हो गयी और पुनः युद्ध के लिए उद्धत हो गयी। संसार सागर से पार होने के लिए तथा भौतिक, आधिभौतिक दैविक आदि दैविक तथा लौकिक पीड़ा से छुटकारा पाने के लिए भगवत् कृपा ही एकमात्र आधार है। यही परम विश्राम का कारण है। इसी कृपा के सहारे मनुष्य षड्विकारों से मुक्त होता है, और चैतन्य लाभ प्राप्त करता है। मोह निद्रा से जागने के लिए इससे बढ़कर कोई दूसरा सुलभ साधन नही है, जिस पर भगवान की अहैतुकी कृपा हो जाती है, वह दुःख मूलक संसारिक सुखों से विमुक्त होकर भक्ति साधना में तत्पर हो जाता है।[1]

---

1 – राम कृपा भव निशा सिरानी, जागे फिरि न डसैहौ।
पायेऊँ नाम चारू चिंतामनि, उर करते न खसैहौ।।
(विनय पत्रिका 105 / 1–2)

दीन वत्सल श्री राम अपने भक्तों के हृदय की पीड़ा शीघ्र दूर कर देते है। तुलसीदास जी ने लौकिक और पारलौकिक सभी सिद्धियां और सफलताए प्राप्त होने में भगवान राम की कृपा को ही एक कारण माना है।[1] "रामाज्ञा प्रश्नशलाका" में तुलसीदास जी ने पुत्र लाभ, व्यापार लाभ, स्वास्थ्य लाभ और सब प्रकार का सुख संतोष श्री राम कृपा से सुलभ बताया है। इस प्रकार सम्पूर्ण तुलसी साहित्य सागर मर्यादा पुरूषोतम् भगवान राम के कृपामृत से सर्वथा परिपूर्ण है। इसे कणिकामात्र की उपलब्धि से भक्तजन मुक्ति का भी निरादर करते भक्ति के साम्राज्य मे प्रवेश कर स्वच्छन्द विचरण करते है।

भक्त कवियों का जीवन – दर्शन निवृत्ति मूलक होता है। पाश्चात्य जीवन दर्शन प्रवृत्ति मूलक दर्शन होने के कारण संभवतः समाज को प्रगति की ओर ले जाने की क्षमता रखता है, परन्तु वह भौतिक वाद के दोषों से आक्रान्त और मनुष्य को वास्तविक लक्ष्य तक ले जाने में भी है। अतः भारतीय चिन्तको ने निवृत्ति मूलक दर्शन में समन्वय करके जीवन में त्याग की महत्ता के साथ – साथ समस्त प्रकार की पीड़ा के समाधान हेतु ईश्वर के प्रति अनुरामात्मिका भक्ति को श्रेयस्कर सिद्ध किया। भारतीय जीवन दर्शन मानवतावादी है, और आधुनिक राम काव्य साकेत के नायक भगवान श्री राम के अपने कार्यो द्वारा इसी का महत्व प्रतिपादित करते हुए प्रतीत होते है।

श्री मैथिलीशरण गुप्त, हरिऔध, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', सुमित्रानन्दन पंत, बलदेव प्रसाद मिश्र, रामावतार 'अरूण' आदि सभी कवियों ने भौतिकता के स्थान पर आध्यात्मिकता के महत्व को स्वीकार किया है। आध्यात्मवाद सम्पूर्ण जगत में एकात्म भाव का प्रतिष्ठापक है। एकात्म भाव अथवा अद्वैतभाव ही मुक्ति है। जिस व्यक्ति के अन्दर इस प्रकार की तीव्र अनुभूति उत्पन्न होती है, अर्थात जो समस्त विश्व को श्री राम का धाम मानकर सबमें श्री राम के स्वरूप का दर्शन करता है, वह परम शौभाग्यशाली है।[2]

---

1 – राम कृपा तुलसी जनको जग होत भले को भलाई भलाई।।
(कवितवली 7/130)

सिला सुतिय भइ गिरि तरे मृतक जिए जग जान।
राम अनुग्रह सगुन शुभ, शुलभ सकल कल्यान।।
(रामाज्ञा प्रश्न 6/5/6)

बालक कोशल पाल के सेवक पाल कृपाल।
(रामाज्ञा प्रश्न 44/7)

तुलसी राम कृपालु को विरद गरीब निवाज।
(रामाज्ञा प्रश्न 3/5/7)

2 – स्वामी एक राम है, उन्ही का ध्यान विश्व यह,
जन में जनार्दन की ज्योति नित्य जागी है।
तीव्र अनुभूति इस भॉति जिसकी है हुई,
नश्वर जगत में वही तो बड़भागी है।।
('साकेत – संत – डॉ0 श्री बलदेव प्रसाद मिश्र)

आध्यात्मवाद की यही सबसे बड़ी देन है कि वह जीवन में त्याग का महत्व प्रतिपादित करता है। आधुनिक काव्यो में त्याग को जीवन का एक श्रेष्ठ आदर्श माना गया है, और इसी को पीड़ा निवारण का हेतु माना गया है।[1] जो व्यक्ति दूसरों के लिए सर्वस्व समर्पित कर देता है वही परमपूज्य, वन्दनीय और पीड़ा संहारक माना जाता है।[2] मैथिलीशरण गुप्त ने इसी आदर्श को ईश्वर कहा है।[3] इस कथन की पुष्टि करते हुए भगवान की सर्वयुगीन शास्वत विद्यमानता का समर्थन भी गुप्त जी द्वारा किया गया है।[4]

आधुनिक काव्यों में भगवत् कृपा का वह स्वरूप नही पाया जाता, जो भक्ति काव्यों में मिलता है। क्योकि भक्ति काव्यों में भगवान के अनुग्रह से सांसारिक माया मोह से मुक्ति और निरन्तर समस्त प्रकार की पीड़ा को दूर करने के लिए भगवान की भक्ति की कामना की गयी है। आधुनिक काव्यों में मानवतावादी जीवन दर्शन के प्रभाव से – "तेन व्यक्तेन भुंजीथाः" के आदर्श पर जीवन में त्याग की परमआवश्यकता प्रगट की गयी है। श्री राम जीव को संसार से विरत करके तारने के लिए ही अवतरित नही होते अपितु वे विश्व समस्त प्राणियों की पीड़ा को दूरकर नवजीवन मूल्यों की प्रतिष्ठा, उच्चतर संस्कृति की संरचना और संतुलित जीवन दृष्टि की स्थापना के लिए अवतरित होते है। श्री राम और रावण का युद्ध आध्यात्मिकता और भौतिकता के संघर्ष का प्रतीक है। उनका लक्ष्य है इसी धरती को सुखी बनाना, और मनुष्य को मानवता का पाठ पढ़ाना।

इस प्रकार हम देखते है कि आधुनिक कवियों ने श्री राम की भक्ति मूलक विचार धारा के स्थान पर सांस्कृतिक आदर्शो की रक्षा को अधिक महत्व दिया। दूर – दूर तक वन्य प्रदेशों मे भी इस आध्यात्मवादी संस्कृति का दीप जलाने वाले ऋषि मुनि राक्षसों से उत्पीड़ित हो अपनी पीड़ा के निवारण के लिए श्री राम का संरक्षण चाहते है। रीछ, वानर, कोल, किरात भील आदि ऐसे भोले जीव जातीय मनुष्य है जो जंगलों में प्रकृति के सहारे जीवन यापन करते है। राक्षस भोगवादी सभ्यता को अपनाकर सबको पीड़ा पहुँचाते रहे है। वे अपना ही भोग विलास देखते है, तथा उसकी पूर्ति के लिए दूसरे प्राणियों को पीड़ा पहुँचाते है। श्री राम ने सभी जंगली जातियों की पीड़ा को दूर करने के लिए राक्षसों से लोहा लिया और राक्षसों के नेता रावण का अंत कर निवृत्ति मूलक संस्कृति का प्रकाश विकीर्ण किया।

---

1 – ' संचय नही, अपितु जीवन में है नित त्याग सार राजन'
('उर्मिला' – श्री नवीन)

2 – मनुजो में वे परमपूज्य हैं वंद्य है। जो परार्थ – उत्सर्गी – कृत जीवन रहे।।
सत्य न्याय के लिए जिन्होंने अटल रह। प्राण दान तक किए सर्व संकट सहे।।
(' वैदेही वनवास 9/57 श्री हरिऔध)

3 – आदर्श ही ईश्वर है हमारा।
(मैथलीशरण गुप्त ' साकेत')

4 – राम तुम्हारा वृन्त स्वयं ही काव्य है,
कोई कवि बन जाय, सहज सम्भाव्य है।।
(साकेत, सर्ग 5)

(ग) आंजनेय भक्ति से पीड़ा का निवारण –

गोस्वामी तुलसीदास जी के आध्यात्मिक चिंतन किंवा भक्ति पद्धति की एक विशेषता यह भी है, कि इस क्षेत्र में उन्होंने वर्णाश्रम धर्म की कठोर मर्यादाओं को भी बहुत बड़ी सीमा तक शिथिल कर दिया है। हम सभी जानते है कि भक्ति के उच्चतम क्षेत्र में केवल प्रीति की रीति का महत्व ही सर्वोपरि है। यहॉ आकर ऊँच और नीच के भेद का प्रश्न अपने आप समाप्त हो जाता है।

रामचरित मानस के अर्न्तगत हम देखते है कि केवट एक बार भक्ति की कोटि में परिगणित कर चुकने के बाद वशिष्ठ का ब्रम्हणत्व मनुष्यता की उस अव्याहत एवं अखण्ड भाव भूमि का आलिंगन कर सकने में समर्थ हो पाता है, जहॉ एकमात्र स्नेह का अधिकार है। भक्ति के क्षेत्र में समानता के सिद्धान्तों को लागू करने के लिए प्रारम्भिक विचार के क्षण तो माने ही जा सकते है। इसके अतिरिक्त इस भेट मे तत्सम्बन्धी अन्य कोई विशेषता नही दिखाई देती है।

भगवत प्रेम ही भक्ति का सर्वस्व है। जो तीव्र श्रद्धा वाले भक्त है, उनके लिए रागात्मिका भक्ति का द्वार हमेशा खुला रहता है। इस रागात्मिका भक्ति वाले भक्त बाहरी विधि विधानों का सहारा नही लेते। हनुमान जी तीव्र श्रद्धा वाले राम भक्तों में से एक है। भगवान राम की भक्ति ही उनका सर्वोपरि साधन है। वह अपनी इस रागात्मिका भक्ति को किसी प्रकार से अलग नही होने देना चाहते।

भक्ति रस में इष्ट देव ही आलम्बन विभाव है। उसके सम्बन्ध के सभी विचार और सभी सामाग्रियॉ उद्धीपन विभाव है। स्तभ, स्वेद, रोमांच, स्वरभंग, वेपुथ, अश्रु आदि अनुभाव है। ये अनुभाव भक्ति भाव के सूचक और प्रवर्धक भी है। जो किसी सांसारिक कामना की पूर्ति के लिए भक्ति करता है, उसे हम व्यवसायी की संज्ञा दे सकते है। क्योकि वह निश्चय ही इष्ट देव की अपेक्षा अपनी कामना पूर्ति को अधिक महत्व दे रहा है। सम्पूर्ण भौतिक जगत नश्वर है इसलिए परम वैराग्यशील बनकर अपने इष्ट की उपासना में रत रहना ही सच्ची भक्ति है। हनुमान जी इसी कोटि में आते है क्योंकि उनकी भक्ति निष्काम भक्ति है। भक्ति रस में स्वयं ही इतना आनन्द भरा हुआ है कि उसके आगे मुक्ति का आनन्द भी फीका पड़ जाता है। इसलिए वास्तविक भक्ति वही है जो वैराग्य की नीव पर स्थित है।

सच्ची भक्ति के लिए जिस प्रकार वैराग्य प्रधान भूमि है। उसी प्रकार विवेक का भी उतना महत्व है। सब कुछ इष्ट देव का समझना और सम्पूर्ण प्राणियों में इष्टदेव का ही दर्शन करना, आध्यात्मिक विवेक का प्रधान लक्षण है। जिस भक्ति में ऐसा विवेक होता है, वही स्वयं तर कर दूसरो को भी तार सकता है, और उसी से दूसरो का परम कल्याण होता है। ऐसा भक्त भगवान का प्रत्यक्ष रूप है, और कई दृष्टिकोणों से वह भगवान से भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है। हनुमान जी अपनी निष्काम भक्ति के द्वारा इसी कोटि के भक्तों की श्रेणी में आते है।

रामकाव्य के प्रणेता गोस्वामी तुलसीदास जी हनुमान जी की ही प्रेरणा से भगवान के सच्चे और पक्के प्रेमी भक्त बने। इसीलिए रागात्मिका भक्ति की ओर उनका झुकाव रहना स्वाभाविक

था। उन्होंने भक्ति के साधनों में रागात्मिका भक्ति वाले साधनों का ही विशेष उल्लेख किया है। भक्ति के आनन्द के लिए ही भक्ति की जाए, यही गोस्वामी जी को अभीष्ट था। आत्मा के भीतर परमात्मा का दर्शन करने के लिए जीव ऐन्द्रिय कार्यो को बन्द करने पर यह जान पाता है कि परमात्मा सर्वत्र विद्यमान है। ऐसी अनुभूति होने पर वह किसी भी अन्य जीव पर ईर्ष्या नही करता उसे मनुष्य तथा पशु में कोई अन्तर नही दिखता; क्योकि वह केवल आत्मा का दर्शन करता है। अध्यात्मवादियों का समूह जो परमेश्वर के अचिन्त्य, अव्यक्त निराकार स्वरूप के पथ का अनुसरण करता है, ज्ञान योगी कहलाता है, और जो भगवान की भक्ति में रत रहकर पूर्ण आराध्य भावना अमृत में निमग्न रहते है वे भक्ति योगी कहलाते है। गीता में भगवान कृष्ण ने स्पष्ट कहा है कि जो भक्त अपने सम्पूर्ण कार्यो को मुझमें अर्पित करके तथा अविचलित भाव से मेरी भक्ति करते हुए मेरी पूजा करते है और अपने मन को मुझ पर स्थिर करके निरन्तर मेरा ध्यान करते है, उन प्राणियों को मै जन्म मृत्यु के सागर से शीघ्र पार कर देता हूँ।[1]

जो भगवान की भक्ति में रत रहता है, उसका भगवान के साथ प्रत्यक्ष सम्बन्ध हो जाता है और ऐसा भक्त कभी भी भौतिक धरातल पर नही रहता वह सदैव परमात्मा में वास करता है।

वस्तुतः भक्तियोग इन्द्रियों का परिष्कार है। संसार में इस समय सारी इन्द्रियां अशुद्ध है क्योंकि वे इन्द्रियां इन्द्रियजनित भोगो की तृप्ति में लगी हुई है। लेकिन भक्तियोग के अभ्यास से ये इन्द्रियां पूर्ण रूपेण शुद्ध की जा सकती है। ऐसा करने से मनुष्य धीरे – धीरे ज्ञान के स्तर तक उठ जाता है। शुद्ध भक्ति वालाल मनुष्य किन्हीं भी परिस्थितियों मे विचलित नही होता, न ही किसी के प्रति ईर्ष्या करता है। वह अपने शरीर को कुछ नही मानता इसीलिए वह मिथ्या अंहकार से ग्रस्त नही होता है और सुख तथा दुख में समभाव रखता है वह सहिष्णु होता है और भगवद्कृपा से जो कुछ प्राप्त होता है उसी से संतुष्ट रहता है। इसीलिए ऐसा भक्त सदैव परमात्मा का स्मरण करते हुए पूर्ण प्रसन्न रहता है। ऐसे भक्त भगवान को अत्यन्त प्रिय होते है। यही कारण है कि हनुमान जी राम को सबसे अधिक प्रिय थे।

अपने आप को पूर्णतया भगवान को समर्पित कर देना, उसके मनोभाव, प्रेरणा अथवा आज्ञानुसार प्रेम पूर्वक उनकी सेवा करना उन्हें निरन्तर सुख पहुँचाना और बदले में कुछ भी न चाहना यही भक्त का स्वरूप है। ये सारी विशेषताए पूर्णतया हनुमान जी के चरित्र मे स्पष्ट रूप से पायी जाती है। वे अपने शरीर, मन, बुद्धि, विवेक भाव, योग्यता, समय आदि को एकमात्र भगवान का समझकर उन्हें अपने इष्ट देव श्री राम की सेवा में लगाये रहते है। वे आत्म निवेदन द्वारा पूर्णरूप से भगवत – परायण है। भगवान के ही सुख में अपने को सुखी मानने में उनका जीवन ओत – प्रोत है।

---

1 – तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात्।

भवामि न चिरात्पार्थ मय्यावेशितचेतसाम्।।

(गीता 12/7)

वैष्णवाचार्यो के मत से दास्य रीति ही भक्ति का प्रथम सोपान है। इस रीति में भक्त अपने आप को सेवक एवं इष्ट को स्वामी मानकर उनकी सेव्य – सेवक भाव से सेवा करता है। सच्चा सेवक वह है, जिसके मन में अपनी वस्तु शरीर, मन, बुद्धि आदि पर न तो अपनापन रह जाता है और न सेवा करने का लेश मात्र अभिमान रह जाता है, क्योंकि वह समझता है कि सेव्य की ही शक्ति एवं प्रेरणा से ही उन्हीं की वस्तु उन्हें समर्पण कर रहा है। सेव्य ने सेवा स्वीकार कर ली तो वह अपने आप को कृत कृत्य मानता है। इतना ही नही अपने इष्ट देव के भक्तों की सेवा का अवसर मिल जाने पर वह अपना अहोभाग्य समझता है। सेवा करना ही जिनका लक्ष्य है, जिनका जीवन ही सेवामय है भगवान के ऐसे अनन्य सेवा रसिक सालोक्य, सार्ष्टि, सामीप्य, सारूप्य और सायुज्य मुक्तियां भी दी जाये तो वे ग्रहण नही करते।

श्री हनुमान जी की हर समय एक ही अभिलाषा रहती है कि मै ऐसी कौन सी सेवा करूँ जिससे मेरे आराध्य श्री राम को परम सुख मिले। हनुमान जी श्री राम के मनोभावो को समझने में इतने दक्ष है, कि भगवान के मन में संकल्प उदय होने के पूर्व ही वह आवश्यक सेवा प्रस्तुत कर देते है। लंका में भगवान के प्रवेश के पूर्व ही उन्होंने उनके ठहरने तथा सैन्य शिविर के लिए यथोचित् सुरक्षित स्थल आदि की व्यवस्था कर ली। वे अपनी सेवा पटुता के द्वारा भगवान राम को सदैव निश्चिन्त किये रहते है। हनुमान जी की दास्य भक्ति गागर में सागर के समान है। जिससे उनके जीवन का प्रत्येक क्षेत्र प्रभावित है। समुद्र पार करना, लंका दहन, संजीवनी आनयन, भयंकर राक्षसों का अवमर्दन आदि सेवामूर्ति श्री हनुमान जी की सेवा भक्ति के ज्वलन्त उदाहरण है। सेवा में इतने दत्तचित्त है कि श्री राम के जमहाई लेने पर चुटकी बजाने जैसी छोटी सी छोटी सेवा में भी वे चूक नही करते। वास्तव में हनुमान जी की सेवा – चातुर्य अतुलनीय है। अतः वे श्री राम जी के मानस अन्तराल में उठने वाले सूक्ष्माति सूक्ष्म भावों को भी जान लेते है। और तत्काल तदनरूप सेवा प्रस्तुत कर देते है। उनके सम्पूर्ण जीवन यंत्र में सेवा – भक्ति विद्युत की तरह संचरण करती है। प्रेमाभक्ति में तो वे विप्रलम्भ परकीया निष्काम भाव की पराकाष्ठा का भी अतिक्रमण कर जाते है। लौकि जगत में उन्हें सर्व समर्थ अष्ट सिद्धियां और नौ निधियों का दाता माना गया है। हनुमान जी की भक्ति अतुलनीय है। उनके रोम रोम में परम दिव्य नाम "राम" अंकित है। हनुमान जी आजन्म नैष्ठिक ब्रह्मचारी है। कहा जाता है हनुमान जी ने अपने बज्र नख से पर्वत की शिलाओं पर एक रामचरित काव्य लिखा था। उसे देखकर महर्षि बाल्मीकि को दुःख हुआ कि यदि यह काव्य लोक में प्रचलित हुआ तो मेरे आदि काव्य का समादर न होगा। ऋषि को संतुष्ट करने के लिए हनुमान जी ने वह शिलाएं समुद्र में ड़ाल दी । सच्चे भक्त यश, मान, बड़ाई आदि की लेश मात्र भी आकांक्षा नही करते। वह अपने आराध्य की गुण लीला में मस्त रहते है। हनुमान जी श्री राम कथा श्रवण, राम नाम कीर्तन के अनन्य प्रेमी है।

श्री सीता जी के शोक संताप का नाश करने वाले, घोर संसार रूपी मोह निशा का नाश करने वाले रावण के अशोक वन को उजाड़ने वाले, प्रचण्ड सूर्य मण्डल को लाल – लाल खिलौना समझकर निगल जाने वाले श्री राम जी को विजय लाभ कराने वाले, पृथ्वी, आकाश, पाताल, में

निर्बाध रूप से विचरण करने वाले, महाबली – पराक्रमी राक्षसों के दल को युद्ध क्षेत्र में कोल्हू मे डालकर धानी की तरह पीस देने वाले, अंजनी नंदन आंजनेय सभी प्रकार के दैहिक, दैविक, भौतिक, लौकिक दुःखों के समूल नाश कर्ता है। हनुमान जी का चरित्र भगवान श्री रामचन्द्र जी से इतना अनुस्यूत है कि श्री राम चर्चा के प्रसंग में हनुमान जी की चर्चा अनिवार्य है। हनुमान जी के चरित्र का विस्तार बाल्मीकि रामायण तथा तत्सम्बद्ध इतर रामायणों में उपलब्ध होता ही है, परन्तु पुराण साहित्य भी उनके चरित्र का कुछ ऐसा उल्लेख करता है जो अन्यन्त्र अप्राप्त है। समग्र पुराणों के विपुल साहित्य के अन्वेषण और अनुशीलन के बिना हनुमान जी के पौराणिक आख्यान का यथार्थ परिचय नही मिल सकता। स्कन्ध पुराण का अवन्ती खण्ड कहता है कि हनुमान जी से बढ़कर जगत में कोई भी प्राणी नही है, चाहे पराकम, बुद्धि, उत्साह और प्रताप को देखे चाहे सुशीलता, माधुर्य तथा नीति को परखे, चाहे चातुर्य सुवीर्य और धैर्य पर दृष्टि डाले, हनुमान जी के समान इस विशाल ब्रह्माण्ड में कोई प्राणी नही है। विक्षुब्ध महासागर सम्पूर्ण लोको को दग्ध कर डालने के लिए उद्यत हुए, संवर्तक, अग्नि तथा प्रजाओं का संहार करने के लिए, उठे हुए काल के समान प्रभावशाली हनुमान जी के सामने कोई नही ठहर सकता।[1]

भारतीय संस्कृति मारूत नंदन हनुमान जी से अधिक पराक्रमी भक्ति की कल्पना ही नही कर सकती। इसीलिए बजरंगबली का नाम स्मरण करके भारतीय योद्धा युद्ध क्षेत्र में कूद जाता है, और विजय लक्ष्मी का आलिंगन करता है। हनुमान जी का चरित्र सेवा और समर्पण का प्रत्यक्ष रूप है।

हनुमान जी की वियोग रूचि भी अपने ढ़ंग की निराली है। लौकिक अथवा पारमार्थिक पुरूष कही भी अपने इष्ट का वियोग नही चाहते। जैसे – पतिव्रता पत्नी, पति का और भक्त भगवान का वियोग कदापि नही चाहते। परन्तु हनुमान जी इन सबसे विलक्षण है। भगवान श्री राम जब स्वाधाम पधारने लगे तब हनुमान जी ने उनसे यह वरदान मॉगा था कि हे भगवन आप मुझे यहीं पृथ्वी लोक में निवास करने की आज्ञा प्रदान करने की कृपा करें, क्योंकि जब तक आपकी अनुपायनी परम पावनी कथा इस पृथ्वी पर होती रहेगी मै यहॉ रहकर परम प्रेम से श्रवण करता रहूॅगा।[2]

---

1 – पराक्रमोत्साहमतिप्रतापैः

सौशील्यमाधुर्यनयादिकैश्च

गाम्भीर्यचातुर्यसुवीर्यधैर्ये

हनूमतः कोऽप्यधिकोऽस्ति लोके।।

(स्कन्ध पुराण अवन्ती खण्ड 18 / 62 / 75)

2 – यावद् रामकथा वीर चरिष्यति महीतले।

तावच्छरीरे वत्स्यन्तु प्राणाः मम न संशयः।।

(बाल्मीकि रामायण 7 / 40 / 17)

भक्त शिरोमणि हनुमान जी के कार्यकलाप, आचार विचार एवं व्यवहार आदि न केवल हिन्दू जाति के लिए प्रत्युत्त मानव मात्र के लिए परम कल्याण कारी अनुकरणीय है, जिनके अनुकरण से प्रत्येक व्यक्ति अपने लौकिक और पारलौकिक जीवन को सफल कर सकता है। इसीलिए अंजनी नंदन आंजनेय भारत वासियों के लिए ऐसे लोकप्रिय इष्टदेव है कि उनके अनुयायी भक्त कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक फैले है। नेपाल, मलेशिया, इण्डोनेशिया, जापान, जावा, सुमात्रा आदि विदेशों में भी हनुमान जी अत्यन्त लोकप्रिय है। हनुमान जी का व्यक्तित्व परमोज्वल, लोकोपकारी एवं अद्भुद् है। उनके आचार विचार भाव, गुण, चरित्र एवं जीवन की एक एक घटना मानव मात्र के लिए निःश्रेयस और अभ्युदयकारी है। उनके जीवन में अध्यात्म और व्यवहार का मणिकंचन संयोग है। हनुमान जी का चरित्र कर्म, भक्ति और ज्ञान की एक ऐसी चलती फिरती त्रिवेणी है, जिसमें यदि कोई अवगाहन करले तो उसका परम कल्याण निश्चित है। हनुमान जी का निष्काम कर्मयोग अथवा दास्य रति एक ऐसी रहस्यात्मक चाभी है जो श्रेय और प्रेम के तालों को बड़ी सुगमता से खोल देती है। वह इतनी परिपूर्ण लाभप्रद एवं कल्याणकारी है कि आज भी मानव इस साधना में परिनिष्ठित होकर शीघ्रातीशीघ्र शान्ति संतोष एवं परमोत्कर्ष प्राप्त कर लेता है। अत्यन्त बलशाली परम पराकमी ज्ञानियों में अग्रगण्य तथा भगवान श्री राम के अनन्य भक्त हनुमान जी का जीवन भारतीय जनमानस के लिए सदैव प्रेरणास्रोत रहकर मंगलकारी सिद्ध होगा।

(घ) – तुलसी के रामकाव्य में आधिभौतिक पीड़ा –

जीव कर्ता और भोक्ता है। कर्म जन्म सुख दुःख फल का भोक्ता होने के कारण ही उसे संसारी कहा जाता है। जीव का सुख दुःख भोगना ही उसका संसारित्व है।[1] वह कर्म करने मे स्वतन्त्र किंतु फल भोगने मे परतन्त्र है। वह अपने कर्म क अनुसार ही फल भोगता है। कर्मवश विविध योनियां मे जन्म लेता है, कर्म से ही उसे सद्‌गति मिलती है। नैतिक दृष्टि से जीव के कर्म दो प्रकार के होते है – विहित और अविहित। शुभ और अशुभ। इन्ही को नामान्तर से पुण्य और पाप भी कहा गया है। जीव के शुभाशुभ कर्मो के अनुसार इस फल भोग का नियामक ईश्वर ही है। आधिभौतिकता के सम्बन्ध में तुलसी ने दैववाद कायरों तथा आलसियों की तीव्र जल्पना की है। ज्ञान के प्रतीक बृहस्पति ने भी इसी बात को उपयुक्त माना है। कही – कही पर दैववाद, विधिवाद का उपस्थापन मिलता है।[2] समस्तम जीव शतरंज के शक्ति हीन मोहरो की भॉति है। वह स्वतः कुछ कर सकने में असमर्थ है। इसी को विद्वानों ने आधिभौतिक पीड़ा का नाम दिया है, लेकिन उनकी गति राम के अधीन है और राम एक पूर्ण ब्रह्म है। वे जीव को इस संसार में कठपुतली की भॉति नचाते है।[3]

यह बात विशेष रूप से लक्ष्य करने योग्य है कि तुलसीदास ने भौतिकवाद का उल्लेख प्रायः कष्टपूर्ण स्थितियों में ही किया है। यह मानव मन की स्वाभाविक प्रवृत्ति है कि वह इस भौतिक जगत में जन्म लेकर कर्म पथ पर असफल हो जाने पर हतास होकर दैववाद का समर्थक बन जाता है। जबकि कवि की एताद्रशी अभिव्यंजना इस बात का पोषण करती है कि दैववाद (भाग्यवाद) उसका सिद्धान्त नहीं है। उसे केवल पुरुषार्थ करने का अधिकार है, फलोपलब्धि का नही ।

दैववाद के प्रसंग में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि जब ईश्वर ही जीव तथा उसके कार्य का स्वामी है, उसे नचाने वाला उत्प्रेरक है, पराधीन जीव ईश्वर और उसकी माया की प्रेरणा से ही कर्म करता है, तब फिर भगवान की सृष्टि में भौतिक रूप में जीवो के सुख दुःख में विषमता क्यों है। उत्तर इसका यह है कि ईश्वर अन्याय नही करता। सम्पूर्ण सृष्टि उसकी ही है।

---

1 – सुख दुःख संभोगः संसारः, पुरूषस्य च सुखदुःखानां संभोक्तृत्वं संसारित्वमं।

(गीता, 13/20 पर शा0 भा0)

2 – तुलसी जसि भवितव्यता तैसी मिलै सहाइ।

आपु न आवहि ताहि पहिं ताहि तहाँ लै जाइ।।

(रामचरित मानस 1/159 ख दोहा 450, विष्णु पुराण 1/19/43–45)

3 – उमा दारू जोषित की नाई।

सबहि नचावत राम गोसाई।।

(रामचरित मानस 4/11/4)

उसकी दृष्टि में सभी समान है, लेकिन जीव के अपने शुभाशुभ कर्म ही उसमानता के लिए उत्तरदायी है। जीवों के शुभाशुभ कर्मो का वैषम्य ही इस विषम सृष्टि का वास्तविक उत्तरदायी है।

भौतिक जगत में कर्म की ग्रन्थि मनुष्य के हाथ में है, लेकिन उसमें कर्म की ग्रन्थि जीव ने स्वयं दी है। वह कर्म करने में स्वतंत्र है। ईश्वर उसके पूर्व संस्कारों के अनुसार ही उसे शासित करता है। फल भोग में वह स्वतंत्र नहीं है। शुभाशुभ फलों की प्राप्ति उसे परमात्मा से ही होती है। तुलसी ने आधिभौतिक पीड़ा की उत्पत्ति जीव से न मानकर ईश्वर से मानी है। इसमें हम इस तथ्य पर पहुँचते है, कि कर्म अनादि है, किन्तु उसका अनादित्य प्रभाव परिलक्षित है। कर्म के द्वारा जीव इस भौतिक जगत से उठकर इन्द्रत्व, गणेशत्व और शिवत्व तक प्राप्त कर सकता है, तथा दैहिक, दैविक और भौतिक तीनो प्रकार के तापों से पूर्ण छुटकारा पा सकता है। यद्यपि जीव ईश्वर का अंश है। ईश्वर के स्वरूप लक्षण से सम्पन्न है, वह चेतन, सुखराशि और नित्य है ईश्वर की भॉति वह भी निर्विकार निर्मल, निरंजन और निरामय है तथापि दोनो में तादात्म्य नही है। जीव ईश्वर नहीं है। ईश्वर के समान भी नहीं है, क्योकि जीव जगत की भौतिकता में संलिप्त होकर विविध प्रकार के इन्द्रिय जन्म सुखों की प्राप्ति में फॅसकर ईश्वर तत्व से विलग हो जाता है। इसीलिए ईश्वर और जीव में शक्ति और मात्रा का बहुत भेद है।[1] जो ज्ञानाभिमानी जीव ईश्वर की बराबरी का दावा करता है, वह विविध प्रकार की नारकीय दुर्गति को भोगता है।[2] यह संसार जो भी जहॉ तक दिखाई देता है नश्वर है। ज्ञानाभिमानी जीव भौतिक जगत की चकाचौध में फॅसकर ईश्वर की सत्ता को भूल जाता है, और देहाभिमान में आकर अनेक प्रकार की प्रपंचनाओं के प्रपंच में नित्य प्रति भौतिक जगत के मोह में फसता चला जाता है। वह भूल जाता है कि इस संसार मे जो भी जीव पैदा हुआ है, वह ईश्वराधीन है, ईश्वर का नित्य प्रतिबिम्ब है। इस सम्बन्ध में शंकराचार्य का मत है, कि जल में सूर्य के प्रतिबिम्ब की भॉति जीव ईश्वर का आभास है, वह न तो साक्षात ईश्वर है और न तो वह स्वतन्त्र है।[3]

---

1 – ज्ञान अखंड एक सीताबर। मायाबस्य जीव सचराचर।।
जौ सबके रह ज्ञान एक रस। ईश्वर जोवहि भेद कहहु कस।।
माया बस्य जीव अभिमानी। ईस बस्य मांया गुनखानी।।
(रामचरित मानस 7/78/2–3–4)

2 – जौ अस हिसिषा करहि नर जड़ विवेक अभिमान।
परहि कलप भरि नरक महुँ जीव की ईस समान।।
(रामचरित मानस 1/66)

3 – तस्य च प्रतिबिम्बस्य सत्यमेवेति प्रतिबिम्बवादिनः।
मिथ्यात्वमेवेत्याभासवादिनः।।
(ब्रह्मसूत्र 3/2/20 पर शांकर भाष्य पृष्ठ 255)

मूलतः जीव और जगत् दोनो की सत्ता पराधीन है। दोनो ही ईश्वर के अधीन आश्रित और शासित है, दोनो ही ईश्वर से आविर्भूत और उसी में स्थित है। दोनो ही ईश्वरीय माया के वशवर्ती है। इन दोनो का साम्य होने पर भी जीव का स्वरूप जगत् से विनक्षण है।[1] वह जगत् की भॉति जड़ न होकर चेतन है, साविकार न होकर निर्विकार है, सावभव न होकर निरवभव है, अनित्य और मिथ्या न होकर नित्य और सत्य है। संसारी जीव को भौतिक जगत् में अपने कर्म फल भोगने के लिए किसी न किसी भोगायतन का आश्रय लेना पड़ता है। इसी भोगायतन का नाम शरीर है। सभी प्रकार की भौतिक पीड़ओं को सहने का काम शरीर को ही करना पड़ता है। जीव की चेष्टाओं किया कलापों, किया विधियों इन्द्रियों और अर्थो के आश्रय को ही शरीर कहा गया है।[2] इस भौतिक जगत् मे आकर जीव का स्वरूप ज्ञान माया के द्वारा आवृत्त हो जाता है। वह भोगायतन को ही अपना घर समझने लगता है। विनय पत्रिका के एक पद मे तुलसीदास जी ने जीव की जीवन यात्रा का व्यापक निरूपण किया है।[3] उनकी मान्यता है, कि जीव भगवान से विलग नही था। विलग होने पर उसने देह को गेह मान लिया। माया के कारण वह अपने स्वरूप को भूल गया। अनेक योनियों में जन्म लेता रहा। जीव स्वनिर्मित कर्म जाल में बॅधकर गर्भवास के जघन्य असीम वेदनाओं को सहता रहा। जन्म शैशव, कौमार्य और किशोर अवस्थाओं में विभिन्न प्रकार की पीड़ाओं को सहता रहा। युवावस्था में धर्म की मर्यादा त्यागकर संसृति चककारक कर्म करता रहा। वृद्धावस्था में असमर्थता, निरादर, व्याधि आदि शूलों से पीड़ित रहा। इस प्रकार इसी कम से चारो खानियों के महाभव चक में भ्रमण करता रहा। जीवन यात्री जीव के भोगायतन के संघटन – विघटन – कम की दृष्टि से उसे आवृत्त करने वाले पंच कोषों तथा तीनों शरीरों आदि में भ्रमण करता रहा।

---

1 – अनुराग सो निज रूप सो जग ते विलक्षण देखिये।

(विनय पत्रिका 136 / 11)

2 – न्याय सूत्र 1 / 1 / 11 और उस पर वात्स्यान भाष्य पृष्ठ 140 / 15–16

3 जिव जबते हरिते बिलगान्यो। तबते देह गेह निज जान्यों।।
माया बस स्वरूप बिसरायो। तेहि भ्रमते दारून दुख पायो।।
पायो जो दारून दुख, सुख – लेस सपनेहुँ नहि मिल्यो।
भव सूल शोक अनेक जेहि, तेहि पंथ तू हठि हठि चल्यो।।
बहु जोनि, जर, बिपति, मतिमंद! हरि जान्यो नहीं।
श्रीराम बिनु बिश्राम मूढ़! बिचारू लखि पायो कही।।

(विनय पत्रिका 136 / 1–2–3–4–5)

इस प्रकार कारण शरीर, सूक्ष्म शरीर और स्थूल शरीर इन तीनों का कारण अपने कर्म फलों के अनुसार जीव बार – बार इस मिथ्या जगत् में आकर आधिदैविक, आधिदैहिक और आधिभौतिक पीड़ाओं को झेलता रहा। इन सबके लिए तुलसी ने अपने रागकाव्य में यह प्रतिपादित किया है कि यह सब कुछ जो जीव के द्वारा कष्ट सहा जाता है, वह माया के वशीभूत होकर संसारी जो जाता है, उसी माया की प्रेरणा से चौरासी लाख योनियों मे भ्रमण करता है, तभी वह मोह माया और ममता रूपी गॉठ में बॅधता ही चला जाता है। तुलसीदास जी ने उत्तर काण्ड में इस आधिभौतिक जगत् की आधिभौतिक पीड़ा का विस्तृत वर्णन किया है।[1] अद्वैत वेदान्त के अनुसार जीव के स्वरूप ज्ञान को आवृत्त करने वाली अविद्या माया ही जीव के अगले जन्म का हेतु होने के कारण उसका कारण शरीर है। जीव को लपेटे हुए अविद्या माया जीव और ब्रह्म के बीच आवरण रूप है। दुर्निवार्य होने के कारण विषम प्रबल और प्रचण्ड है। वह ज्ञानी सुर मुनियों को भी भव पन्थ में घुमाती रहती है। इस प्रकार यह संसार प्रवाह स्वयं शाश्वत है।

जीव के कारण शरीर से उसके सूक्ष्म शरीर की उत्पत्ति होती है। यह शरीर अज्ञानोपहित जीव को वासना रूपेण उसके कर्म फलों का अनुभव कराता है। इसी का वर्णन तुलसी ने विनय पत्रिका के अनेक पदों में मन के विविध विकारों का जो विस्तृत निवेदन किया है वह इस प्रकार है –

तुलसीदास जी कहते है कि – हे राम, आप दीनो का उद्धार करने वाले रघुकुल में श्रेष्ठ, करूणा के स्थान, आधिभौतिक, आधिदैविक, आधि दैहिक सन्ताप का नाश करने वाले, इस संसार रूपी भयानक गहरे वन की कर्म रूपी वृक्षों की सघनता में लिपटी हुई वासना रूपी लताओं से व्याकुलता रूपी अनेक बिछे हुए कॉटो से बचाने वाल तथा इस संसार रूपी वन में चित्त की जो अनेक प्रकार की वृन्तियॉ है, तथा जो मांसाहारी बाज, उल्लू, काक, बगुले और गिद्ध आदि पंक्षियों का समूह है, से बड़े दुष्ट और छल करने में निपुण है,

---

1 – ईश्वर अंस जीव अबिनासी। चेतन अमल सहज सुख रासी।।
जो मायावश भयउ गोसाई। बध्यो कीर मरकट की नाई।।
जड़ चेतनहि ग्रंथि पारि गई। जदपि मृषा छूटत कठिनई।।
तब ते जीव भयउ संसारी। छूट न ग्रंथि न होइ सुखारी।।
श्रुटि पुरान बहु कहेउ उपाई। छूट न अधिक अधिक अरूझाई।।
जीव हृदयं तम मोह विशेषी। ग्रंथि छूटि किमि परइ न देखी।।
(रामचरित मानस 7 / 116 / 3–4–5–6–7–8)

जो छिन्द्र देखते ही जीव रूपी यात्रियों को सदैव दुःख दिया करते है। इसलिए हे रघुकुल तिलक श्री राम इस कराल कलिकाल से मुझे कृपा करके बचाइये।[1]

इस संसार मे काल रूपी ज्योतिषी हाथ में कर्म रूपी खडिया लेकर मोह रूपी पट्टी पर चराचर जीव रूपी अंको को मिटाता है हिसाब लगाता है, फिर भी गिन गिन कर एक एक जीव की रह लोक लीला मिटाता है।[2] यही इस भौतिक जगत् के अपार आधिभौतिक पीड़ा है। जीव का मन प्रायः सहज प्रवृत्तियों से प्रेरित होता है, और प्रायः ऐहिक काम्य पदार्थो में फॅसा रहता है। पुत्रैषणा, विन्तैषणा और लोकैषणा ये तीन प्रमुख है, परन्तु इस जगत के प्राणियों की चित्तवृन्ति कुछ अलग ही है। प्रायः देखने में आता है, कि आज के लोग मोर के समान है, वे सुन्दर वेष धारण करते है, परन्तु उनके हृदय में कपट सदैव विद्यमान रहता है। इस प्रकार मोर प्रवृत्ति वाले लोग बड़े कठोर होते है, क्योंकि वह सुन्दर दिखाई देने वाला मोर बड़े – बड़े जहरीले सर्पो को खा जाता है।[3] विषयी मनुष्य विषयों के लिए चेष्टा करते हुए यह नही समझते कि इस भौतिक जगत् में कही भी सुख नही है। वे विषयों के झूठे गुणों की प्रशंसा सुनने मे मरत रहते है, परन्तु ये सारे प्रपंचमय विषय सुख प्रत्यक्ष पारे के समान है।[4]

---

1 – दीन – उद्धरण रघुवर्य करूणा भवन शमन – संताप पापौघहारी।
विमल विज्ञान – विग्रह, अनुग्रहरूप, भूपवर, विबुध नर्मद खरारी।।
संसार – कंतार अति घोर, गंभीर, घन, गहन तरूकर्मसंकुल मुरारी।
वासना वल्लि खर – कंटकाकुल विपुल, निविड़ विट पाटवी कठिन भारी।।
विविध चित्तवृन्ति – खग निकर श्येनोलूक, काक वक गृध्र आमिष अहारी।
अखिल खल, निपुण छल, छिद्र निरखत सदा, जीवजनपथिकमन – खेदकारी।।
माहि रघुवंश भूषण कृपा कर, कठिन काल विकराल – कालित्रास – त्रस्त।
(विनयपत्रिका 90 / 59 / 1–2–3–8–9)

2 – करम खरी कर मोह थल अंक चराचार जाल।
हनत गुनत गनि गुनि हनत जगत ज्यौतिषी काल।।
(दोहावली – 75 / 249)

3 – हृदयें कपट बर वेष धरि बचन कहहि गढ़ि छोलि।
अब के लोग मयूर ज्यों क्यों मिलिए मन खोलि।।
(दोहावली – 99 / 332)

4 करत न समुझत झूठ गुन सुनत होति मत रंक।
पारद प्रगट प्रपंचमय सिद्धिउ नाउँ कलंक।।
(दोहावली – 79 / 260)

वे अज्ञानी पुरूष निरन्तर उन विषयों की ओर आकृष्ट होते हुए चले जाते है, परन्तु ज्ञानी, तपस्वी, सूर्यवीर, कवि, पंडित चाहे कोई भी मनुष्य हो इस संसार में ऐसा कोई नही है जिसको धन के घमंड ने टेढा न कर दिया हो, प्रभुता ने बहरा न बना दिया हो और जो स्त्री के नमन बाण से घायल न हुआ हो। इस प्रकार की अनेकानेक आधिभौतिक पीड़ाओं से यह संसार भरा पडा हुआ है। श्रमजीवी किसान, व्यापारी, भिखारी, भाट, सेवक, चंचलनट, चोर, दूत और बाजीगर सब पेट की आग बुझाने के लिए ही यत्न करते है, अनेक उपाय रचते है, पर्वतो पर चढ़ते है और शिकार की खोज में दुर्गम बनो मे विचरते है। ऊँच नीच कर्म तथा धर्म अधर्म क़रते है, अपने बेटा बेटी तक को बेच देते है।[1] आज के संसार में किसानों की खेती नही होती, भिखारी को भीख नही मिलती, व्यापारियों का व्यापार नही चलता, जीविका विहीन होने के कारण सब लोग दुखी होकर इधर उधर भटक रहे है। दरिद्रता रूपी रावण ने पाप रूपी ज्वाला को चारो ओर धधका दिया है।[2]

---

1 – किसबी किसान – कुल, बनिक, भिखारी, भाट

चाकर, चपल नट, चोर, चार, चेटकी।

पेट को पढ़त गुन गढ़त चढ़त गिरि,

अटत गहन – गन अहन अखेट की।।

ऊँचे नीचे करम, धरम – अधरम करि,

पेट को पचत, बेचत बेटा – बेटी की।

(कवितावली – उत्तरकाण्ड 132 / 96)

2 – खेती न किसान को , भिखारी को न भीख, बलि

बनिक को न बनिज, न चाकर को चाकरी।

जीविका विहन लोग सीद्यमान सोचबस,

कहै एक एकन सो कहाँ जाई, का करी ?

(कवितावली – उत्तरकाण्ड 132 / 97)

सब लोग कुल करनी, ऐश्वर्य, यश, सुन्दरता, धन, रूप, यौवन के ज्वर में जल रहे है। कही भी किसी को सांत्वना नही मिल रही है, अर्थात राजकाज रूपी कुपथ्य और भोग रूपी कुसमाज तथा वेद वुद्धि और विद्या पाकर उन्मत्त हो गये है। इस प्रकार इन कुरोगो ने सम्पूर्ण संसार को विवश कर दिया है। कलिकाल के वशीभूत होकर सभी लोग इस प्रकार हो गये है कि "ववूल ओर बहेड़े का वाग लगाकर उसकी वाड बनाने के लिए कल्प वृक्ष को काट कर ले आते है, और इतने नीच प्रकृति के हो गये है, कि हरिश्चन्द्र और दधीचि जैसे महापुरूषों को अपशब्द कहते है, स्वयं महापातकी है, परन्तु विष्णु भगवान और शिव जी तक का उपहास करते है। स्वयं भाग्यहीन है परन्तु बड़े बड़े भाग्यवानों को डाट देते है। इस प्रकार कलिकाल ने समस्त जीवो को दैहिक, दैविक, भौतिक, नानाविध पीड़ाओं से घेर रखा है।"[1] इसके साथ – साथ कर्तव्य क्या है, पढ़ने का फल क्या है, आदि का भेद नही जानते। ज्ञानाभिमान से व्यर्थ के वाद विवाद से विषाद बढ़ाकर खुद तथा दूसरे के हृदय को कष्ट पहुँचाते है, और वेद शास्त्र और व्याकरण पुराणों को पढ़कर वैसे ही निष्फल सिद्ध होते है, जैसे किसी सारहीन लकड़ी को चीरना।[2]

---

1 – ववुर – बहेरे को बनाइ बागु लगाइयत

रूधिबे को सोई सुरतरू काटियतु है।

गारी देत नीच हरिचंदहू दधीचिहू को,

आपने चना चबाइ हाथ चाटियतु है।।

आपु महापात की, हॅसत हरि – हरहू को,

आपु है अभागी, भूरिभागी डाटियत है।

(कवितावली – उत्तरकाण्ड 134 / 99)

2 – कीबे कहा, पढ़िबे को कहा फलु, बूझि न बेद को भेदु बिचारै।

स्वारथ को परमारथ को कलि कामद राम को नामु बिसारै।।

बाद – विवाद बिषादु बढ़ाइ कै छाती पराई औ आपनी जारै।

चारिहुको, छहुको, नवको, दस – आठ को पाठु कुकाठु ज्यों फारै।।

(कवितावली – उत्तरकाण्ड 137 / 104)

दिनोदिन दरिद्रता दुर्भिक्ष दुःख पाप और कुराज्य को दूना होता देख कर सुख और सुकरत संकुचित हो रहे है। ऐसा भयंकर समय आ गया है, कि बड़े – बड़े पापी कामधेनु को बेचकर गधी खरीदने लगे है, अर्थात अपने वाहुवल का सहारा लेकर अपने दॉव में सफल हो जाते है और भले आदमी का बुरा हो जाता है।[1] लोक और वेद की लज्जा को त्यागकर वेपरवाह हो गया है, और उदण्डता के कारण किसी की बात को नही समझता तथा जो मुँह में आता है वह बिचारे ही कह डालता है। "इस संसार में आज न तो हम जागते है न सोते है, जीवन का व्यर्थ खो रहे है। दुःख और रोग के कारण रोते है, और काम क्रोध की मानसिक व्यथा सहते है। राजा, रंक, रागी, विरागी, अभागी तथा भाग्यवान सभी जीव जल रहे है। इस प्रकार इस संसार में जितने धंधे दिखाई देते है वे सब कबन्ध (बिना सिर धड़) की दौड के समान है, जिनका अन्त चिता ही है।"[2] तुलसी के रामकाव्य में आधिभौतिक पीड़ा के बारे में जितना अधिक अनुशीलन किया जाए, अधिकाधिक मात्रा में सच्चाई की दरपरत दर खुलती जाएगी आशक्ति क्रोध, ईर्ष्या, कपट, कुटिलता आदि का कोई परावार नही है। इन सारी कुप्रवृत्तियों की अभिव्यक्ति तुलसी ने जितनी मार्मिकता के साथ की है, हिन्दी काव्य साहित्य के अन्य किसी ग्रंथ में सम्भव नही है। इसके साथ – साथ तुलसी ने इन रोगों की संख्या बहुत बड़ी बतायी है, लेकिन उनमे से सोलह व्याधियों और उन्नीस आधियों को असाध्य कुरोग मानकर केवल उन्हीं का नामोल्लेख किया है।

---

1 – दिन – दिन दूनो देखि दारिद, दुकालु, दुखु,
दुरितु दुराजु सुख सुकृत सकोच है।
भागे पैंत पावत पचारि पात की प्रचंड,
काल की करालता, भले को होत पोच है।।

मोह – मद मात्यो, रात्यों कुमति कुनारिसो,
बिसारि वेद – लोक लाज, ऑकरो अचेतु है।
भावै सो करत, मुँह आवै सो कहत, कछु,
काहु की सहत नाहिं, सरकस हेतु हैं।
(कवितावली – उत्तरकाण्ड 125 / 81–82)

2 – जागिये न सोइये, बिगोइए जनमु जायँ
दुख, रोग रोइए, कलेसु कोह – काम को।
राजा – रंक, रागी औ बिरागी, भूरिभागी ये,
अभागी जीव जरत, प्रभाउ कलि बाम को।।
(कवितावली – उत्तरकाण्ड 126 / 83)

इनमें भी छः मानस रोग अत्यन्त असाध्य है, काम, क्रोध, लोभ, मोह, मत्सर और मद। षडवर्ग के नाम से विख्यात ये जीव के अजेय छः शत्रु है।[1] इसीलिए उनकी विजय की आवश्यकता पर अपेक्षाकृत जोर दिया गया है।[2] इन मनोविकारों मे भी तीन खल अति प्रवल है – काम, क्रोध और लोभ। ये मुनियों के विज्ञान धाम मन को भी पल भर में क्षुब्ध कर देते है। नारी काम को, कठोर वचन क्रोध को तथा इच्छा दंभ लोभ को अतिशय बलवान बना देते है। उनमें भी जीव की प्रबलतम मनः प्रवृत्ति काम है।[3] मैथुन प्रवृत्ति के प्रसंग में इनकी प्रबलता अधिक है, क्योकि तुलसी उनका परिगणन करते समय कही काम को कही क्रोध को कही लोभ को प्रथम स्थान दिया है।[4]

---

1 – अमित वल परम दुर्जय निशाचर – निकर सहित षडवर्ग गो – यातुधानी

प्रबल वैराग्य दारूण प्रभंजन – तनय, विषय वन भवनमिव धूमकेतू।।

(विनय पत्रिका,88/58/5–8, स्कन्ध पुराण काशीखण्ड 35/34)

2 – छठ षट बरग करिय जय जनक सुता–पति लागि।

रघुपति – कृपा – बारि बिनु नहिं बुताइ लोभागि।।

(विनय पत्रिका, 256/203/8)

3 – तात तीनि अति प्रबल खल काम क्रोध अरू लोभ।

मुनि विज्ञान धाम मन करहि निमिष महुँ छोभ।।

(रामचरित मानस, दोहा 402/3/38 क)

लोभ के इच्छा दभबल काम के केवल नारि।

क्रोध के परूष वचन बल मुनिबर कहहि बिचारि।।

(रामचरित मानस, दोहा 402/3/38 ख)

4 – काम क्रोध लोभादि मद प्रबल मोह कै धारि।

तिन्ह महँ अति दारून दुखद मायारूपी नारि।।

(रामचरित मानस, 405/3/43)

उनकी दृष्टि से कामाभिभूत जीव मृतक के समान है।[1] इन सब मानस रोगों में मोह का स्थान प्रथम है। तुलसी ने मोह को समस्त शरीर और मानस रोगों का, सभी प्रकार के मलों का मूल माना है, क्योंकि मोह के कारण ही वे सारे विकार उत्पन्न होते है, जिनसे जीव द्वैत जनित सांसारिक दुःख का भागी बनता है।[2] मोह की महिमा अतिशय बलवती है। इससे अधिकाधिक मोह जनित मानसिक व्याधियॉ उत्पन्न होती है, और वे सब भ्रम भेद बुद्धि की पोषक है। जीव के सारे अकर्तब्य कर्म मोह प्रेरित हैं, मोह ग्रस्त व्यक्ति पर उपदेशों का प्रभाव नही पडता।[3] सन्त जन और वेद बार – बार कहते है कि ये सारे रिपु (काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सर) पापों के घर है। इनकी मोह श्रंखला इतनी दृढ़ है कि वह केवल अखिल लोक नायक परात्पर ब्रह्म श्री राम के छुड़ाने से ही छूट सकती है।

---

1 – कौल कामबस कृपिन बिमूढ़ा। अति दरिद्र अजसी अति बूढ़ा।।
सदा रोगबस संतत क्रोधी। विष्नु विमुख श्रुति संत बिरोधी।।
(रामचरित मानस 484 / 6 / 30 / 2–3)

2 – एक व्याधि बस नर मरहिं ए असाधि बहु व्याधि
पीडहि संतत जीव कहुँ सो किमि लहै समाधि।।
(रामचरित मानस 632 / 7 / 121)

मोह जनित मल लाग विविध बिधि कोटिहु जतन न जाई।
जनम जनम अभ्यास – निरत चित, अधिक अधिक लपटाई।।
(विनय पत्रिका, 118 / 82 / 1)

3 – लोक – बेद हूँ विदित बात सुनि – समुझि
मोह मोहित विकल मति थिति न लहति
छोटे बड़े, खोटे खरे मोटेऊ दूबरे
राम!रावरे निबाहे सबहीकी निबहति।।
(विनय पत्रिका, 303 / 246 / 1)

फूलइ फरइ न बेत जदपि सुधा बरसहि जलद।
मूरुख हृदयें न चेत जो, गुर मिलहि बिरंचि सम।।
(रामचरित मानस 475 / 6 / 16)

(ङ) – आधिभौतिक पीड़ा मुक्ति हेतु तुलसीदास की इच्छाशक्ति –

इस अदभुत स्थावर जंगात्मक विश्व में मानव शरीर सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। इस शरीर में विवेक अथवा ज्ञान की प्रधानता है। इतर शरीरों में प्रकृति या अविद्या की प्रधानता होने के कारण उनमें विवेक शक्ति की न्यूनता एवं स्वभावानुवुद्धा प्रवृत्ति के प्रभाव का आधिक्य परिलक्षित होता है। मानव जीवन का यथार्थ प्रेरक एवं उदान्त उदबोधन प्रदायक श्री राम का त्रैलोक्य पावन मंगलमय चरित्र, जिस दृष्टि से भी देखा जाए, सर्वोत्कृष्ट और दिव्यातिदिव्य है। उनके सभी चरित्र इतने आदर्श और महान है कि स्मरण मात्र से ही त्रिविध ताप एवं पातकोपपातक पल भर में ही प्रणष्ट हो जाते है।

अनादि माया में प्रसुप्त जीव जब जाग जाता है, तब वह सुषुप्ति कालीन कारण प्रपंच, स्वप्न कालीन सूक्ष्म प्रपंच तथा जागृत कालीन स्थूल प्रपंच से रहित ब्रह्मात्मैक्य रूप अद्वैत तत्व का साक्षातकार करता है। अनुग्रह, अनुकम्पा, कृपा, आनुकूल्य, स्नेह, श्रद्धा ये सब हितकारी धर्म है। इनको जीवन में उतार लेना आदिभौतिक पीड़ा की मुक्ति का सर्वश्रेष्ठ साधन है। वेदान्त सिद्धान्त से यह अन्तःकरण का एक उत्कृष्ट धर्म है, क्योकि नैयामिक मतानुसार यह आत्मा का धर्म है। सर्वशक्तिमान भगवान की एक दिव्य अंतरंग शक्ति ही कृपा शक्ति है।जिस प्रकार भगवान की माया शक्ति इस समस्त भोग्य प्रपंच का निर्माण करती है, संवित शक्ति जीवों को ज्ञान – विज्ञान प्रदान करती है, आनन्दिनी शक्ति प्राणियों को आनन्द प्रदान करती है, उसी प्रकार भगवान की भास्वती भगवती कृपा शक्ति भी भगवान को सब प्राणियों के अनुकूल बनाकर सर्वप्राणियों का लौकिक पारलौकिक अभ्युदय परम् निःश्रेयस सम्पादन कराकर उनको कृतार्थ करती रहती है।

सन्त गोस्वामी जी का मत है कि आधिभौतिक, आधिदैहिक, आधिदैविक पीड़ा का निवारण भगवान की भक्ति से ही संभव है। भक्ति तत्व से रहित होने पर सब कुछ होते हुए भी कुछ भी न होने के समान है। भक्ति ही जीवन का मुख्य तत्व है और भक्ति ही चरम सिद्धि है, दुःख मूल नाशक है, पराकाष्ठा है और अन्तिम परिणति है। तुलसीदास जी अपनी इच्छा को व्यक्त करते हुए अपने जीवन का स्वानुभाव प्रस्तुत करते हुए कहते है, कि जब मुझे साधन से च्युत करने वाले भारी विघ्न प्राप्त होते थे, तब – तब मै श्रद्धा भक्ति के साथ प्रेमपूर्वक भावना सहित राम के नाम का जप शुरू कर देता था और उसी के प्रभाव से उन विघ्नों से छुटकारा पा जाता था। अतएव ये मेरा दृढ़ विश्वास है, कि साधन पथ के विघ्नों को दूर करने और मन में होने वाली आधिभौतिक पीड़ा को स्फुरणों का नाश करने के लिए स्वरूप – चिन्तन सहित प्रेम पूर्वक भगवान का नाम जप करने के समान कोई दूसरा साधन नहीं है। संभवतः इसी स्वानुभूति से अभिभूत होकर उन्होंने अपने रामकाव्य में प्राणियों के उद्धार के लिए राम नाम का एक अचूक मूल मंत्र दिया है।[1] जिसका आधार पाकर लौकिक जगत् से बिना प्रयास ही प्राणी पार हो जाते है।

---

1 कलियुग केवल नाम अधारा। सुमिर – सुमिर नर उतरहिं भव पारा।
(रामचरित मानस 1 / 201 / 4

शास्त्रों से यह ज्ञात होता है कि भगवान समस्त दोषों से शून्य और समस्त कल्याण गुणों के आकर है।[1] उनकी कृपा सर्वथापि प्राणियों को लौकिक पारलौकिक अभ्युदय – निःश्रेयस तथा जीवन कल्याण प्रदान करती है।

भगवान और उनका पवित्र नाम ही अतिउत्तम आलम्बन है, यही सबका अन्तिम आश्रय है, इस आलम्बन को भली – भॉति जानकर जीव ब्रह्मलोक में भी महिमान्वित होता है।[2] वे अभागे है जो भगवान को छोडकर विषयों की आसक्ति में फंसे रहते है।[3] हम सौभाग्यवान उसी को कह सकते है, जो समस्त सांसारिक मायामोह के बन्धन को त्याग कर भगवान की सेवा में रत हो जाता है। रामचरित मानस में लक्ष्मण के भाग्य की सराहना करते हुए भरत जी ने उनको सर्वोत्तम भाग्यवान कहा है।[4] लक्ष्मण के समान कौन इतना भाग्यवान हो सकता है, जिसका श्री राम के चरण कमलों में मनसा, वाचा, कर्मणा इतना दृढ़ अनुराग है।[5] अपने रामकाव्य में तुलसीदास जी ने धर्म की मर्यादा को भंग करना ईश्वर की आज्ञा का लोप करना माना है, और इसी को आधिभौतिक पीड़ा का जनक कहा है। उनका मानना है कि भगवान की आज्ञा को भंग करने वाले को भगवान नही अपनाते। परमात्मा की आज्ञा को भंग करने वाले को कठोर कर्मदण्ड मिलता है। तुलसीदास समुद्र का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए कहते है कि समुद्र इतना बड़ा है परन्तु प्रभु ने जो सीमा समुद्र को निर्धारित कर दी है, समुद्र उस सीमा की मर्यादा का बरावर पालन करता है। यदि वह मर्यादा को छोड़ दे तो जगत में प्रलय हो जाए। जगत को प्रकाशित करने वाले सूर्य और चन्द्रमा परमात्मा की आज्ञा का पालन करते है। केवल मनुष्य ही ऐसा है कि उसका ज्ञान बढ़े, मान मिले, शान बढ़े, धन मिले तो मिथ्या दंभ के वशीभूत होकर अकड़ता हुआ चलता है, और धर्म की, कर्म की और परमात्मा की मर्यादा की भर्त्सना करता है, और इन्हें छोड़कर दंभी हो जाता है।

---

1 – भगवद्गुणगणसिन्धौ दयाभिधानं मणिं समुद्दिश्य।
करवै विपुलां निवृर्ति कारूणिकस्याच्युतस्य कारूण्यात।।
(कठोपनिषद् 1/2/32)

2 – एतदालम्बन् श्रेष्ठमेतदालम्बनं परम्।
एतदालम्बनं ज्ञात्वा ब्रह्मलोके महीयते।।
(कठोपनिषद् 1/2/17)

3 – सुनहु उमा ते लोग अभागी। हरि तजि होहिं विषय अनुरागी।।
(रामचरित मानस 3/32/2)

4 – अहह धन्य लछिमन बडभागी। राम पदारबिंदु अनुरागी।।
(रामचरित मानस 7/0/2)

5 – रमा विलासु राम अनुरागी। तजत बमन जिमि जन बडभागी।।
(रामचरित मानस 2/323/4)

हनुमान के आराध्य श्री राम मर्यादा पुरूषोत्तम है। अतः वे कभी मर्यादा को भंग नहीं करते। मर्यादा पालन ही सनातन धर्म है। जो अपनी मर्यादा का ध्यान रखता है वही सनातन धर्मी है। सनातन धर्म का दर्शन करना हो तो राम जी के चरित्र में सब कुछ मिल जाएगा। सनातन धर्म जैसा कोई दूसरा धर्म नहीं है। सनातन धर्म ईश्वर का स्वरूप है। मर्यादा की दृष्टि से धर्म साधन भी है और साध्य भी। सनातन धर्म की विशिष्टता यह है कि वह साधन के रूप में पालनीय कर्म है और साध्य में अनुकरणीय धर्म है। धर्मानुकूल पवित्र जीवन कैसे व्यतीत किया जाए, तुलसी ने रामकाव्य में राम के माध्यम से संसार को यही बताया है। सनातन धर्म राम का साक्षात मर्यादा स्वरूप है। तुलसी ने आधिभौतिक पीड़ा के निवारणार्थ अपनी दृढ़ इच्छा शक्ति व्यक्त करते हुए कहा है कि पुरूष का आचरण श्री राम जैसा होना चाहिए और स्त्री का आचरण श्री सीता जी जैसा होना चाहिए। तभी भक्ति सफल होगी। मानव मात्र के लिए राम जी की सेवा अनिवार्य है। परमात्मा श्री कृष्ण की भक्ति करने वाला कोई वैष्णव हो, उपासना करने वाला कोई शैव हो या शाक्त हो, परन्तु उसका आचरण श्री राम जी जैसा होना चाहिए। शिव जी की पूजा करने वाला यदि राम जी जैसा आचरण करे तभी उसकी पूजा सफल होगी। श्री राम की सेवा के बिना दुःख पहुँचाने वाले पीड़ा रूपी रावण का विनाश संभव नही है। इस संसार में सभी महापुरूषों ने श्री राम की सेवा से ही शान्ति प्राप्त की है। मानव का जीवन शास्त्रीय मर्यादा के अनुसार होना चाहिए। जीवन में संयम हो, सदाचार हो, सेवा हो, मर्यादा हो तभी जीवन सुधरता है। जो धर्म की मर्यादा का पालन करते है, उनकी ही मनः शुद्धि होती है। राम जी का जीवन सार्वजनिक होने से सबके लिए उपयोगी है, क्योकि उसमें नियम की दृढता और त्याग की प्रबलता है। कृष्णावतार में प्रेम की प्रबलता और त्याग की दृढ़ता है इस लिए कृष्णोपासना वैयक्तिक है, रामोपासना सार्वजनिक है। राम का जीवन नियम प्रधान है, कृष्ण का जीवन प्रेम प्रधान है। राम का जीवन अनुकरणीय, शिक्षाप्रद और आदर्श है। श्री कृष्ण का चरित्र अनुकरणीय कम श्रवणीय और पठनीय है, उसके अभिप्राय का आश्रय है कि जगत् में प्रेम ही सार है, परन्तु दोनो के जीवन में त्याग की प्रधानता है। त्याग के बिना जीवन मोह जनित बन्धन है। यही राम और कृष्ण के जीवन का संदेश है। राम का जीवन सामाजिक तथा सामाजिक चिन्तन का मुख्य श्रोत है जिसके अनुपालन से ही मानव जीवन की सार्थकता समझी जा सकती है।

साधक जीव का जब तक देह से सम्बन्ध है तब तक वह प्राकृत गुण और कर्मो का स्वरूवतः परित्याग नही कर सकता, अतः उसे भौतिक व्याधियों के निवारणार्थ यज्ञ, दान, तप के साथ – साथ राम नाम का सहारा लेते रहना चाहिए। जो जीव एक बार भी श्री राम के चरणों में प्रपन्न होता है, समस्त भौतिक पीड़ाओं से मुक्त हो जाता है। इस संसार में कोई हितैषी नही है,न ही सगे सम्बन्धी (स्त्री, पुत्र, पौत्र, भाई, बान्धव) अपना साथ देने वाले है। इसलिए तुलसी की यह दृढ़ इच्छा है कि मनुष्य शरीर, मन और वाणी के द्वारा किये हुए समस्त अपराधो, छल कपट छोडकर समस्त दारूण दुःखों का

नाश करने वाले श्री राम नाम महामंत्र का सहारा लेकर इस कठिन भवसागर से पार करने का सुगम मार्ग प्रशस्त करें।[1] जीव को पारलौकिक यात्रा को सदैव याद रखना चाहिए, क्योंकि वहॉ यम यातना देने वाले करोडो यम दूत है, वैतरिणी नदी है, जिसमें काटने वाले अनेक जीव जन्तु है, जिसकी भयंकर तीक्ष्ण धारा है, जिसका कोई पारावार नही है, न कोई जहाज है, न कोई नाव है, न कोई नाविक है, इसके अतिरिक्त कोई सगा सम्बन्धी आलम्बन देने वाला नही है। इसलिए तुलसीदास जी कहते है कि अकारण ही कृपा करने वाले श्री राम चन्द्र जी अपनी विशाल बॉहो का सहारा देकर उस वैतरिणी नदी से पार करते हैं। जप, योग, वैराग्य,, दान, यज्ञ आदि भले ही युग – युगों तक करते रहा जाए, परन्तु श्री राम की अहैतुकी कृपा के बिना भव रोग की समाप्ति संभव नही है।[2]

भक्त कवि गोस्वामी तुलसीदास जी का काव्य श्री राम काव्य तो है ही उससे कही अधिक वह भगवान का कृपा काव्य है। तुलसीदास जी ने अपने रचनाओ के माध्यम से कथा क्षेपको का आश्रय लेकर श्री राम की अनपायनी कृपा का वर्णन किया है। श्री राम की कृपा में संजीवनी शक्ति है। शारीरिक और मानसिक – दोनो प्रकार के श्रमो को दूर करने की अद्भुत क्षमता है, इस कृपा में वही विगत शोक दुख मोह हो गया जिसको यह (कृपा) प्राप्त हुई। अंजनी नंदन हनुमान को श्रीराम की अहैतुकी कृपा प्राप्त थी। श्री राम के कृपा पात्रों में सुग्रीव भी थे। बालि से द्वन्द युद्ध के लिए सुग्रीव तैयार हो गये किंतु खाने के बाद श्री राम की कृपा का तात्कालिक फल मिला, और पीडा रहित हो गये।[3]

---

1 – जहॉ हित स्वामि, न संग सखा, बनिता, सुत, बंधु न बापु, न मैया।
काय – गिरा मन के जन के अपराध सबै छलु छाड़ि छ मैया।।
तुलसी ! तेहि काल कृपाल बिना दूजौ कौन है दारून दुःख दमैया।
जहॉ सब संकट, दुर्घट सोचु, जहॉ मेरो साहेबु राखै रमैया।।
(कवितावली 110 / 53)

2 – जहॉ जग जातना, घोर नदी, भट कोटि जलन्धर दंत ढेवैया।
जहँ धार भयंकर, वार न पार, न बोहितु नाव, न नीक खेवैया।।
'तुलसी' जहँ मातु – पिता न सखा, नहि कोउ कहुँ अवलंब देवैया।
तहॉ बिनु कारन राम कृपाल बिसाल भुजा गहि काढ़ि लेवैया।।
(कवितावली, उत्तरकाण्ड 109 / 52)

3 – कर परसा सुग्रीव शरीरा । तनु भा कुलिस गई सब पीरा ।।
(रामचरित मानस 4 / 7 / 3)

राम कृपा कर चितवा सबही । भए बिगत श्रम बानर तबही ।।
(रामचरित मानस 6 / 47 / 1)

इसी क्रम में इसी श्रमहारिणी शक्ति का एक अन्य उदाहरण हमें श्री राम रावण युद्ध में वानरी सेना के हताहत होने और थक जाने पर श्री राम की कृपा दृष्टि मात्र से ही सम्पूर्ण शिविरों की सेना पीडा विहीन होकर पुनः युद्ध के लिए तैयार हो गयी। राम नाम महा मणि है, और जगत का सम्बन्ध [illegible] सर्प है। जिस प्रकार मणि के छिन जाने पर सर्प व्याकुल होकर मृतवत हो जाता है, उसी प्रकार राम नाम रूपी मणि लेने से दुःख रूपी जगत जाल स्वतः 'ही नष्ट प्राय हो जाएगा। राम का नाम कल्प वृक्ष है, यह अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष का फल देता है। यह प्रेम और परमार्थ, भक्ति और मुक्ति, सिद्धि और समृद्धि, सुख – संतोष को प्रदान करता है, तथा दुःख रूपी कपॉ देने वाल सर्दी का नाश करने के लिए अग्नि के समान है, तथा राम नाम के प्रभाव से वाम – विधाता भी प्राणी के मस्तक पर बुरे कर्म फल अंकित नही कर सकेगा। श्री राम नाम के सहारे रहने वाले चतुर जीवों को ज्ञान बुद्धि (अज्ञान रूपी निद्रा से) जगाती हैं, अतएव राम नाम के प्रभाव से मुर्खता को तथा काम, कोध आदि समस्त मानसिक विकारों को त्याग कर भगवान राम का नाम ही परमोत्कृष्ट औषधि है।[1] संसार के तीनो ताप अज्ञान रूपी निद्रा से जागने पर नष्ट होते है। इसलिए ज्ञान रूपी सूर्य का प्रकाश ही इस आधिभौतिक संसार के राग, मोह और द्वैष रूपी घोर अंधकार को दूर कर सकता है। इस प्रकार तुलसीदास जी की यह भावना है कि परमोज्ज्वल प्रकाश पतितो को पावन करने वाले शरणागत रक्षक विश्व बन्ध भगवान राम का आदर्श अति अनुकरणीय है। ऐसे जीवों को कोई कष्ट चिंता भय असंतोष प्राप्त नही होता, जो निरन्तर श्री राम नाम स्मरण में अपने मन को निरत रखते है, तथा उसी राम नाम मे रत रहने के कारण ही समस्त प्रकार के भौतिक उपद्रव उसको (जीव को) विचलित नही कर पाते। सामान्य रूप से विषयी व्यवित्त को अपने शरीर तथा इन्द्रिय तृप्ति के लिए किसी वस्तु को पाने की लालसा में इधर उधर भटकना या मन के चंचल उद्वेवो को न रोक पाने के कारण उत्पन्न कष्ट ही समस्त आधिभौतिक पीडा के कारण वन जाते है। तुलसी की हर्दिक भावना थी कि समस्त सांसारिक कर्तव्यों को निभाते हुए हर व्यक्ति को अपना मन राम पदारबिंद में अलि की भॉति लगाये रखना चाहिए। मानव समाज का यह प्रभाव है कि कभी किसी की प्रसंशा की जाती है, कभी किसी की निन्दा की जाती है, लेकिन इन समस्त भौतिक वर्जनाओं से दूर रहकर परम राम चरणानुरागी भक्त कृत्रिम यश तथा अपशय सुख दुःख से ऊपर उठकर सभी प्रकार के शुभ तथा अशुभ, पाप कर्मो से सदैव परे रहता है, और परमेश्वर की प्रसन्नता के लिए बडी से बडी विपत्ति सहने को तैयार रहता है, क्योंकि वह अपने संकल्प तथा ज्ञान में दृढ़ रहता है।

---

1 – जानकीसकी कृपा जगावती सुजाव जीव,

जागि त्यागि मूढ़ताऽनुरागु श्री हरे।

करि विचार, तजि विकार, भजु उदार राम चन्द्र,

भद्रसिंधु दीनवंधु, बेद बदत रे।।

(विनय पत्रिका 110 / 74 / 1)

इस प्रकार जो भक्त (मनुष्य) सुसंगति का सेवन करता है, और भगवान के कीर्तन भजन को श्रद्धा भक्ति, अशक्ति के साथ सुनता है, कीर्तन करता है, इस तरह वह भगवान की दिव्य सेवा में तत्पर हो जाता है। इस असार संसार में समस्त प्रकार के देहजन्य आधिभौतिक पीड़ा के निवारण के लिए सदैव राम नाम महामंत्र को जपना ही श्रेयस्कर है।

(च) – आंजनेय भक्ति से आधिभौतिक पीड़ा का निवारण –

प्रसिद्ध साहित्यकार श्री अमृतलाल नागर द्वारा लिखित उपन्यास 'मानस का हंस' के अनुसार श्री हनुमान चालीसा तुलसीदास की प्रारम्भिक रचना है, जिसमें पवन कुमार हनुमान का स्मरण कर अपने क्लेश विकारों का हरण करने और बल, बुद्धि एवं विद्या की अभियाचना की गयी है। सम्भवतः अंजनी नंदन हनुमान की भक्ति करते – करते तुलसीदास के हृदय में राम का वास हो गया था। तुलसीदास के प्रारम्भिक साहित्य में यह धारणा भी निहित है कि अंजनी नंदन की अनवरत भक्ति से आधिभौतिक पीड़ा का निवारण भी हो सकता है–

तुम्हरे भजन राम को पावै । जनम जनम के दुख बिसरावै ।।
अन्तकाल रघुबर पुर जाई । जहाँ जन्म हरि भक्त कहाई ।।
और देवता चित न धरई । हनुमत सेई सर्ब सुख करई ।।
संकट कटै मिटै सब पीरा । जो सुमिरै हनुमत बलबीरा ।।

तुलसीदास के हृदय में राम दरबार की जो प्रारम्भिक भक्ति परक परिकल्पना है, उसमें राम, लक्ष्मण, सीता सहित मंगल मूर्तिरूप पवनतनय ही प्रमुख है –

पवनतनय संकट हरन मंगल मूरत रूप ।
राम लखन सीता सहित, हृदय बसहु सुरभूप ।।

तुलसीदास को यह आंजनेय भक्ति वस्तुतः 'श्री मद् भागवत महापुराण' आदि पौराणिक साहित्य से प्राप्त हुई, जिसमें श्री हनुमत् –स्तवन का प्रभावशाली वैशिष्टय निहित है –

"मनोजवं मारूत तुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।
वातात्मजं वानर यूथ मुख्यं श्री राम दूतं शरणं प्रपद्ये ।।"

"आंजनेय मति पाटलाननं कांचनादि कमनीय विग्रहम् ।
परिजात तरूमूल नासिनं भावयामि पवमान नन्दनम् ।।
(श्री मद्भागवत महापुराण)

भक्ति भावना समुद्र की एक लहर के समान है जो अचानक उमड़ कर हृदय के तट प्रदेश को जलमग्न कर देती है। एक बार भक्ति भावना के जग जाने पर फिर वह कोई अवरोध नहीं

मानती। दूसरी तरफ ज्ञान एक ऊँचे पर्वत के समान उच्च गम्भीर और गहन है। यह सर्व विदित है कि वेदों में भक्ति की कही भी चर्चा नही होती। प्राचीन उपनिषदों में भी केवल छन्दोग्य उपनिषद् में एक स्थल पर वासना की चर्चा की गयी है, जिसका सम्बन्ध भक्ति से जोड़ा जा सकता है, अन्य कही भी भक्ति और उपासना की चर्चा नही की गयी है, लेकिन रामकाव्य में तुलसी ने ज्ञान के ऊपर भक्ति की श्रेष्ठता प्रदर्शित की है। ज्ञान से भक्ति की श्रेष्ठता प्रतिपादित करके रामकाव्य कार ने भक्ति रूपी मणि की महत्ता का विशेष रूप से गायन किया है। उन्होंने कहा है कि भक्ति से प्रवल अविद्या रूपी माया अन्धकार का विनाश हो जाता है, और जिस जीव के हृदय में भक्ति का निवास हो जाता है, उसके समीप काम, कोध, लोभ, मोह, माया, आदि खल प्रवृत्ति दुर्गुण कभी नही आते, तथा समस्त प्रकार के मानस रोग समाप्त हो जाते है।[1]

अंजनी नंदन आंजनेय दो अक्षर "राम" के परम रसिक भौरे है। ये दो अक्षर मंत्र तत्व, देव तत्व, गुरू तत्व, आत्म तत्व और मनस्तत्व से परिपूर्ण है। गोस्वामी जी ने इसीलिए उड़ानों के स्वर में स्वर मिलाते हुए जप यज्ञ को त्रेता युग का साधन बताते हुए, कलियुग के लिए केवल राम नाम का आधार ही स्थिर किया है। मानस में शंकर जी पार्वती जी से हनुमान जी के भाग्य की प्रसंशा करते हुए कहते है --

"हनुमान सम नहि बडभागी । नहि कोई राम चरन अनुरागी ।।"

---

1 -- परम प्रकाश रूप दिन राती । नहि कुछ चहिअ दिआ घृत बाती ।।
मोह दरिद्र निकट नहि आवा । लोभ बात नहि ताह बुझावा ।।
प्रबल अबिद्या तम मिट जाई । हारहि सकल सुलभ समुदाई ।।
खल कामादि निकट नहि जाही । बसइ भगति जाके उर माही ।।
गरल सुधा सम अरि अति होई । तेहि मनि बिनु सुख पाव न कोई ।।
व्यापहि मानस रोग न भारी । जिन्ह के बस सब जीव दुखारी ।।
राम भगति मनि उर बस जाके । दुख लवलेस न सपनहुं ताकें ।।
(रामचरित मानस 629 / 30 / 119 / 3--4--5--6--7--8--9)

इसीलिए इन दो अक्षरों की महत्ता को अनेकानेक वेद शास्त्रों ने गाया है।' ये दोनो वर्ण मधुर और मनोहर है। ये सुलभ है, सुखद है और लोक तथा परलोक में कल्याणकारी हृदय की दो ऑखो के समान है। ये कहने के लिए तो दो है, पर वास्तव में ब्रह्म और जीव की भॉति सहज संघाती होकर ये एक ही है।

नाम और नामी में कोई अन्तर नही है, क्योकि नामी (श्री राम) उसके अनुरागी बन जाते है (नाम लेने से प्रभु की प्राप्ति हो जाती है)। यद्यपि नाम और रूप दोनो ही परमात्मा की उपाधियॉ है। नाम की यह वरदायक महिमा जानकर ही शतकोटि रामचरित्र से छॉटकर भगवान शंकर ने इस नाम को ही अपना हृदयहार बनाया है।

---

1 – यह कलिकाल मलायतन मन करि देखु बिचारि ।
श्री रघुनाथ नाम बिनु नाहिन आन अधार ।।
(रामचरित मानस 438–23,24)

यह कलिकाल न साधन दूजा । जोग जश जप तप ब्रत पूजा ।।
रामहि सुमिरिय गइय रामहि । सन्तत सुनिय रामगुन ग्रामहि ।।
(रामचरित मानस 502–7,8)

वैष्णवेष्वपि सर्वेषु राममंत्रः फलादिकाः ।।
(रामार्चनचंद्रिका 25 पृष्ठ)

गाणपत्येपु शैवेषु शाक्त सौरोष्वभीष्टदः ।
वैष्णवेष्वपि सर्वेषु राममंत्रः फलादिकाः ।।
(रामोन्तरतापिन्युपनिषद् श्लोक 4)

वैष्णवेष्वपि सर्वेषु राममंत्रः फलादिकाः ।
मंत्रराज इति प्रोक्ताः सर्वेषामुन्तमोन्तमः ।।
(अगस्त्यसंहिता)

जपतः सर्ववेदाश्च सर्वमंगाश्च पार्वति।
तस्मात्कोटिगुणं पुण्यं रामनाम्नैव लभ्यते।।
(पद्मपुराण)

कल्याणानां निधानं कलिमलमथनं पावनं पावनाः ।
पाथेयं जन्मुमुक्षोः सपदि परपद प्राप्तये प्रस्थितस्य ।।
विश्रामस्थानमेकं कविवरवचसां जीवनं सज्जनानां ।
बीजं धर्मद्रुमस्य प्रभुवतु भवतां भूतये रामनाम् ।।
(हनुमन्नाटकार कथन)

नारद, प्रहलाद, ध्रुव, हनुमान, अजामिल, गज, गणिका आदि ने राम नाम के ही प्रभाव से कृतकृत्यता पायी है। इसी दो अक्षर राम शब्द को हनुमान जी ने अपने हृदय में बसाकर दुर्धर्ष समुद्र को लॉघकर जगत् जननी सीता जी का पता लगाया, संजीवनी बूटी लाकर लक्ष्मण के जीवन की रक्षा की तथा इसी राम नाम के स्मरण मात्र से राम बोला तुलसीदास बड़भागी संत तुलसीदास बन गये।

हनुमान जी का चरित्र एक जीवन दर्शन है। परमादर्श श्री हनुमान् जी का जीवन प्रकाश स्तम्भ की भॉति समस्त जन कल्याण के मार्ग का दिशा निर्देशन है। श्री राम के अनन्य भक्त श्री हनुमान जी अखण्ड ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने वाले, शूरता, वीरता, दक्षता, बुद्धिमत्ता आदि गुणों के पुंज है। हनुमान जी का स्वरूप चिन्मय और दिव्य है। वह विज्ञान स्वरूप है। उनके रूप गुण और चरित्र यदपि वेदों में वर्णित है, तथापि विज्ञान स्वरूप होने के कारण वह अरूप है – अप्रत्यक्ष है। निगमागम सम्मत रामचरित मानस के रचयिता गोस्वामी तुलसीदास जी सीताराम गुण ग्राम के पुण्यरण्य में बिहार करने वाले कपीश्वर श्री हनुमान जी को विशुद्ध विज्ञान सम्मत चिन्मय स्वीकार किया है। रामचरित मानस के प्रारम्भ में उनके द्वारा ही की गयी श्री बाल्मीकि और श्री हनुमान जी की वन्दना इस तथ्य की परिचायिका है।[1] देव शिरोमणि रूद्र के अवतार और संसार के रक्षक हनुमान निर्मल गुण और बुद्धि के धनी है। उनका श्री विग्रह ब्राह्मण, देवता, सिद्ध और मुनियों के आशीर्वाद का मूर्तिमान स्वरूप है। वह निश्क्षल भाव होकर सदैव अपने आराध्य श्री राम की सेवा में रत रहते है। इसी कारण से शुकदेव और नारद आदि देवर्षि सदैव उनका स्मरण करते रहते है। श्री हनुमान जी की निर्मल गाथावरी मानव मात्र के लिए असीम सुखदायी है। सिद्ध देवगण और योगीराज भी भगवान राम के निश्क्षल चरित्र का गान करते है, और सत्यपरायण होकर धर्म परायण हो जाते है। हनुमान जी की भक्ति संसार के सभी प्रकार के कष्टों को दूर करने वाली है। असीम बलशाली, पराक्रमी, धर्ममान हनुमान जी की आराधना इस भौतिक जगत् के प्राणियों के लिए पूर्णतया पीडा निवारक है। हनुमान जी का स्वरूप विभिन्न रूपों में देखा जा सकता है। अर्जुन के रथ में विराजमान होने वाले, सुग्रीव के राज्य को दिलाने वाले, संसार के सभी प्रकार के कष्टों का नाश करने वाले, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, प्रेतबाधा, रोगबाधा तथा महामारी आदि महासंकट हनुमान जी के नाम के स्मरण मात्र से दूर हो जाते है।[2]

---

1 – सीताराम गुणग्राम पुण्यारण्य विहारिणै ।

वन्दे विशुद्ध विज्ञानौ कवीश्वर कपीश्वरौ ।।

(रामचरित मानस, बालकाण्ड श्लोक 4)

जयति गजराजदातार, हंतार संसार – संकट, दनुज – दर्पहारी ।

ईति – आति – भीति – ग्रह – प्रेत – चौरानल – व्याधिबाधा – शमन घोर मारी ।।

(विनय पत्रिका 43 / 4)

2 – संकट कटै हरै सब पीरा । जो सुमिरै हनुमत बलबीरा ।।

(हनुमान चालीसा)

भारतीय जन भावना में श्री रामभक्त हनुमान की प्रतिष्ठा, वीरता, जितेन्द्रियता और परिनिष्पन ज्ञान के आगार के रूप में हुयी है। अन्तर केवल इतना है कि वैदिक साहित्य में हनुमान जी को दिव्य व्यक्तित्व से विभूषित बतलाया गया है, और वैदिकेतर साहित्य में उनके विभूतिमान लोकोत्तर व्यक्तित्व को मानवीय धरातल पर प्रतिष्ठित किया गया है, लेकिन उनकी प्रतिष्ठा को सम्पूर्ण भारतीय साहित्य में समादरणीय स्थान प्राप्त है। हनुमान जी जन – जन को तीनो प्रकार के संकटो से मुक्त करने की क्षमता रखते है इसलिए लोक जीवन में उनका संकट मोचन नाम सर्वप्रार्थित है। इस प्रकार अपनी गुणान्तिशयता के कारण ही वे सदा लोकाराध्य बने हुए है। सूर्य की भॉति दुर्निवार, वेगशाली, यम के समान निष्ठुर दृष्टि, अष्टमी के चन्द्रमा के समान वक्र एवं बुद्धि में बृहस्पति के समान श्री हनुमान जी के नाम स्मरण मात्र से ही सकल भाव व्याधि, बाधा तिरोहित हो जाते है।[1]

हनुमान जी के चरित्र में दो प्रमुख गुण है। प्रथम श्री राम भक्ति औंर द्वितीय वीरता। हनुमान जी की वीरता उनके द्वारा समुद्र को लॉघना, मेघनाद यज्ञ विध्वंश, संजीवनी बूटी लाकर लक्ष्मण के प्राणों की रक्षा करना आदि प्रसंगो में व्यक्त हुई है। यह वीरता विवेक सम्मत भी है। लंका मे प्रवेश करके सीता का पता लगाना, बिना विवेक के संभव नही था। यह भी सत्य है कि हनुमान जी जैसे सहायक को पाकर भी सुग्रीव असहाय थे, क्योकि हनुमान जी को अपनी शक्तियों का खुद पता नही था। वह बुद्धि, विद्या, बल, शील तेज पराकम आदि से सम्पन्न होने पर भी अपने को नगण्य समझते थे। श्री रामचन्द्र हनुमान जी की प्रशंसा में कहते है कि ' हे अंजनी नंदन आंजनेय तुम सम्पूर्ण गुणों से सम्पन्न होने पर भी अपनी गणना अतिलघु रूपों में करते हो। मुझे तो ऐसा लगता है कि तुम्हारा बल मुझ पर आ जाए, और तुम्हे मेरी प्रेरणा मिल जाए।[2]

---

1 – समुट्ठिओऽरि भछणो । समीरणस्स वन्दणो ।।
पंलववाहु पंजरो । गिरंकुसो ज्व कुंजरो ।।
महीहरस्स उप्परी । विरूद्ध ब्व केसरी ।।
पुरन्तरत्त – लोयणो । सणि ब्व सावलोयणो ।।
दुवाररसो ब्व भक्खरो ' जमो ब्व दिट्ठि – गिट्ठरो ।।
विहित्व किचिदुट्ठिओ । ससि ब्व अट्ठमो ठिओ ।।
विहफ्फइ ब्व जम्मणे । अहि ब्व कूर – कम्यणे ।।
(पउमचरिउ सुन्दरकाण्ड संधि 45)

2 – सब कुछ होकर कुछ न समझते अपने को, तुम हो इतने सादे,
योजकत्व यदि मिले तुम्हारा, स्वर्ग राज्य वह भूपर छा दे ।
तुम्हे प्रेरणा मेरी मिले तो, मुझे शक्ति मिल जाए तुम्हारी,
तो फिर कितनी सुखी न होगी उत्तर दक्षिण भूमि हमारी ।।
(राम – राज्य, डा० बल्देव प्रसाद मिश्र पृष्ठ 88)

ऐसे प्रसंग कई स्थलो पर मिलते है। बाल्मीकि रामायण मे भी सुग्रीव ने हनुमान जी के गुणों का वर्णन किया। उन्होंने हनुमान जी को शास्त्रज्ञ, नीतिज्ञ, मन्त्रज्ञ, भबितज्ञ आदि कहा है।[1] श्री रामचन्द्र के दूत पवन पुत्र हनुमान जी मनोहर मंगल आनन्द के साक्षात विग्रह स्वरूप है। उनका स्मरण करते ही समस्त सिद्धियाँ करतल गत हो जाती है। धीरवीर श्री रघुवीर के प्रिय पवनपुत्र हनुमान जी का स्मरण ही सभी आधिदैविक, आधिभौतिक एवं आधिदैहिक पीड़ा का समूल विनाशक है। जो मनुष्य किसी भी प्रकार के कार्य करने से पहले यदि हनुमान जी का स्मरण करता है तो सफलता सुनिश्चित है।[2] संसार में ऐसा कौन सा कष्ट है जो हनुमान जी के स्मरण मात्र से दूर न होता हो। जिनके हृदय में राम और लक्ष्मण साक्षात निवास करते हो ऐसे भक्त राज, भक्त शिरोमणि हनुमान जी की शरण में जाने से सम्पूर्ण भव रोग विनष्ट हो जाते है। इसके साथ साथ प्रेत बाधा, शाकनी, डाकनी, प्रेत, बेताल, जादू, टोना तथा प्रमथ आदि भयानक जीवो का नियन्तत्रण हनुमान जी के स्मरण मात्र से हो जाता है।[3]

---

1 – त्वयेव हनुमन्नस्ति बलं वुद्धिः पराकमः ।

देशकालानुवृन्तिश्च नयश्र नयपण्डित ।।

(बाल्मीकि रामायण 4/44/7)

2 – मंजुल मंगल मोदमय मूरति मारुत पूत ।

सकल सिद्धि कर कमल तल सुमिरत रघुबर दूत ।।

धीर बीर रघुबीर प्रिय सुमिरि समीर कुमारु ।

अगम सुगम सब काज करु करतल सिद्धि विचारु ।।

(दोहावली 229 – 30)

3 – संकट मोचन नाम भयो जग, काके न संकट दूर किये है ।

शेष कपीश सुरेशहुँ आदि सहाय भये, तब जाइ जिये है ।।

रामहुँ रावन जीतिबे को दल साजि जिन्हे निज संग लिय है ।

'विष्नु' भये तिनके सरनागत, जाके बसे सियराम हिये है ।।

जाहि भजे भय रोग नसावत, पावत है मन को फल चारी ।

जा ढिग जात मिटै भव – फंद औ होत सबै दिसि मंगलकारी ।।

जाको सुनाम भयो जगतीतल भूत – पिशाचन को भयकारी ।

'बिष्नु भये सरनागत ताहि के, जै भय भूत भगावनहारी ।।

(श्री विष्णुदत्त जी गुप्त – हनुमत स्तुवन 95/46 –47)

सुमेरू पर्वत के समान शरीर वाले करोडो दोपहर के हनुमान बाहुक के अनुसार सूर्य के समान अनन्त तेज राशि वाले, अत्यन्त बलवान भुजाओं वाल, बज्र के समान नख और शरीर वाले, दुष्टों के दल के बल का नाश करने वाले हनुमान जी की मूर्ति जिसके हृदय में निवास करती है, उसके समीप स्वप्न मे भी दुःख पाप नही आते।[1] रामकाव्य के प्रणेता तुलसी अनेकानेक भव रोगों से पीडित होने पर हनुमान जी की आराधना करते हुए कहते है कि पॉव की पीड़ा, पेट की पीड़ा, बाहु की पीड़ा से सारा शरीर पीड़ामय होकर जीर्ण, शीर्ण हो गया। देवता, प्रेत, पितर, कर्म, काल और दुष्ट ग्रह सब एक साथ मिलकर मुझपर तोपों की बाढ़ सी दे रहे है। इसलिए हे हनुमान जी पर असीम कृपा बरसाने वाले राजा रामचन्द्र जी, कही ऐसी दशा भी हुयी है कि अगस्त्य मुनि का सेवक गाय के खुर मे डूब गया हो।[2]

---

1 – स्वर्न – सैल – संकास कोटि – रबि – तरून – तेज – घन ।

उस बिलास, भुजदंड चंड नख बज्र बज्र तन ।।

पिंग नयन भुकुटी कराल रसना दसानन ।

कपिस केस, करकस लॅगूर, खल – दल – बल भानन ।।

कह तुलसीदास बस जासु उर मारूतसुत मूरति बिकट ।

संताप पाप तेहि पुरूष पहि सपनेहुँ नहि आवत निकट ।।

(हनुमान बाहुक 6/2)

2 – पॉयपीर पेटपीर बॉहपीर मुँहपीर,

जरजर सकल सरीर पीरमई है ।

देखभूत पितर करम खल काल ग्रह,

मोहिपर दवरि दमानक सी दई है ।

हौ तो बिन मोल के विकानो बलि बारे हीते,

ओट राम नाम की ललाट लिखि लई है ।

कुंभज के किंकर विकल बूड़े गोखुरनि,

हाय रामराम ऐसी हाल कहुँ भई है ।

(हनुमान बाहुक 34/38)

इसी संदर्भ में गोस्वामी तुलसीदास जी आधिभौतिक पीड़ा से मुक्ति हेतु प्रार्थना करते हुए व्यक्त करते है कि रोगों, बुरे योगों और दुष्ट रोगों ने मुझे इस प्रकार घेर लिया है, जैसे दिन में बादलों का घना समूह झपट कर आकाश में दौडता है। पीड़ा रूपी जल बरसाकर इन्होंने क्रोध करके बिना अपराध यश रूपी जवासे को अग्नि की तरह झुलस कर मूर्क्षित कर दिया है। हे दयानिधान महाबलवान हनुमान जी, आप विहँसित होकर और ललकार कर विपक्षी की सेना को अपने कृपा रूपी फूँक से उड़ा दीजिए। हे केशरी किशोरवीर हनुमान जी तुलसी को आधिभौतिक कुरोग रूपी निर्दय राक्षस ने डस लिया है। आप मेरी रक्षा करें।[1]

वर्तमान युग में आस्था का अवमूल्यन होता जा रहा है, लेकिन मारूतनन्दन इन्द्र के बज्र के प्रहार को सहने वाले, सूर्य मण्डल को निगलने वाले, श्री राम – सग्रीव को मैत्री सूत्र में बाँधने वाले, सिन्धु मार्ग को निष्कंटक बनाने वाले, लंका एवं अशोक वाटिका को उजाड़ने वाले, विभीषण एवं इन्द्र के सारथी की रक्षा करने वाले, ब्रह्म शक्ति को आत्मसात करने वाले, विशाल द्रोणाचल को धारण करते हुए लक्ष्मण जी को प्राण दान देने वाले तथा अर्जुन और सीता के आनन्दरूपी परन्तु दुष्टों का मान मर्दन करने वाले सांसारिक मोह माया के बन्धन से विलग रहने वाले हनुमान जी की पूजा अर्चना सदैव आनन्द दायक वर्तमान भौतिकवाद की होड़ में सम्पूर्ण जनमानस आस्था और धर्म से निरन्तर विमुख होता जा रहा है।[2]

---

1 – घेर लियो रोगनि कुजोगनि कुलोगनि ज्यौं,
बासर जलद घन घटा धुकि छाई है ।
बरसत बर पीर जारिये जवा से जस,
रोष बिनु दोष, धूम – मूल मलिनाई है ।
करूनानिधान हनुमान महाबलवान,
हेरि हँसि फूँकि फोजै तै उड़ाई है ।
खाये हुतो तुलसी कुरोग राढि राकसनि,
केसरी किसोर राखे बीर बरिआई है ।
(हनुमान बाहुक 31 – 32 /35)

2 – बज्र की झिलन, भानु मंडली गिलन,
रघुराज कपिराज को मिलन मजबूत को ।
सिन्धु मग झारबो उजारबौ बिपिन लंक,
बारबो उबारबो विभीषण के सूत को ।।
भनै कवि 'मान' ब्रह्म – शक्ति ग्रासन जान,
राम भ्रात प्राण दान द्रोणगिरि ले अकूत को ।
रंजन धनंजय, सोक गंजन सिया को लखो,
भाल खल भंजन, प्रभंजन के पूत को ।।
(मान कवि कृन्त – हनुमत पचासा पृष्ठ 15/27)

इस प्रकार हनुमान जैसे महान परोपकारी चरित्र को केवल पूजने स्मरण करने की ही आज आवश्यकता नही है, बल्कि उनके गुणों का अनुसरण करने की अधिक आवश्यकता है। इसी मे हम सच्चे अर्थो में हनुमान जी के सच्चे सेवक बन सांसारिक दुःखों से छुटकारा पा सकेगे, उनके परम आराध्य श्री रामचन्द्र जी की सच्ची अनुकम्पा प्राप्त करने के पात्र बन सकेगें तथा देशकाल, समाज को उन्नति की ओर अग्रसर करके भावी पीढी के लिए एक सुखद एवं कल्याणकारी प्रेरणा दे सकेंगें।

(छ०) तुलसीदास की आंजनेय भक्ति से आधिभौतिक पीड़ा का निवारण –

परम आत्मीय श्री हनुमान जी जो सूरवीर और श्री राम जी के अनन्य सेवक है, उनकी प्रत्येक आज्ञा का पालन करने के लिए सदैव उद्यत रहते है, और जीवन मरण से अतीत होकर सदैव परम ब्रह्म श्री राम जी में लीन रहते है। श्री राम स्नेही सम्प्रदाय के भक्त माल में हनुमान जी का वर्णन है, जिसमें सभी प्रकार की पीड़ाओं के मोक्ष दाता के रूप में अंजनी नंदन आंजनेय को चिन्हित किया गया है। श्री हनुमान जी का वर्णन करते हुए राम स्नेही भक्त माल कार श्री हरखा राम जी कहते है कि श्री हनुमान जी ने श्री राम नाम रटते हुए श्री रघुनाथ जी के चरणों का आश्रय लिया सौ योजन समुद्र को लॉघकर उस दुर्गम स्वर्गमयी लंका के गढ़ को ढ़हाकर श्री सीता जी को धैर्य बॅधाकर समस्त बानरों के प्राणों को बचाने वाले श्री हनुमान जी के सामने को सा ऐसा आधिदैविक, आधिभौतिक, आधिदैहिक कष्ट होगा जो ठहर पायेगा। श्री रामचरणाश्रित जन श्री हनुमान जी का अलौकिक सुयश अवर्णनीय है।[1] श्री हनुमान जी को ब्रह्म ज्ञानी गुरू, नाम प्रेमी तथा रसिक आदर्श सेवक आज्ञापालक शक्ति प्रदाता और तत्व प्रेमी के रूप में जाना जाता है।

तुलसीदास जी द्वारा वर्णित हनुमान जी का चरित्र अत्यन्त उदान्त और पवित्र है। श्री रामकार्य के अलावा उनका कोई व्यक्तिगत कार्य नही है। श्री राम के अलावा उनका कोई आश्रय नही है, कोई परिग्रह नही है। सुग्रीव के समान उनका राज्यपुत्र कलत्र आदि प्रपंच नही है। अपने बल का अभिमान तो क्या, उन्हे उसका बोध तक नही है।

1– हनूमान रट राम, चरण – रघुपति का भेव्या ।
दासा तन मन झाल, खाल कबहुँ नहि भेव्या ।।
गार फलॉग उण पार, उलट लंका गढ आयो ।।
सीता धीर बधॉ, बंदरॉ प्राण बचायो ।।
हरखा काम केता किया, चरण चरण जन आय ।
अंजनी सुत हनुमान को, रघुपति कहे सुणाय ।।
(भक्तमाल संत श्री हरखाराम जी)

जब याद दिलाया जाता है, तभी उन्हें उसका स्मरण होता है। हनुमान जी अपनी हेयता का खुद वर्णन करते हुए कहा है – "न तो मै कुलीन हूँ न विधिज्ञ हूँ, न ही बहुज्ञ हूँ मै केवल रामकाज के लिए ही अवतरित हुआ हूँ। मेरा सम्बन्ध तो उस जाति से है कि प्रातः काल नाम लेने मात्र से मनुष्य को उस दिन का आहार भी उपलब्ध नही हो पाता।"[1]

दूसरे अर्थो में भाव यह है कि बिना हनुमान जी के राम जी को नही प्राप्त किया जा सकता और उनकी प्राप्ति के लिए हमें अपने व्यक्तित्व का सर्वथा विलय करना होगा अर्थात अपनी पीड़ा के निवारण हेतु हनुमान जी के स्मरण के पहले अपने को श्री राम के चरणों में समर्पित करना होगा, जब हमारा पूर्ण समर्पण होगा तभी हमारी व्याधियों का अन्त होगा और उन्हीं व्याधियों का अन्त श्री राम की पूर्ण विजय है। यही हनुमान जी का दर्शन तुलसी के रामकाव्य में सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है।

श्री रघुनाथ जी के अव्यकत होने के समय से ही दयामय श्री हनुमान जी भगवत भक्त नर, नारियों का निरन्तर उपकार करते आ रहे है। प्रभु पथ के पथिकों को श्री हनुमान जी निरन्तर सहयोग देते रहते है, उनकी साधना की बाधाओ का निवारण करते रहते है। उन्होंने तुलसीदास जैसे कितने ही भाग्यवान भक्तों को सर्वलोकेश्वर श्री रामचन्द्र जी का विग्रह दर्शन कराकर उनका जीवन सफल कर दिया। श्री हनुमान जी की प्रेरणा से ही तुलसीदास जी ने सनातन धर्मियों का प्रिय ग्रन्थ रामचरित मानस की रचना प्रारम्भ किया और हनुमान जी पग – पग पर संत तुलसीदास की सहायता करते थे। श्री तुलसीदास जी ने हनुमान जी के सम्बन्ध में कहा है कि "जिस प्रकार के कल्याणों की खानि श्री हनुमान जी की कृपा दृष्टि है, उस पर पार्वती, शंकर, लक्ष्मण, श्री राम और जानकी जी सदैव कृपा किया करते है।"[2]

श्री हनुमान जी समस्त प्रकार के विपत्तियों के विनाशक सद्बुद्धि के विकाशक, पर्वताकार दृढ़ दरिद्रता के विदारक, आजन्म ब्रह्मचारी है। तथा निश्चय ही वे दुःखी पीड़ित और आर्त जन की पुकार पर दौड़ पड़ते है। वे हृदय से चाहते है कि संसारी प्राणियों के दुःख, दारिद्र्य, आधि, व्याधि तथा समस्त विपत्तियॉ सदा के लिए समाप्त हो जाए, इसलिए सर्वोत्तम साधना यही है कि सत्य रूप, जयप्रद अंजनीनंदन आंजनेय की उपासना आत्म कल्याण के लिए, प्रभु प्राप्ति के लिए ही की जाए और जो इसके लिए हनुमान जी का आश्रय ग्रहण करते है, उन्हें उनकी कृपा से यथा शीघ्र सफलता प्राप्त होती है और वह निहाल हो जाते है। उनका जीवन और जन्म धन्य हो जाता है।

---

1 – कहहु कवन मै परम कुलीना । कपि चंचल सबही विधि हीना ।।
प्रात लेइ जो नाम हमारा । तेहि दिन ताहि न मिलै अहारा ।।
(सुन्दर काण्ड 6/4)

1 – तापर सानुकूल गिरिजा, हर लखन, राम अरु जानकी ।
'तुलसी' कपिकी कृपा बिलोकनि खानि सकल कल्यान की ।।
(विनय पत्रिका 30/3)

हनुमान जी समस्त प्रकार की आधिदैविक, आधिभौतिक पीड़ा का निवारण कर, सद्बुद्धि को प्रदान कर अपरिमित दरिद्रता को समूल नष्ट करने वाले है। शान्ति एवं सुख प्रदान कर सुकर्म के विधायक है, धर्म रूपी धारा का व्यवस्थापन कर सद्विचार के आगार के निर्माता है तथा जिस प्रकार से लक्ष्मी पति क्षीर सागर में निवास करने वाले लक्ष्मी नारायण के चरण कमलों की वन्दना से समस्त जीव पाप रहित होकर जन कल्याण की भावना से सुपुरित हो जाते है। उसी प्रकार अंजनी कुमार की मन रंजिनी भव भक्ति भंजनी, मोह गंजिनी गाथा समस्त प्रकार की पीड़ा की मुक्ति प्रदात्ता है।[1]

श्री हनुमान जी साध्य रूपा स्वतन्त्र भक्ति के सफल साधक है और यह भक्ति केवल परमात्मा की अहैतुकी कृपा से ही साध्य है। संसार के प्राणी यदि हनुमान जी को हृदय से स्मरण करते है, तो सक्षम देवता द्वारा कष्ट का निवारण न कर सकने पर हनुमान जी को उस कष्ट को दूर करने में क्षण मात्र की देर नही लगती। असीम सुदृढ़ सुरक्षा के बीच बनी हुयी लंका में सौ योजन विस्तृत समुद्र को लॉघकर पहुॅचने मे हनुमान जी के सिवा कोई भी सक्षम नही था। सुग्रीव के सेवक धर्म को भी हनुमान जी ने सब प्रकार से निभाया। इस प्रकार का सेवक संसार में न हुआ है न होगा।[2]

---

1 – विपद – विनाशिनी, विकासिनी सद्बुद्धि की
है, दारिनी समूल दृढ दारिद पहार की ।
शान्ति – सुखदायिनी, विधायिनी सुकर्म की
है, धर्म की सुभूमि, निधि विशद विचार की ।।
पापमर्दिनी, त्यो 'जनसीदन' रमेश पद –
प्रेम – वर्द्धिनी है नाव बूड़े मझधार की ।
मोह – गंजिनी है, भाव भीति भंजनी है, गुण –
गाथा मनरंजनी है, अंजनी कुमार की ।।
(पं0 श्री जनार्दन जी झा, हनुमत गुण गाथा संग्रह पृष्ठ 57)

2 कार्य कृतं हनुमता देवैरापि सुदुष्करम् ।
मनसापि यदन्येन स्मतुं शक्यं न भूतले ।।
शत योजन विस्तीर्ण लंघयेत्कः पयोनिधम् ।
लंका च राक्षसैर्गुप्तां को वा धर्षियितुं क्षमः ।।
भृत्यकार्य हनुमता कृत सर्वमशेषतः ।
सुग्रीवस्येदृशो लोके न भूतो न भविष्यति ।।
अहं च रघुवंशश्च लक्ष्मणश्च कपीश्वरः।
जानक्या दर्शनेनाद्य रक्षिताः स्मो हनूमता ।।
(अध्यात्म रामायण 6/1/2 – 5)

भगवान राम की सेवा में निरन्तर लगे रहने के लिए वानरो को प्रोत्साहित करते हुए हनुमान जी ने कहा कि हम सब वानर परम सौभाग्यशाली है, जो संसार के पालक श्री राम एवं निखिल भुवन की स्वामिनी माता जानकी के कार्य में निमित्त बने है, अन्यथा भगवान श्री राम की इच्छाशक्ति से ही राक्षस कुल का विनाश हो जाता। यह शुभावसर इन्द्र आदि देवताओं के लिए भी दुर्लभ है। इससे हम इस तथ्य पर पहुँचते है कि हनुमान जी की आराधना, पूजा, उपासना भगवान राम की अर्न्तनिहित कृपा की ऊर्जा से प्रकाशित है जो समस्त त्रिगुण, त्रिताप, का विनाश करने वाली है। देवी, देवता, दैत्य, मनुष्य, मुनि, सिद्ध, जड़, नाग, पूतना, पिशाचिनी, डॉकिनी, जितने भी कुटिल प्राणी है, वे सभी रामदूत अंजनी नंदन आंजनेय की आज्ञा शिरोधार्य करते है। भीषण यंत्र, मंत्र, त्रंत, छल, कपट असाध्य रोग हनुमान जी की दुहाई सुनकर स्थान छोड़ देते है।[1] आधिदैविक पीड़ा के भुक्तभोगी तुलसी की बाहु पीड़ा एक सटीक प्रमाण है, जिससे छुटकारा पाने के लिए तुलसीदास जी ने हनुमान जी से ही विनम्रता पूर्वक प्रार्थना की थी, और प्रभु राम के सेवक हनुमान जी की कृपा से उनकी बॉह पीड़ा समाप्त हो जाती है।[2]

---

1 – देवी देव दनुज मनुज सिद्धि नाम,
छोटे बड़े जीव जेते चेतन अचेत है।
पूतना पिसाची जातुधानी जातुधाम बाम,
रामदूत की रजाइ माथे मानि लेत है।।
घोर जंत्र मंत्र कूट कपट कुरोग जोग,
हनुमान आन सुनि छाड़त निकेत है।
कोध कीजे कर्म को प्रबोध कीजे तुलसी को
सोध कीजे तिनको जो दोष दुख देत है ।।
(हनुमान बाहुक 29 / 32)

2 – बडी बिकराल बालघातिनी न जात कहि,
बॉहुबल बालक छबीले छोटे छरैगी ।।
आइ है बनाइ बेष आप ही बिचारि देख,
पाप जाय सबको गुनी के पाले परैगी ।
पूतना पिशाचिनी ज्यौ कपिकान्ह तुलसी की,
बॉह पीर महावीर, तेरे मारे मरैगी ।।
(हनुमान बाहुक 24 / 25)

हम सव उन देव विग्रह श्री हनुमान जी का स्मरण करे जो सदा अपने हृदय मे रमा करने वाले संतो की सभा में निवास करते है, मृदु, मधुर, हास्य युक्त है, बानरों के मध्य सुशोभित है, सज्जनों की धुरी है, दिग्विजयी है, विपत्ति निवारक है, युद्ध में निनाद करने वाले है, सद्ब्रह्म (श्री राम) के ध्यान में रत् है, सदैव सबके रक्षक है, वरदायक है, तथा परम कल्याण कारक है।[1] सीता के शोक संताप के विनाश में निपुण, प्रबल प्रतापी श्री हनुमान जी भगवान श्री रामचन्द्र ,जी के आलिंगन रूप दिव्य वर प्रसाद से सम्पन्न है। जो ब्रह्मचारियों के शिरोमणि तथा कपट साधु कालनेमि को विधिवत् शिक्षा देने वाले है।[2] इस प्रकार जो विवेकशील धीर मानव निष्काम भाव से श्री मारूत नंदन का विधिवत चिन्तन करते हुए उनका नाम स्मरण करता है – परम सौम्य वानरेन्द्र श्री हनुमान जी साक्षात प्रकृट होकर नित्य अपने परम स्नेही भक्त की रक्षा करते है।[3]

भक्तो का परिगणन करते समय जो नाम माला के सुमेरू की भॉति सबसे पहले हमारा ध्यान आकर्षित करता है, वह है भक्त राज हनुमान। प्रबल प्रतापी पराकमी जितेन्द्रिय श्रेष्ठ ज्ञानियों में अग्रगण्य हनुमान जी का जीवन भारतीय जनता के लिए सदैव प्रेरण का श्रोत रहा है। हिन्दी साहित्य के भक्ति काल का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि जब भारत पर मुस्लिम आकान्ताओ के आकमण हो रहे थे एवं भारतीय जनता सर्वथा निराश्रित स्थिति मे पहुॅच गयी थी – उनके धर्म देवस्थान आदि कुछ भी सुरक्षित न रह गये थे,

---

1 – सदसि वसन्तं सुमृदु हसन्तं
कपिषु लसन्तं धुरिसन्तम् ।
जितहरिदन्तं कृतविपदन्तं
युधिनिनदन्तं श्रितसन्तम् ।।
सद्नुभवन्तं सतत्भवन्तं
प्रभुवरवन्तं प्रभवन्तम् ।
स्वहृदि रमन्तं सुरतनुमन्तं
स्मर परमं तं हनुमन्तम् ।।
(पं० श्री नन्दलाल जी खेडवाल)

2 – सीतार्तिदारूणपटुः प्रबलः प्रतापी श्री राघवेन्द्रपरिरंम्भवरप्रसादः ।
वर्णीश्वर सविधिशिक्षित कालनेमिः पंचाननोऽपनयतां विपदोऽधिदेशम् ।।
(जगद् गुरू आदिशंकराचार्य)

3 – स्तोत्रं य एतदनुवासरमस्त कामः श्री मारूति समनुचिन्त्य पठेत् सुधीरः ।
तस्मो प्रसाद सुमुखो वरवानरेन्द्रः साक्षात्कृतो भवति शाश्वतिकः सहायः ।।
(जगद् गुरू शंकराचार्य स्वामी)

उस समय उसके भय ग्रस्त ह्रदय को सम्बल प्रदान करने के लिए संत शिरोमणि तुलसीदास जी ने अपने लोकनायकत्व को सार्थक बनाने के निमित्त हनुमान चालीसा, संकट मोचन, हनुमान बाहुक आदि श्री हनुमान चरित्र पर रचनाओं द्वारा निष्प्राण हिन्दु जाति की नसों में वीरता के ऊर्जस्वल रक्त को प्रवाहित करने का स्तुत्य प्रयास किया। इतना ही नही, उन्होंने इस प्राण प्रवाही स्त्रोत को स्थायित्व प्रदान करने के लिए काशी में स्वयं संकट मोचन हनुमान जी की स्थापना करके अपने अनुयायिओं भक्तों के मध्य हनुमान जी की पूजा पद्धति इस दृष्टि से प्रचलित की थी, जिससे भारतीय हिन्दू अपने को दीन, हीन अथवा निराधार न मानकर इस प्रेरणा श्रोत से प्रेरणा लेकर अपने कर्तव्य कर्म की ओर जागरूक हो जाए। औरंगजेब के शासनकाल में गोस्वामी श्री तुलसीदास जी के आदर्श पर स्वामी श्री रामदास तथा छत्रपति शिवाजी ने दस – दस कोस की दूरी पर श्री हनुमान मंदिरो की स्थापना कर महाबीर हनुमाना के नाम पर अखाडो और दुर्गो की स्थापना की। ये ही अखाडे आगे चलकर हिन्दू धर्म रक्षण के प्रमुख केन्द्र थे। प्रमाण स्वरूप आज भी दक्षिण के गॉव गॉव में मारूति के अभिमंडित है, तथा इस बात के परिचायक है कि महावीर हनुमान जी ने किस प्रकार से अनुप्रेरित करके अपने अनुयायियों की रक्षा की, तथा "स्वधर्मे निधनं श्रेयः" (गीता 3/32) की भावना से ओत प्रोत कर हिन्दू तथा हिन्दूत्व की रक्षा की थी ।

परम प्रभु श्री राम का दर्शन समस्त लौकिक, पारलौकिक सुखों का मूल है। अर्निवचनीय शान्ति प्रदायक है। यह दर्शन श्री राम की प्रेमाभक्ति के बिना संभव नही है, और उस प्रेमाभक्ति की प्राप्ति काम, कोध आदि से ग्रस्त सांसारिक जीवों को सहज रूप में प्राप्त नही हो सकती। दयामय श्री राम की हैतुकी कृपा से ही यह संभव है। किन्तु जिस पर श्री हनुमान जी की कृपा दृष्टि पड़ जाती है वह प्रभु श्री राम तथा उनकी प्रेमाभक्ति को प्राप्त कर लेता है, और कृपामूर्ति श्री हनुमान जी इसके लिए प्रतिक्षण तत्पर रहते है। जीव मात्र को प्रभु के मंगल मय चरण कमलों में पहुॅचाकर उसका कल्याण करने के लिए हनुमान जी सदैव आतुर रहते है। संतुष्ट होने पर हनुमान जी को जीव का परम कल्याण करने में क्षण मात्र की देरी नही लगती, और हनुमान जी के संतुष्ट होते ही परम कृपालु श्री रघुनाथ जी को संतुष्ट होते देर नही लगती, अर्थात हनुमान जी की प्रसन्नता में ही जीवन और जन्म की सफलता एवं सार्थकता है। पीड़ा चाहे जैसी हो हनुमत चरण वन्दना मात्र से ही विलीन हो जाती है अतः जीव को अपने परमार्थिक मोक्ष एवं लौकिक, भौतिक, दैविक तापों से निवृत्ति हेतु सदैव मारूति नंदन हनुमान जी का आश्रय लेना ही श्रेयस्कर है।

अध्याय – पंचम

पंचम अध्याय

तुलसी के रामकाव्य में परमात्मबोध हेतु आंजनेय कृपा –

तुलसीदास मूलतः दास्य – भक्ति के कवि है। अतएव उनके काव्य में सख्यप्रेयान भाव की विशेष अभिव्यंजना नही हो सकी। ऐसे ही कुछ ही स्थल है, जहाॅ पर सख्यप्रेयान भाव की अभिव्यंजना हुई है। तुलसीदास के काव्य में अभिव्यक्त शुद्ध भक्ति रस का एक प्रकार वत्सल भक्ति रस है। उनकी कृतियों में निरूपित वात्सल्य तीन रूपो में परिलक्षित है। – शुद्ध वात्सल्य रस, शुद्ध वत्सल भक्ति रस और वात्सल्य मिश्रित भक्ति वत्सल रस।

परमात्मा राम की भक्त वत्सलता का निरूपण हनुमान जी के द्वारा निस्यूत तुलसी के काव्य में जगह – जगह पर मिलता है। तुलसी के परमात्म बोध सम्बन्धी आश्रय दो भागो में रखे जा सकते है– भजनीय और भक्त जन। भक्त जनों में सर्वश्रेष्ठ परम सेवानिष्ठ भक्त अंजनीनंदन आंजनेय है। संस्कृत रामकाव्य में बाल्मीकि के प्रेरक नारद है, और हिन्दी रामकाव्य के प्रेरक अंजनीनंदन आंजनेय है। जिन्होंने सर्वप्रथम तुलसीदास को विशेष कान्तियुक्त एवं तेज से युक्त दो राजकुमारों के दर्शन कराकर परमब्रह्म परमात्मा का बोध करया था। एक जनश्रुति रामघाट से सम्बन्धित मिलती है, जिसमें हनुमान जी ने परमात्मा राम को सन्तो के तिलक करते हुए दृश्य का तुलसी के लिए संकेत किया था।[1]

तुलसीदास ने अपने रामचरित मानस के प्रारम्भिक मंगलाचरण में कवीश्वर महर्षि बाल्मीकि एवं कपीश्वर आंजनेय हनुमान दोनो को ही रामकथा का विशुद्ध विज्ञानवेत्ता के रूप में स्मरण किया है :–

सीताराम गुणग्राम पुण्यारण्य विहारिणौ।
वन्दे विशुद्ध विज्ञानौ कवीश्वर कपीश्वरौ।। बा० का० 4

यद्यपि तुलसीदास और रसिक सम्प्रदाय की बहुत सी मान्यतायें समान है। दोनो में वैधी भक्ति का गौरव है। दोनों में उपास्य से भक्तिगत सम्बन्ध की घनिष्ठता पर बल दिया गया है। दोनो को राम की मर्यादा का भी ध्यान है। दोनो हनुमान की महिमा और महानता को स्वीकार करते है। तुलसी ने खुद को ही नही, हनुमान जी को भी दास की श्रेणी में रखा है, फिर भी हनुमान जी को ही परमात्म बोध का वास्तविक उत्प्रेरक मानते है। उनका कहना है कि यदि हनुमत् कृपा नही होती तो मुझ जैसा परित्यक्त जन परमात्मा राम की शरण में कभी नही पहुँच सकता था। इस प्रकार अंजनीनंदन आंजनेय की सहृदयता मंगलकामना, दया प्रेम, सहानुभूति तुलसी के संदर्भ में जितनी व्यक्त की जाए कम ही है।

---

1 चित्रकूट के घाट मे भई सन्तान की भीर।
तुलसीदास चन्दन घिसें तिलक देत रघुबीर।।

इसी क्रम में अब आत्मा, परमात्मा के अध्यात्मिक स्वरूप का यथा बुद्धि सम्मत विचार करना है।

(क) आत्मा, परमात्मा, परमात्मा का आध्यात्मिक स्वरूप –

1 – आत्मा – आत्मा एक शाश्वत सत्य है। आत्मा का स्वरूप अवर्णनीय है। भगवान श्री कृष्ण ने युद्ध के क्षेत्र में अपने सगे सम्बन्धियों को देखकर अर्जुन के मन में व्याप्त मोह को देखकर आत्मा के सम्बन्ध में विशद उपदेश किया है, जिस प्रकार इस देह में कुमारावस्था, यौवनावस्था तथा वृद्धावस्था निहित रहती है लेकिन मृत्यु के पश्चात आत्मा उस शरीर को छोड़कर दूसरे में चली जाती है। इसका कभी नाश नही होता।यह अविनाशी है, अजर है, अमर है।[1]

यह आत्मा न कभी पैदा होता है, न कभी मरता है, न कभी होता है, न हुआ है, न होगा। यह नित्य, अनामय, शाश्वत है। इसको शरीर में कभी मारा नही जा सकता, यह नितान्त अव्यय है। इसलिए हे पार्थ ! इसे कोई व्यक्ति कैसे मार सकता है। अतः आत्मा का स्वरूप चिन्तन से परे है, इसके बारे में जितना भी चिन्तन किया जाए, अत्यल्प है।[2]

आत्मा राग, भय आदि से रहित है, जो व्यक्ति स्थिर बुद्धि वाला है, संयमी है, इन्द्रिय निग्रही है, वह इस आत्मा की विलक्षणता को राग द्वेष से विमुक्त करके, स्थिरता प्रदान करने के लिए सदैव जाग्रत रहता है, क्योकि न तो महाशक्ति के द्वारा मार जा सकता है, न अग्नि के द्वार जलाया जा सकता है, न पानी के द्वारा आर्द्र किया जा सकता है, तथा न पवन के द्वार शोषित किया जा सकता है। यह अबध्य है, अशेष्य है, नित्य सर्वगत है, स्थाणु है, अचल है, अव्यक्त है, अचिन्त्य है, अविकारी है तथा अशोच्य है। जिस प्रकार से मनुष्य पुराने कपड़ों को त्यागकर नवीन कपड़े धारंण कर लेता है उसी प्रकार आत्मा पुराने जीर्ण, शीर्ण शरीर को छोड़कर नये शरीर में प्रविष्ट कर जाता है, ऐसे जन पूर्णतया भ्रम में है। आत्मा न कभी मरता है, न कभी मारा जाता है। जो शरीर जन्म लेगा, अवश्य मरेगा। इसलिए जन्म मृत्यु के इस सिद्धान्त के बारे में विषाद करना पूर्णतया निरर्थक है।[3] इसलिए आत्मा का निरूपण करना तर्क संगत और युक्ति संगत नही है। जो विशुद्धात्मा होते है वे समस्त प्रकार के सांसारिक बन्धनों से मुक्त हो अपने आत्मा को परमात्म ज्ञान की ओर अभिमुख कर देते है।

डा० सर्वपल्ली राधाकृष्णन के अनुसार – श्वसन किया में समर्थ आत्मा है। व्याकरण की दृष्टि से अत् धातु का अर्थ है – जाना, चलना, घूमना, लगातार चलते रहना। श्वसन किया लगातार चलती रहती है, अतः लगातार चलते रहने में समर्थ आत्मा है। आत्मा (अत्. मनिण) का अर्थ जीव है। और इस प्रकार जीव को हितोपदेश में इस प्रकार वर्णित किया गया है –

कियात्मना यो न जितेन्द्रियो भवेत्। (हितोपदेश–1)

---

1 – गीता 2 / 13 / 14 / 15 ।

2 – गीता – 2 / 16 / 19 / 20 / 21

3 – गीता श्लोक 2 / 22 / 23 / 24 / 25 / 26

अर्थात जो क्रियात्मक होने से जितेन्द्रिय नही हो सकता। परन्तु कठोपनिषद का मत हितोपदेशकार के मत से भिन्न है कठोपनिषद में आत्मा के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण उक्ति है –

आत्मनं रथिनं विद्धि, शरीरं रथभवेतु।[1]

आत्मा को रथी समझो और शरीर को रथ। अर्थात शरीर केवल रथ है, और इसी शरीर रूपी रथ में सवार आत्मा है।

महाकवि भवभूति ने "उत्तर रामचरितम्" नाटक में इसी आत्मा को परमात्मा, ब्रह्म के अर्थ में वर्णित किया है –

तस्माद्वा एतदस्मादात्यनः आकाशः सम्भूतः।[2]

"परमात्मा" – इस शब्द से परम आत्मा का वैशिष्ट्य बोधक है परम का अर्थ है – अन्तिम, उच्चतम, सर्वोत्तम, अत्यन्त श्रेष्ठ अर्थात सर्वश्रेष्ठ। महाकवि कालिदास ने अपने महाकाव्य रघुवंश में परमात्म बोध एवं सर्वोच्च नितान्त सत्य के अर्थ में परमार्थ शब्द का प्रयोग किया है।[3] वस्तुतः परमात्मा ही नितान्त अलौकिक सत्य है वास्तविक परमात्म ज्ञान भी वही है, और वही ब्रह्म है। यही परमात्मा परम पुरुष एवं परम ब्रह्म है। इसी परमात्मा को निराकार और निर्गुण कहा जाता है। वेदान्तियों के मतानुसार – परमात्मा ब्रह्म ही इस संसार का निमित्त और उपादान कारण है, यही सर्वव्यापक आत्मा तथा विश्व जीवशक्ति है, यही वह मूलतत्व जिससे संसार की सभी वस्तुएं पैदा होती है, तथा जिसमें पुनः लीन हो जाती है।

"अस्ति तावन्नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभावं सर्वज्ञ सर्वशक्ति समन्वितं ब्रह्म"[4]

भर्तृहरि ने भी अपने वैराग्य शतक में परमात्म बोध के संन्दर्भ में लिखा है –"सर्वीभूता दृष्टिस्त्रिभुवनमपि ब्रह्म मनुते"[5] कठोपूनिषद में यमराज परब्रह्म परमात्मा को परमप्राप्य घोषित करते हुए उसके वाचक ऊँ कार को प्रतीक रूप से परमात्मा का स्वरूप बतलाते है – "ब्रवीम्योमित्येत"[6] नाम रहित होने पर भी परमात्मा अनेक नामों से पुकार जाते है। उन सब नामो में ऊँ सर्वश्रेष्ठ माना गया है। यह अविनाशी प्रणव ऊँ कार ही तो ब्रह्म (परमात्मा का स्वरूप) है और यही अक्षर परब्रह्म है। अतः इस तत्व ऊँ अक्षर को समझकर साधक ब्रह्म और परब्रह्म के अभीष्ट रूप को प्राप्त कर लेता है। –

एतद्ध्येवाक्षरं ब्रह्म एतद्ध्येवाक्षरं परम्।
एतद्ध्येवाक्षर ज्ञात्वा यो यदिच्छति तस्य तत्।।[7]

---

1 – कठोपनिषद् 3/3, 2

2 – उत्तर रामचरितं 1/1

3 रघुवंश महाकाव्य 8/22

4 – शरीर भाष्य

5 भर्तृहरि 3/84 (वैराग्य शतक)

6 – कठोपनिषद् 2/2/15

भाष्यकार श्री शंकराचार्य जी ने इसी प्रकरण को अपने ब्रह्मसूत्र भाष्य में परमेश्वर विषयक ही माना है।[1]

भारतीय अध्यात्म के क्षेत्र में परमात्मा को सच्चिदानन्द (सत्. चित्. आनन्द) स्वरूप कहा है। इस सच्चिदानन्द परमात्मा का सत् स्वरूप प्रगट रूप से सर्वत्र है। चित् – मौन तथा आनन्द अप्रगढ़ है। जड़ वस्तुओं में सत् तथा चित् है, परन्तु आनन्द नही है। जीव में सत् और चित् प्रगट है तथा आनन्द अप्रगट रूप में रहता है।प्रत्येक जीव में अन्तर्भत इसी आनन्द को बर्हिमुखी मनुष्य अपने बाहर ही खोजता है। इसीलिए वह चाक्षुष दृश्य देह, धन सम्पत्ति आदि में आनन्द खोजता है। परब्रह्म परमात्मा का जो स्वरूप भूत परम आनन्द है, वहाँ तक मन वाणी आदि समस्त इन्द्रियो के समुदायरूप मनोमय शरीर की पहुँच भी नही है। यह मन वाणी आदि साधन परायण पुरूष को परब्रह्म परमात्मा तक पहुँचाकर लौट आते है। ब्रह्म के आनन्दमय स्वरूप को जान लेने वाला विद्वान कभी भयभीत नही होता। तैत्तीय उपनिषद् के अनुसार – यतो वाचो निर्वतन्ते। अप्राप्य मनसासह। आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान। न विभेति कदाचन्।[2]

सत् चित् आनन्द ईश्वर में परिपूर्ण है। परमात्मा परिपूर्ण सत्रूप, परिपूर्ण चित्रूप, परिपूर्ण आनन्द रूप है। गीता में परमात्मा श्री कृष्ण परिपूर्ण आनन्द स्वरूप है।

श्वेताश्रेतरोपनिषद् के अनुसार परमेश्वर से श्रेष्ठ दूसरा कुछ भी नही है, वही सर्वश्रेष्ठ है। जितने भी सूक्ष्म तत्व है, उन सबसे अधिक सूक्ष्म परमेश्वर ही है, उनसे अधिक सूक्ष्म कोई भी नही है। अपनी सूक्ष्मता के कारण ही वे छोटे से छोटे जीव के शरीर में प्रविष्ट होकर स्थित है। इसी प्रकार जितने भी महान व्यापक तत्व है उन सबसे महान अधिक व्यापक वे परब्रह्म परमात्मा है। उनसे बड़ा उनसे अधिक व्यापक कोई भी नही है। प्रलयकाल में वे ही सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को अपने अन्दर लीन कर लेते है। वे एकाकी वृक्ष की भाँति निश्चल भाव से परमधाम रूप प्रकाशमय दिव्य आकाश में स्थित है। उन परब्रह्म परमात्मा से ही सम्पूर्ण संसार व्याप्त है, अर्थात वे परम पुरूष परमेश्वर ही निराकार रूप से सारे जगत में परिपूर्ण है। –

यस्मात् परं नापरमस्ति किंचिद् ,

यस्मान्नाणीयो न ज्यायोऽस्ति कश्चित्।
वृक्ष इव स्तब्धोदिवि तिष्ठत्येक,
स्तेनेहं पूर्णं पुरूषेण सर्वम्।।[3]

---

1 – ब्रह्मसूत्र 1/3/24

2 – तैत्तरीयोपनिषद् 2/3

3 – श्वेताश्वतरोपनिषद् अ० 3 श्लोक – 9

ऋगवेद, यजुर्वेद तथा अथर्ववेद के अनुसार परम पुरूष परमेश्वर के हजारो सिर, हजारो आँखे और हजारो पैर है अर्थात समस्त अवयवों से रहित होने पर भी इनके सिर, आँख और पैर आदि सभी अंग अनन्त एवं असंख्य है। सर्वशक्तिमान परमेश्वर समस्त जगत को सभी ओर से घेरकर सर्वत्र व्याप्त होते हुए नाभि से दस अंगुल ऊपर ह्रदयाकाश में स्थित है। वे सर्वव्यापी और महान होते हुए ही ह्रदय रूप एक देश में स्थित है –

सहस्त्रशीर्षा पुरूषः सहस्त्रासः सहस्त्रपात्।

सभूमिं विश्वतो वृत्वात्यतिष्ठत दशाङ्गुलम्।।[1]

वस्तुतः सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड परमेश्वर का क्रीडा क्षेत्र है, इसीलिए उत्पत्ति, स्थिति और संहार, लीला में परमात्मा के स्वरूप में कोई परिवर्तन नही होता। संहार भी परमेश्वर की अपनी लीला है। परमात्मा अपने स्वरूप में स्थित रहकर उत्पत्ति, स्थिति और संहार तीनो में आनन्द मानते है।

सच्चिदानन्द परमात्मा में ही सत्य, शिव एवं सुन्दर सन्निहित एवं प्रतिष्ठित है। इनका विलोम असत्य, अशिव और असुन्दर ही दुःख कारक है। मनुष्य दुःख में ईश्वर का स्मरण करता है जिससे उसका मन परमात्मा के अनुसंधान में संलग्न होता है। और उसे आनन्द मिलता है। मानव का स्वभाव छुद्र स्वार्थग्रस्त होने से सुन्दर नही है। परमात्मा का स्वभाव सुन्दर है। भले ही परमात्मा का लौकिक शरीर कभी सुन्दर न भी हो। कूर्मावतार, बराहावतार के शरीर सुन्दर नही थे, परन्तु श्री परमात्मा का स्वभाव इन रूपो में भी अतिशय सुन्दर है। पर दुःख कातरता परमात्मा का स्वभाव है। इसीलिए तो परमपिता परमात्मा वन्दनीय है।

परमात्मा के दो स्वरूप है – (1) अर्चना हेतुक स्वरूप (2) नाम जप हेतुक स्वरूप। तुलसी का राम काव्य नाम स्वरूप है। सामग्री से जिसकी पूजा हो, वही अर्चना हेतुक स्वरूप है। नाम स्वरूप के बिना स्वरूप सेवा फलवती नही होती, इसका कारण यह है कि मन की शुद्धि नही होती और मन की शुद्धि के बिना स्वरूप सेवा में आनन्द नही मिलता। सेवक जब तक संसार के साथ सम्बन्ध रखता है, तब तक उसे स्वरूप सेवा का आनन्द नही मिलता। नाम सेवा मन की शुद्धि के लिए ही है। यही कारण है कि तुलसी ने अपने राम काव्य में प्रायः नाम स्वरूप को ही अपना आधार बनाया है। परमात्मा पूर्ण निष्काम है। अतः उसका निरन्तर ध्यान मानव मन को करते रहना चाहिए। परमात्मा बुद्धि से परे है, इसलिए उसका रूप, स्वरूप ध्यान में रखकर नित्य–प्रति चिन्तन करना चाहिए – "मन एव मनुष्याणां कारणं बन्ध मोक्षयोः"[2] मन ही मनुष्य के मोक्ष एवं बन्धन का कारण है।

---

1 – ऋगवेद 10/90/1, यजुर्वेद – 31/1, अथर्ववेद – 19/6/1

2 – श्री मद् भगवत गीता

परमात्मा का ध्यान करने से मन शुद्ध होंता है। दान, स्नानादि से मन की शुद्धि नही होती। संसार का चिन्तन करते रहने से विकृत हुआ मन परमात्मा के सतत चिन्तन बिना शुद्ध नही होगा। साङोपाङ वेद, वेदान्त, सांख्य, योग, नीतिशास्त्र, धर्मशास्त्र, न्यायशास्त्र आदि के मार्ग यद्यपि अलग अलग है, फिर भी वे अन्त में उसी परमात्मा का चिन्तन करते है। "जिस प्रकार विभिन्न मार्गो से बहती नदियाँ अन्त में समुद्र में पहुँचती है, उसी प्रकार सभी वेदशास्त्रो के वर्ण्य विषय अन्ततोगत्वा उसी परमात्मा का चिन्तन करते है।"[1]

जगत सत्य है परमात्मा सत्य है।[2] यदि सुखी होना है तो सत्य स्वरूप परमात्मा का ध्यान करना ही हितकारी है, क्योकि भूत, वर्तमान और भविष्य तीनो का एक ही स्वरूप धारण करे, वही सत्य स्वरूप है। व्यवहार जगत में सत्य सा ही लगता है, किन्तु परमार्थ दृष्टि और तात्विक दृष्टि से जगत सत्य नही है। जिसको परमात्मा का ज्ञान होता है, वह जगत का सम्मान नही करते।

परमात्मा भेद रहित अखण्ड तेजोमय स्वरूप है। वही सम्पूर्ण भूत और इन्द्रियों का भी अधिष्ठान है। जब तक मनुष्य परमात्मा के चरणारविन्दो का आश्रय नही लेता तब तक उसे धन, बन्धुजनों के द्वारा प्राप्त होने वाला भय, शोक, दीनता, लालसा आदि अत्यन्त सताते रहते है।[3]

परमात्मा का अध्यात्मिक स्वरूप –

जिस प्रकार भौतिक धन सांसारिक वस्तुओं का होता है, उसी प्रकार आध्यात्मिक धन मनुष्य के परमार्थिक विचारो का होता है। मनुष्य के मन में जहाँ तक परमार्थ विषयक सद्‌विचार है और वह परहित की कामना करता है वही तक वह अध्यात्मिक दृष्टि से धनी है। भौतिक धन की वृद्धि से मनुष्य में अपने विषय में चिन्ता बढ़ती है, किन्तु आध्यात्मिक धन की वृद्धि होने पर वह अपने स्वार्थ को भूलकर दूसरों के कल्याण के लिए सदा प्रयत्न करता रहता है। जो व्यक्ति जितना अधिक दूसरो के कष्ट निवारण के तत्पर रहता है, वह उतना ही आध्यात्मिक दृष्टि से धनी है। महात्मा बुद्ध, ईसामसीह, सुकरात, विवेकानन्द आदि के पास भौतिक धन नही था, पर वे आध्यात्मिक दृष्टि से अत्यन्त धनी थे। सुगमता की दृष्टि से आध्यात्म को हम इस प्रकार परिभाषित करते है।

अध्यात्म ज्ञान में नित्य स्थिति होने पर सम्पूर्ण अनात्म वस्तुओं में नाश रहित, विभाग रहित और समभाव में स्थित परमात्म तत्व का अनुभव हो जाता है।[4]

---

1 – स्वामी विवेकानन्द का व्याख्यान (शिकागो धर्म सभा सम्मेलन में)

2 – भागवत प्रथम स्कन्ध

3 – भागवत स्कन्ध 3 अध्याय – 9/2/3/4

4 – आरण्यक ग्रन्थ 4/3/5

वेदान्त की दृष्टि से अध्यात्म ज्ञान, श्रवण, नित्यत्व, मनन और तत्वज्ञानार्थ दर्शन निदिध्यासन है।[1]

साँख्य दर्शन के अनुसार भौतिक जगत में लिप्त न होकर सम्पूर्ण प्राणी मात्र को अपना समझना तथा सकल पदार्थो में निजत्व की भावना को आप्लावित करना अध्यात्म कहा जाता है।[2] अध्यात्म भौतिक जगत में निजत्व की भावना से प्रतिपादित होता है क्योकि परमात्मा सम्पूर्ण संसार का सृजनहार है। सम्पूर्ण जगत और जीवात्मायें परमात्मा से ही प्रकाशित है। जीवात्मा परमात्मा का ही अंश है, अतः परमात्मा सभी में अंशी है। जीव मात्र में परमात्मा है, केवल शरीर भिन्न –2 है। आध्यात्मिक दृष्टि से हम परमात्मा के आध्यात्मिक स्वरूप को इस प्रकार परिभाषित करते है।

जो भीतर और बाहर व्यापक है, नित्य है, शुद्ध है, एक है और सदा सच्चिदानन्द है, जिससे स्थूल, सूक्ष्म प्रपंच का भान नहीं होता है तथा जिससे उसका प्राकट्य वही परमात्मा का आध्यात्मिक स्वरूप है।[3]

जो एक जगत का आदि कारण है, इच्छा रहित है, निराकार है और प्रणव द्वारा जानने योग्य है। तथा जिनसे सम्पूर्ण विश्व की उत्पत्ति एवं पालन होता है और फिर उसमें लय हो जाता है, ऐसा तत्व रूप परमात्मा का आध्यात्मिक स्वरूप है।[4]

देह, प्राण, इन्द्रिय, अन्तःकरण की वृन्तियाँ पंचमहाभूत और उनकी तन्मात्रायें आदि जड़ में जो सत्, रज, तम आदि तीनो गुणों का समावेश कर, सम्पूर्ण प्राणि – जगत को संचालित करता है, वह परमात्म तत्व के नाम से जाना जाता है।[5]

जो जीव जगत के भेद और स्वगत भेद से सर्वथा रहित एक अद्वितीय है, वही परमात्मा का आध्यात्मिक स्वरूप है।[6]

जो स्वयं के प्रकाश से प्रकाशित है, अनन्त, अप्राकृत, कल्याण गुण – गणों से युक्त विग्रह रहित आदि ब्रह्म ही आध्यात्मिक ब्रह्म है।[7]

---

1 – वेदान्त सार 4/1/4

2 – सांख्य दर्शन 8/16/24

3 – आचार्य शंकर – निर्वाण मंजरी – 9

4 – वेदसार, शिव स्तव – 5

5 – श्री मद् भागवत् पुराण 6/4/24/25

6 – श्री मद् भागवत् पुराण

7 –प्रतिभा विज्ञान – 106/10

जो एकमात्र ज्ञान स्वरूप प्रकृति से परे एवं अदृश्य है, जो समस्त वस्तुओं के मूल में स्थित अव्यक्त है, और देशकाल अथवा वस्तु से जिसका पार नही पाया जा सकता, वही परमात्मा का आध्यात्मिक स्वरूप है।[1]

ये तो सम्पूर्ण भौतिक जगत देवता एवं ऋषि गण भी उनके परमप्रिय सत्यमय शरीर से उत्पन्न हुए है, फिर भी उनके बाहर भीतर एक रस प्रकट वास्तविक स्वरूप को नही जानते। तब रजोगुण एवं तमोगुण प्रधान असुर आदि तो उन्हें जान ही कैसे सकते है, ऐसे ब्रह्म का स्वरूप ही परमात्म तत्व है।[2]

परमात्मा व्यापक है और जो भेद दिखाई देता है वह अज्ञान के कारण ही दिखाई देता है, किन्तु तत्व भेद नही होता। तत्वतः आत्मा और परमात्मा, जीव और ईश्वर एक ही है घटाकाश और व्यापक आकाश एक ही है, किन्तु घट की उपाधि के कारण भेद का आभास होता है। घट के फूट जाने पर घटाकाश और महाकाश एक हो जाते है। परमात्मा निर्विकार है, आदि पुरूष है, सबके हृदय में अन्तर्यामी रूप से विराजमान है, अखण्ड और अतर्क्य है, मन जहाँ जहाँ जाता है, वहाँ – 2 परमात्मा पहले से विद्यमान रहता है। वह आराधनीय एवं स्वयं प्रकाशक है। परम अक्षर ब्रह्म है। अपना स्वरूप जीवात्मा सम्पूर्ण भूतो के भाव को उत्पन्न करने वाला जो तत्व है, वह कई नाम से जाना जाने वाला परमात्मा ही है। हिन्दी राम काव्य के परम भागवत गोस्वामी तुलसीदास जी का साहित्य एक अनुपम और आदर्श साहित्य है। गोस्वामी जी के सिद्धान्त के अनुसार आगम – निगम, पुराण, सुर, नर, सिद्ध, साधु सबका एक ही मत है कि परमात्मा राम की भक्ति के बिना अन्यत्र सुख नही है। श्रुतियों का यही निर्देश है, कि सारे कामो को भूलकर केवल राम की शरण में जाओ। परमात्मा का रहस्य अत्यन्त गूढ़ है, लेकिन शिव, ब्रह्म, नारद आदि मुनि जन अपनी परम भक्ति के कारण भगवान को अत्यन्त प्रिय हुए है। भक्ति में जाति, धर्म, लिंग आदि का कोई भेद नही है। भक्ति और ज्ञान दोनो से ही मुक्ति प्राप्त होती है। ज्ञान की साधना में क्लेश अधिक है। भक्ति की विशेषता यह है कि इसके द्वारा भगवान की प्राप्ति सहज हो जाती है। तुलसी साहित्य में जगह – 2 पर भगवान राम के आध्यात्मिक स्वरूप के दर्शन होते है। दया, परमार्थ, सहनशीलता, कर्मठता, सहजता, सहृदयता, सुगमता, समता आदि राम काव्य के विभिन्न सोपान है, जो श्री राम के परमात्म तत्व के माध्यम से जाने जा सकते है। गोस्वामी तुलसीदास ने राम को "सच्चिदानन्द दिनेशा" लिखा है। अर्थात जिसमे असत्य की संज्ञा नही है और सत्य का आभाव नही है, ऐसा परमात्मा राम हंसावतार लेकर पृथ्वी के भार को सगुण स्वरूप में अवस्थित होकर दूर करते है।

1 – श्री मद् भागवत् 8/5/29 – 30

2 – श्री मद् भागवत 8/5/31 – 32

जैसे सोने की एक छोटी सी डली में सभी प्रकार के गहने व्याप्त है, पत्थर में सभी प्रकार की मूर्तियाँ सन्निहित है, रंगो में सब प्रकार के चित्र विद्यमान हे, और स्याही में सभी प्रकार की लिपियाँ छिपी है, अर्थात कारीगर, चित्रकार, लेखक, कवि, कहानीकार जैसा बनाना, करना या लिखना चाहे लिख सकता है। वैसे ही परमात्मा सब जगह व्याप्त है। इसलिए साधक परमात्मा को सगुण या निर्गुण जिस रूप में जहाँ प्राप्त करना चाहे प्राप्त कर सकता है। परमात्मा सांसारिक जीवो की तरह संसार में आशक्त नही है। वास्तव में वह संसार से निर्लिप्त है, तथापि अपनी अलौकिक शक्ति के बल से सम्पूर्ण संसार का भरण पोषण करते है। वे सम्पूर्ण गुणो से भी सर्वथा अतीत है, अर्थात निर्गुण है।

मूल रूप से यह भी कहा जा सकता है कि परमात्मा गुणो के भोक्ता होते हुए भी जीवो की तरह प्रकृति के गुणों में लिप्त नही है। वे गुणों से सर्वथा अतीत होकर भी प्रकृति के सम्बन्ध से समस्त गुणों के भोक्ता है। इस प्रकार सर्वथा निर्गुण होते हुए भी उनमें सगुण के कार्य विद्यमान है। यही परमात्मा के आध्यात्मिक स्वरूप की अलौकिकता है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि एक परमात्मा ही निर्गुण, सगुण, निराकार, साकार सब कुछ है। वही सम्पूर्ण दृष्टि की एक मात्र सत्ता है जो उसी में व्याप्त है।

विश्व में भारत का आध्यात्मिक क्षेत्र विशिष्ट एवं सर्वोपरि रहा है। आत्मा की अमरता का संदेशक, जीवन की अखंडता का समर्थक, "सम्भवामि युगे – युगे" का उद्घोषक, जीव मात्र में परम चेतन सत्ता का उद्घाटक, अखिल ब्रह्माण्ड के कण – कण में व्यापक, पावन एवं प्रेरक शक्ति का प्रतिपादक एवं अग्रगण्य, शंखनाद कर्ता, विश्व की आध्यात्मिक चेतना का प्रमुख केन्द्र भारत का पावन एवं महिमामय भू भाग ही रहा है। ऐसी पवित्र माटी में जन्म लेने वाले और राम कथा के अमर गायक गोस्वामी तुलसीदास जी ने जन – जन में एक अपूर्व भक्ति–रस की पयस्वनी प्रवाहित की है। इस विशिष्टता का अभिवादन विश्व की ज्ञान चेतना ने प्रसन्न वदन होकर, मुक्त हृदय एवं मुक्त कण्ठ से किया है। यही विशिष्टता सन्त परम्परा की जननी है।

परमात्मा की व्यापकता पर प्रकाश डालते हुए श्वेताश्वतरोपनिषद् यह स्पष्ट करता है, कि जो पहले हो चुका है, जो भविष्य में होने वाला है, और जो वर्तमान काल में अन्न द्वारा या खाद्य पदार्थ द्वारा बढ़ रहा है, वह समस्त जगत परम पुरूष परमात्मा का ही स्वरूप है। वे स्वयं स्वरूप भूत अचिन्त्य शक्ति से इस रूप में प्रकट होते है। तथा वे ही अमृत स्वरूप मोक्ष के एक मात्र स्वामी है, अर्थात जीवो को संसार बन्धन से छुड़ाकर स्वप्राप्ति करा देते है। अतः परमात्माभिलाषी साधको को उन्ही की शरण में जाना चाहिए।

पुरूष ए वेदं सर्व यद्भूतं यच्चभव्यम्।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति।।[1]

उक्त मंत्र वैदिक ऋषियों के इसी परमात्म – चिन्तन को व्यक्त करता है।

---

1 – ऋग्वेद – 10/90/2, यजुर्वेद – 31/2, अथर्ववेद – 19/6/4

राम काव्य में तुलसीदास का परमात्म बोध –

राम एवं रामत्व ही गोस्वामी तुलसीदास का मुख्य प्रतिपाद्य है। सम्पूर्ण राम काव्य में तुलसीदास ने राम को प्रमुख प्रतिपाद्य मानकर चरित्रांकन किया है। कवि ने बहुधा परमात्मा, ईश्वर, हरि, केशव, माधव आदि नामों का भी व्यवहार तथा संकेत राम के लिए किया है। "कही – कही शिव से भी उनका अभिप्राय भगवान राम से ही है।"[1]

वे वचन अगोचर, बुद्धि से परे, अविगत, अनिर्वचनीय और अपार है।'श्रुति नेति – नेंति द्वारा ब्रह्म का निरूपण करती है।[2] तदनुसार तुलसीदास ने भी राम की अनिर्वचनीयता का प्रतिपादन किया है, जिसकी कोई माप नही, जो कल्पना से परे है। राम के चिदानन्द स्वरूप के विषय में यह स्मरण रहे कि जिस प्रकार रामानुजाचार्य द्वारा प्रतिपादित ब्रह्म ज्ञान स्वरूप और आनन्द स्वरूप होते हुए भी ज्ञान गुण युक्त एवं आनन्द गुण युक्त है। उसी प्रकार तुलसीदास द्वारा विनय पत्रिका में निबद्ध प्रार्थना स्वभावतः परमात्मा राम की ही सेवा मे निवेदित है। इससे आभासित होता है कि उनको राम के परमात्म स्वरूप का आत्म बोध हो गया था। शरणागतो के पालक, भीत जनो के रक्षक, प्रणतप्रेमी, सेवकजनो के रंजनकारी, त्राता एवं सुखदायक परमस्नेही, परमात्मा राम सर्वप्रथम भक्तवत्सल है।[3] ऐसा परमात्मबोध का आत्म ज्ञान तुलसी को सहानुभूति एवं अंजनीनंदन आंजनेय की प्रेरणा से तथा ब्रह्म राम द्वारा प्रदत्त अन्तर्ज्योति से भाषित हुआ था।

परमात्मा ब्रह्म के अवतार धारण करने की विविध कथाओं में से तुलसी को उनके मानव रूप में अवतरित होने की कथा सर्वोपरि रूचिकर प्रतीत हुई। जिसके प्रथम प्रेरक हनुमान जी को ही कहा जा सकता है, क्योकि चित्रकूट में जिन दो राजकुमारो के दर्शन तुलसीदास ने किये थे, उनकी सुन्दरता में करोडो कामदेव न्योछावर हो जाते है। यही कारण है कि ब्रह्म के निर्गुण और सगुण रूप में से तुलसीदास ने सगुण को अधिक श्रेयस्कर माना और सगुण रूपों में भी दशरथ राम को उन्होने अधिक महत्व दिया। यद्यपि तुलसीदास ने अपनी समन्वयवादी प्रतिभा द्वारा निर्गुण एवं सगुण के अभेद का प्रतिपादन किया है, फिर भी उनका विशेष आग्रह मनुष्य के प्रति है। प्रेमी भक्त के आह्वान पर वे साकार रूप में अवतीर्ण हुआ करते है।[4]

---

1 – रामायण – 3/15 विष्णु का भी एक नाम शिव है।

2 – वृहदारण्यकोपनिषद – 2/3/6, 3/9/26, 4/5/15

3 – रामायण – 6/3/3, नारद पुराण – 1/5/44, भागवत पुराण – 8/3/28

4 – "अगुन अरूप अलख अज जोई। भगत प्रेम बस सगुन सो होई।।

रामचरित मानस 1/116/2

गोस्वामी जी ने राम के इसी रूप में मानवता की जगमगाती ज्योति देखी। पुरातन युग से भारतीय मानव जाति अपने भक्ति भावमय चिन्तन के अनुरूप श्री राम के व्यक्तित्व में कुछ न कुछ जोडती चली आयी है, और प्रभु श्री राम ही उनके विश्वासों की रक्षा करते हुए जन मानस की धारणाओं को उनके भाव के अनुरूप पुष्ट करते आये है। ऐसे ही भक्तों के आराध्य भक्तवत्सल श्री राम तुलसी के प्रतिपाद्य है। तुलसी का परमात्म बोध एक ओर अध्यात्म विद्या के प्रचार का आधार है और दूसरी ओर विलासता त्याग कर ईश्वर की ओर उन्मुख होने की प्रेरणा देता है।

"नाना पुराणनिगमागमसम्मतं यद् रामायणे निगादितं क्वाचिदन्यतोऽपि।" के आधार पर नारद पुराण, देवी भागवत, भागवत पुराण, आनन्द रामायण, गीता, गरूण पुराण, केनोपनिषद् आदि का निचोड़ है। लेकिन अध्यात्म रामायण और पदम पुराण में दोनो व्यास कृत रचनायें है, पर राम भक्ति परक है जिसका प्रभाव राम चरित मानस मे उमा महेश्वर संवाद के साथ ही हनुमान जी के प्रति उपदिष्ट, लक्ष्मण जी के प्रति दण्डक वन में उपदिष्ट है। गोस्वामी जी ने इनका स्थान –2 पर संग्रह किया है। अध्यात्म रामायण के शबरी प्रसंग को अक्षरशः अनूदित कर दिया गया है। स्कनध पुराण के प्रायः सभी खण्डो में न्यूनाकधिक रूप से व्यास जी ने राम भक्ति की सर्वत्र चर्चा की है। किन्तु ब्रह्म खण्ड का सेतु महात्मय अद्भुत राम स्त्रोतो एवं चरित्रों से परिपूर्ण है जिसे देखने में एक बार ऐसा प्रतीत होता है, कि यही सबसे अधिक राम महिमा का ग्रन्थ है। उसमे हनुमान जी द्वार राम जी की स्तुति बहुत ही प्रभावशाली एवं विलक्षण है, जिसका महात्म्य ही लगभग साठ श्लोकों में निरूपित है, और जिसका कुछ अंश तुलसी के राम चरित मानस में निहित है। तुलसी के परमात्म बोध के अनुसार भगवान राम अपनी माया के द्वारा ब्रह्मा रूप से सृजन, विष्णु रूप से पालन तथा रूद्ररूप से प्रलय और तदनन्तर पुनः ब्रह्मा रूप में चराचरात्मक विश्व की यथा पूर्व सृष्टि करते है।[1] इस प्रकार अनादि अनन्त सृष्टि चक्र चलता रहता है। तत्वतः भगवान राम ही सृष्टा और सृष्टि पालक और पालित तथा संहर्ता और संहृत सब कुछ है।[2]

तुलसी के आत्म ज्ञान के अनुसार ब्रह्मा आदि का परमात्मा के साथ तादात्म्य नही है। वह परमात्मा के अंश मात्र है। वे जन्मादि रहित है। राम उनके जनक है।[3] वे राम के अंश से उत्पन्न है।[4]

---

1 – नारद पुराण 1/31/65/66

1 – विष्णु पुराण सृष्टि, सृष्टा खण्ड – 1/2/67

2 – शंभु बिरंचि बिष्णु भगवाना। उपजहिं जासु अशंते नाना।।

रामचरित मानस 1/144/3

3 – तुम ब्रह्मादि जगत जग स्वामी।

रामचरित मानस 1/150/3

4 – विष्णु चारि भुज विधि मुख चारी। विकट भेष मुख पंच पुरारी।।

रामचरित मानस 1/220/4

ब्रह्मा की 'अज' संज्ञा जगत की सापेक्षता के आधार पर मानी गयी है। त्रिदेव की शक्तियाँ सीमित है। उनकी सभी गतिविधियाँ राम द्वारा ही संचालित है। उन्ही के आदेशानुसार वे नाम रूपात्मक जगत की रचना आदि का सम्पादन करते है। सौन्दर्य में भी वे राम राम से हीन है।[5] लोको की असंख्यता के अनुसार उनकी संख्या भी अनन्त है।[1]

प्रत्येक लोक का निर्माता एक ब्रह्मा, पालक एक विष्णु, और संहारक एक शिव है। ब्रह्मा, विष्णु और शिव की भाँति ही उनकी शक्ति रूपा ब्रह्माणी, लक्ष्मी और भवानी भी राम की शक्ति सीता से उत्पन्न है, उनकी सेविकाएं है उनसे सौन्दर्य में भी हीन है।[2]

भृकुटि विलास जासु जग होई। राम वाम दिसि सीता सोई।।

हिन्दी राम काव्य वह दिव्य ज्योति है, जो नाना प्रकार के अधार्मिक पश्चिमी अन्धानुकरण के घोर झन्झावर्ती तूफानों से भी नही बुझायी जा सकती। रामचरित मानस संस्कृति का विश्वकोष है, क्योकि इसमें मानव धर्म और विश्व संस्कृति के सभी तत्वों का सम्यक विवेचन हुआ है। जीवन को रसमय और आनन्दमय बनाने के लिए श्री राम भक्ति का आश्रय परमावश्क है।

इसलिए गोस्वामी तुलसीदास जी ने मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष को राम भक्ति से इस प्रकार ओत – प्रोत कर दिया है, कि वह जीवन का अभिन्न एवं अनिवार्य अंग बन गयी है।

गोस्वामी जी ने कर्म से विमुखता का उपदेश कही नही दिया है, क्योकि राम को भी भिन्न –2 प्रकार के कर्म करने पडे है। गोस्वामी जी का कथन है कि भगवान राम को सम्मुख करके सभी कार्य सम्पादित किये जाए। तुलसी का परमात्म बोध भी सियाराममय है –

सियाराम मै सब जग जानी। करहुँ प्रणाम जोरि जुग पानी।।

श्री राम साक्षात् पूर्ण ब्रह्म परमात्मा है किन्तु वे धर्म की रक्षा, अत्याचार के दमन, और लोक कल्याण के लिए अवतीर्ण हुए थे। अतः यह निर्विवार है कि, भगवान राम के समान सहज कृपालु, भक्तजन आर्तहारी, मर्यादा रक्षक एवं शरणागत वत्सल दूसरा कोई नही हुआ। नर तन धारण कर लीला करने वाले श्री राम सद्गुणों के समुद्र है। ऐसे भक्त वत्सल एवं परम उदार श्री राम नाम स्मरण कीर्तन करने से या उनकी भक्ति में लीन होने से सभी पाप, ताप जल कर नष्ट हो जाते है।

दो अक्षरों का मंत्र 'राम' इस जगत में करोडो मंत्रो से अधिक महत्व रखता है। भगवान राम के स्मरण से जीवात्मा और परमात्मा का प्रेममय सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। भगवत् प्रार्थना और मंत्र जाप करते समय छल, कपट, दम्भ, मोह, माया, ममता, मद मत्सर आदि सम्पूर्ण दोष दूर होकर स्वतः पवित्र हो जाते है, इसलिए भगन्नाम का स्मरण कीर्तन शुद्ध हृदय और निष्काम भाव से तन्मय होकर किया जाना ही श्रेष्ठतम उपाय है।

---

1 – लोक लोक प्रति भिन्न विधाता। भिन्न विष्णु शिव मनु दिशि ताता।।

रामचरित मानस 7/81/1

2 – रामचरित मानस 1/148/2, 7/24/5

गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरित मानस में राम नाम स्मरण का महत्व प्रतिपादित करते हुए एक छन्द लिखा है –

मंगल करनि, कलिमल हरनि तुलसी कथा रघुनाथ की।
गति कूर कविता सरित की ज्यों सरित पावन पाथ की।।
प्रभु सुजस संगति भनिति भलि होइहि सुजन मन भावनी।
भर अंग भूति मसान की सुमिरत सुहावनि पावनी।।

राम तो मंगल भवन और अमंगल नाशक है, इसीलिए त्रिपुरारी शंकर और उमा निरन्तर जप करते है। –

मंगल भवन अमंगल हारी। उमा सहित जेहि जपत पुरारी।।
वन्दउँ नाम राम रघुवर को। हेतु कृसानु भानु हिमकर को।।
विधि हरि हरमय वेद प्रान सो। अगुन अनूपम गुन निधान सो।।

राम काव्य में तुलसी ने अपने परमाात्म बोध ज्ञान द्वारा संसार के प्राणी मात्र को यही संकेत दिया है, कि इस भौतिक जगत् से पारभौतिक जगत् का सुगम पथ प्रदर्शक परमात्मा राम के अतिरिक्त और कोई नही हो सकता अतः उन्ही की शरण का आश्रय लेना सम्पूर्ण प्राणी जगत् के लिए हितकर होगा।

राम काव्य में परमात्म बोध हेतुक भक्ति –

परम शक्ति की अनुभूति हेतु विभिन्न विधियों में भक्ति योग सर्वोत्कृष्ट है। गीता के आठवें अध्याय में कहा गया है, जो मनुष्य भौतिक शरीर का त्याग करते समय कृष्ण का ध्यान करता है, वह परमधाम को तुरन्त चला जाता है। इसका निष्कर्ष यही है, कि मनुष्य को भगवान के सगुण रूप के प्रति अनुशक्त होना चाहिए, क्योकि वही चरम आत्म साक्षात्कार है। राम काव्य में परमात्म बोध हेतुक भक्ति का वर्णन कई स्थलों पर आया है।

गोस्वामी जी राम की आनन्दकन्दता, परम मंगलमयता तथा सकल कल्याण गुणैकनिलयता आदि रहस्यों से पूर्ण परिचित थे। पद्म पुराण के प्रायः सभी खण्डों में रामचरित एवं उनकी भक्ति का वर्णन व्यास जी ने बार बार किया है, क़िन्तु पद्म पुराण का पातालखण्ड तो आद्योपान्त राम भक्ति और भगवान राम के उपदेशों मे ही पर्यवसित है। इसका दूसरा नाम रामाश्वमेघ भी है। इसमें आरण्यक मुनि और लोमश मुनि के सम्वाद के वर्णन में परमात्मा राम की अपार महिमा निरूपित है। प्रायः सभी प्रकार के वर्ण, आश्रम–व्यवस्था और स्थिति वाले व्यक्तियों के संसार तरण के लिए उपाय पूँछने पर महर्षि लोमश जी ने आरण्यक मुनि से राम नाम और राम भक्ति की महिमा बतलायी। जिसके आश्रवण से महापापी भी इस संसारार्णव से सहज ही पार हो जाते है।

परमात्म बोध हेतुक भक्ति के तीन प्रकार है– नाम – जप, भगवत् चरित और भगवत् भक्ति। इन तीनो का आश्रय हो तो परमात्मा को प्राप्त करने में रंच मात्र भी कठिनाई नही होती। भगवान कृष्ण ने गीता में कहा है, कि "जो मनुष्य अपने सारे कार्यो को मुझमें अर्पित करके अविचलित

भाव से मेरी भक्ति करते हुए मेरी पूजा करते है, और अपने चित्त को मुझ पर स्थिर कर निरन्तर मेरा ध्यान करते है। उनको मै जन्म–मृत्यु के बन्धन से मुक्त कर देता हूँ।"[1]

योगाभ्यासी तो अपनी आत्मा को योग द्वारा इच्छानुसार किसी भी लोक में ले जा सकते है, लेकिन भक्तों को भगवान स्वयं अपने वाहन गरूण पर बैठाकर यथेष्ठ स्थान परमधाम ले जाते है।[2] ऐसे भक्त को परम धाम जाने से पूर्व अनुभवी बनने के लिए प्रतिक्षा नही करनी पड़ती। और न ही उसे अष्टांगयोग की आवश्यकता है, न किसी योगाभ्यास की आवश्यकता है, उसे केवल राम नाम का जप करने की आवश्यकता है।

राम के अद्‌भुत प्रभाव का वर्णन करते हुए महात्मा गाँधी ने कहा था – कि राम नाम प्रभाव से ही समुद्र पर पत्थर तैरने लगते है। राम नाम के बल से वानर सेना ने रावण के छक्के छुड़ा दिये, राम नाम के प्रभाव से हनुमान जी ने पर्वत उठा लिया और राक्षस (रावण) के यहाँ अनेक मास तक रहने पर भी सीता ने अपना सतीत्व बचा लिया। भरत ने चौदह वर्षो तक अपना साहस संजोये रखा, क्योकि भरत के मुख से राम नाम के सिवा कुछ नही निकलता था। इसीलिए हिन्दी राम काव्य के प्रणेता गोस्वामी तुलसीदास जी ने कलिकाल के मल को धो डालने के राम नाम जपने पर बल दिया।आगे गाँधी जी कहते है, कि मेर विश्वास है कि राम नाम उच्चारण का विशेष महत्व है। अगर कोई जानता है, ईश्वर सचमुच उसके ह्रदय में वास करता है तो मै जानता हूँ, कि उसके लिए राम जपना अत्यन्त जरूरी है। मेरा अपना अनुभव है कि मुख से राम नाम जपने में एक अजीब अनोखापन है। क्यो या कैसे? यह जानना जरूरी नही है।[3]

स्वामी बल्लभाचार्य ने परमात्मबोध हेतुक भक्ति की पुष्टि मर्यादा – पुरूषोत्तम श्री राम के कतिपय चरित्र पुष्ट लीला के अनुरूप मानी है, यथा अहिल्या का उद्धार, शबरी का अतिथि सत्कार तथा समस्त अयो– ध्या वासियों को लेकर स्वधाम गमन तथा सेतु बन्धन आदि। परमात्म बोध हेतुक भक्ति के विभिन्न सोपानों में कुछ प्रमुख सोपानों में गुण रूप लीला स्वरूप के कीर्तन प्रमुख है। परन्तु उनमें से कुछ प्रमुख सन्तो का भी महत्वपूर्ण योगदान तुलसी के लिए अवश्य स्मरणीय है। नरहरिदास, काक–भुसुण्डि, एक प्रेतात्मा, अंजनी नंदन हनुमान जी, गोकुल नाथ, सूरदास, मीराबाई आदि के पश्चात भगवान शंकर ने उनको (तुलसी) राम काव्य की रचना हेतु स्वपन में दर्शन देकर प्रेरित किया। वही से परमात्मा की हेतुक भक्ति तुलसीदास के मानस पटल पर अवस्थित हो गयी। परमात्म बोध हेतुक भक्ति राम काव्य की विशिष्टता ही नही एक चरमोत्कर्ष परिणति भी है। राम चरित मानस विश्व के हिन्दी–साहित्य का वह ध्रुवतारा है जिसकी प्रस्थिति सदैव अक्षण्ण रहेगी। यद्यपि संस्कृत में राम कथा साहित्य पर बहुत कुछ लिखा गया, लेकिन तुलसीदास का अपना एक अलग ही दर्शन है।

---

1 – गीता – 12/7

2 – नगामि परमं स्थान मर्चिरादिगतिं विना।

गरूड स्कन्ध मारोप्य यथेच्छमनिवारितः।। (वाराह पुराण 7/3/5)

3 – गाँधी विचार दर्शन

राम कथा के लोक पावन चरित्र श्रवण, मनन और निदिध्यासन कर आज भी विभ्रान्त मानव सत्पथानुगामी बन कर परमात्मा राम की महिमामयी हेतुक भक्ति का सद्भावन बन जाता है, तथा परमात्मा राम के दुर्लभ मधुर दर्शन का सौभाग्य प्राप्त कर लेता है। तुलसी साहित्य में राम का सम्पूर्ण चरित्र इतना आदर्श और महान है कि उनके स्मरण मात्र से ही त्रिविध ताप एवं पातकोपपातक पल भर में प्रणष्ट हो जाते है। असीम बल निधान श्री हनुमान निज परमात्मा राम के युगल पद पंकज में सदा अनुरक्त रहते है। प्रभु श्री राम की इच्छित सेवा सामग्री को सतत् प्रस्तुत करना कैसी आदर्श और उत्कृ –ष्ट भक्ति का निदर्शन है।

परमात्मा पुरूषोत्तम श्री राम का त्रैलोक पावन मंगल चरित्र मानव जीवन के यथार्थ का द्योतक है, और उनकी विशुद्ध हेतुक भक्ति सर्वोत्कृष्ट एवं दिव्याति दिव्य है। परमात्मा राम का नयनाभिराम अद्भुत चरित्र श्रुति, स्मृति, पुराण, तन्त्रशास्त्र, धर्मशास्त्र, बाल्मीकि रामायण, अध्यात्म रामायण, पद्म पुराण, नारद पुराण आदि में सन्त महात्माओं द्वारा भव्य, सरस और अति विस्तृत रूप से वर्णित है, परन्तु गोस्वामी जी ने जिस अनूठे प्रकार से मानस का प्रणयन किया, वह अद्वितीय है। इसके साथ–2 श्री निम्बार्क सम्प्रदाय के पूर्वाचार्य एवं परवर्ती आचार्यो ने परमात्मा राम की जिस हेतुक भक्ति का अतिलिखित भाषा में वर्णन किया है, वह अति प्रकृष्ट और अद्वितीय है।

भक्ति हेतु आंञ्जनेय कृपा की आवश्यकता –

परात्पर पूर्ण ब्रह्म श्री राम का अवतार चतुर्व्यूहात्मक न होकर पंचायतन रूप में भी वर्णित है। एक ही ब्रह्म विभूति जहाँ चतुर्धा विभक्त होकर आविर्भूत हुई, वहाँ उसी के अनन्य अंग श्री हनुमान जी भी है। तत्कालीन विश्व में अद्भुत, अलौकिक दिव्य, आनन्दामृत सिन्धु में प्रफुल्लित श्री राम के चरणसरोज के दिव्याति दिव्य सौरभ के सहजोन्नमत्त भ्रमर दो ही हुए एक श्री भरत और दूसरे हनुमान जी।

रघुपति कीन्ही बहुत बड़ाई। तुम मम प्रिय भरतहिं सम भाई।।[1]

इसी कारण गोस्वामी तुलसीदास जी के शब्दों में श्री राम ने हनुमान जी से कहा था – "तै मम प्रिय लक्षिमन ते दूना।" श्री हनुमान जी राम भक्तों के परमाधार है और श्री राम की भक्ति और दर्शन के अग्रदूत है। हर भक्त को श्री हनुमान जी से सहज प्रेम, आश्रय और स्नेहपूर्वक रक्षा प्राप्त होती है। सूर वीरता, दक्षता, बल, धैर्य, विद्वता, नीतिज्ञान, पराक्रम और प्रभाव आदि सभी गुण हनुमान जी में ही आश्रय पाकर कृतार्थ है। श्री रामचरित की अनुपम महामाला के रत्न श्री हनुमान जी है। अग्निबीज 'रं' को विस्तृत कर श्री राम विरोधी राक्षस सेना और स्वर्णमयी लंका को भस्म करने और श्री राम भक्तों के दुःख, शोक, दीनता, दरिद्रता, आदि–व्याधि, संताप तथा अज्ञान –अंधकार को ज्ञान अग्नि द्वारा छिन्न भिन्न कर देने के कारण श्री हनुमान जी, श्री राम नाम के 'रं' बीज के प्रतीक है।[2]

1 – हनुमान चालीसा

2 – गोष्पदीकृत वारीशं मशकीकृत राक्षसम्।

रामायण महामालारत्नं वन्देऽनिलात्मजम्।। (रामायण महामाला)

इसीलिए यह स्पष्ट है कि राम – भक्ति अंजनी नंदन आंजनेय की कृपो के बिना नितान्त दुष्कर है। रामचरित मानस के हनुमान जी रत्न है। वस्तुतः श्री रामचरित्र का वर्णन श्री हनुमान जी के वर्णन के बिना अधूरा रह जाता है। परब्रह्म श्री राम के मानव अवतार में अपनी महती भूमिका निभाने के लिए अन्य देवताओं के समान श्री हनुमान जी भी वानर योनि में पैदा हुए और अपनी अनन्य सेवा भक्ति के द्वार प्रभु श्री राम के राजकार्य में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते रहे। राग–द्वेष, छल–प्रपंच आदि से रहित हनुमान जी मात्र राम सेवा में ही निरत रहने वाले है।[1] इसीलिए हनुमान जी की कृपा के बिना राम भक्ति नितान्त दुष्कर है। क्योकि राम–भक्ति के द्वार पर हनुमान ही रक्षक है, उनकी आज्ञा और अनुमति के बिना भक्ति मार्ग में प्रवेश सम्भव नही है। तुलसीदास जी इस सत्य को बड़ी सहजता से घोषित करते है।

राम दुआरे तुम रखवारे। होत न आज्ञा बिनु पैसारे।।[2]

अंजनी नंदन आंजनेय की शरण प्राप्त कर लेने पर ही भक्त को राम भक्ति का सर्वसुख (परमात्म बोध) मिल पाता है। परम रक्षक हनुमान के होते हुए भक्त को किसी का भय नही हो सकता –

सब सुख लहै तुम्हारी सरना। तुम रक्षक काहू को डरना।। (हनुमान चालीसा)

हनुमान जी की दास्य भक्ति गागर में सागर के समान है, संजीवनी बूटी लाना, सीता का पता लगाना, राम सुग्रीव का मैत्री कराना, भयंकर राक्षसो का मर्दन करना आदि उनकी सेवा के ज्वलन्त उदाहरण है।सेवा में वे इतने दतचित्त है कि भगवान राम की जम्हाई लेने पर चुटकी बजाने जैसी छोटी–2 सेवा में भी कोई चूक नही करतें। वास्तव में हनुमान जी का सेवाचातुर्य अतुलनीय है। वे श्री राम जी के मानस अन्तराल में उठने वाले सूक्ष्मातिसूक्ष्म भावों को भी जान लेते है। और तदनुरूप सेवा में तुरन्त संलग्न हो जाते है। कब क्या करना है किससे कैसा व्यवहार करना है? आदि जीवन की छोटी से छोटी घटना से लेकर बड़ी से बड़ी घटना मुह तक भी उनकी दास्य भाव के प्रभाव एवं चमत्कार से अछूते नही है। प्रेमाभक्ति मे तो वे विप्रलम्भ परकीया निष्काम भाव की पराकाष्ठा का भी अतिक्रमण कर जाते है। लौकिक जगत में उन्हे सर्व समर्थ अर्थात अष्टसिद्धि और नव निधि के दाता भी कहा गया है।

भक्त शिरोमणि हनुमान जी के कार्यकलाप, आचार–विचार एवं व्यवहार केवल हिन्दू के लिए ही नही है, अपितु मानव मात्र के लिए परम कल्याणकारी, नैतिक एवं आध्यात्मिक शिक्षा है। जिनके आचरण को अपनाने से भगवान राम की परा–अपरा दोनो प्रकार की भक्ति की सम्प्राप्ति हो जाती है। श्री हनुमान जी का निष्काम कर्मयोग अथवा दास्य भक्ति एक ऐसी निगूढ़ रहस्यात्मक चाभी है, जो प्रेय और श्रेय के तालों को बड़ी सुगमता से खोल देती है। वह इतनी परिपूर्ण लाभप्रद कल्याणमयी है, कि आज भी मानव इस साधना में परिनिष्ठित होकरा अतिशीघ्र शान्ति, संतोष एवं चरमोत्कर्ष को प्राप्त कर सकता है।

---

1 – वाल्मीकि रामायण – उत्तरकांड 35 / 2,3,8,9

2 – हनुमान चालीसा

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की यह कल्पना उचित ही थी, कि सम्भवतः गोस्वामी जी ने लोक–रक्षक आदर्श–पुरूष, मर्यादा पुरूषोत्तम रूप को अवतारी मानकर समाज के पुरूत्थान का कार्य किया। गोस्वामी जी द्वारा कृत यह कार्य जहाँ तक एक ओर वैष्णव उपासना में रामानुज, रामानन्द और औपनिषद दर्शन दृष्टि का लोक–सुधारक समन्वित रूप है, वहीं दूसरी ओर युग–बोध और युगीन संकट बोध से प्रेरित जन–जीवन में सामाजिक, सांस्कृतिक कान्ति का भी प्रयास है। गोस्वामी जी का राम दर्शन समाज चेतना से अनुप्राणित है। श्री राम–कथा, श्री रामचरित और श्री राम–भक्ति के माध्यम से गोस्वामी जी ने अपने अन्तःकरण के सुख की अनुभूति के साथ–2 लोकहित और समाज सेवा का भी कार्य किया है।

श्री राम की आदर्श–पूजा और आदर्श–प्रतिष्ठा तक गोस्वामी जी को पहुँचाने वाले साधको में हनुमान जी का स्थान अत्यन्त महत्व का है। इसलिए राम काव्य में भक्ति की आराधना के पूर्व आंजनेय कृपा की अति आवश्यकता है। किंवदन्ती के अनुसार श्री राम रूप का प्रत्यक्ष दर्शन कराने वाले साधन के रूप में हनुमान जी की सहायता सर्वोपजि थी। हनुमान जी के समग्र जीवन में कहीं भी कोई स्वार्थ नही है, वे काम, कोध, लोभ, मोह और दर्प पर विजय प्राप्त कर चुके थे। यद्यपि शत्रु संहार के समय रौद्र–रस के अवतार पर उनमें कोध अवश्य झलक जाता है, परन्तु वह वस्तुतः वीर रस सम्बद्ध संचारी–भाव है।

स्वामी–सेवा और समाज–सेवा के लिए जैसा आदर्श समर्पित जीवन हनुमान जी का है, वैसा उदाहरण अन्यत्र दुर्लभ है। वीरता और कर्तव्य–निष्ठता में उनका स्थान सर्वोपरि है। जिस प्रकार के असाध्य और अवर्णनीय कर्मों का उन्होंने सम्पादन किया, वे सब वर्णनातीत है, फिर भी निरभिमान रहे। यह उनका सबसे बड़ा गुण है।

सर्ववन्द्य राम–भक्त हनुमान की महत्ता के सम्बन्ध में स्वयं श्री राम अगस्त्य ऋषि से कहते है–

शौर्यं दाक्ष्यं बलं धैर्यं प्राज्ञतानय साधनम्।
विक्रमश्च प्रभावश्च हनुमति कृतालया।।
न कालस्य, न शकस्य, न विष्णोर्वित्तपयश्य च।
कर्माणि तानि श्रूयन्ते यानि युद्धे हनुमतः।।
एतस्य वाहुवीर्येण लंका सीता च लक्ष्मणः।
प्राप्ता मया जयश्चैव राज्यं मित्राणि बान्धवाः।।[1]

1 – बाल्मीकि रामायण, उत्तर कांड 35/2,8,9

शौर्य, दक्षता, बल, धैर्य, बुद्धिमत्ता, राजनीतिज्ञता, पराक्रम और प्रभाव इन सभी सद्‌गुणों ने हनुमान के भीतर घर कर रखा है। युद्ध में हनुमान के जो पराक्रम देखे गये है, वैसे वीरतापूर्ण कर्म न तो काल के, न इन्द्र के, न विष्णु के और न कुबेर के सुने जाते है। इन्हीं हनुमान के बाहुबल से लंका, सीता, लक्ष्मण, विजय, राज्य तथा मित्र, बन्धुजन मुझे मिले है।

इसी प्रकार अयोध्या में राज्याभिषेक के पश्चात सुग्रीव, जामवन्त एवं विभीषण को विदा करते समय हनुमान का आलिंगन कर राम अपने मनोभाव व्यक्त करते है–

"तेरे द्वारा किये गये एक–एक उपकार के बदले एक–एक प्राण भी दे दूँ, तो भी उन उपकारों से मै उऋण नही हो सकता। पाँच प्राण है और उपकार अनन्त है। तेरे शेष उपकारों के लिए मै तेरा ऋणी ही रह जाऊँगा। मै तो यही चाहता हूँ, कि तूने जो उपकार किये है, मे सब मेरे शरीर ही मे पच जाए, उनका बदला चुकाने का मुझे कोई अवसर न मिले, क्योकि पुरूष में उपकार का बदला पाने की योग्यता आपत्ति काल में ही आती है। मैं नही चाहता कि तू संकट में पड़े और मै तेरे उपकारों का बदला चुकाऊँ।"

इतना कहकर श्री राम ने चन्द्रमा के समान सुन्दर तेजस्वी हार अपने कण्ठ से उतार कर हनुमान के गले में बांध दिया।[1]

चतुर लोग उस शरीर का आदर करते हैं जिस शरीर से श्री राम जी से प्रेम होता है। इस प्रेम के कारण ही श्री शंकर जी अपने रूद्र देह को त्याग कर हनुमान बन गये। श्री राम की सेवा में परम आनन्द जानकर पितामह–ब्रह्मा सेवक जाम्बवान बन गये।

इस समय भारत में अर्थ तथा काम असंयमित और धर्म नियंत्रित ने होने से भोगोन्मुख भक्ति अमर्यादित कामाचार, अभक्ष्य–भक्षण, प्रवत्तियों में फंसकर विमोहित हो किंकर्तव्य विमूढ़ हो रहा है। जहाँ कहीं थोड़ी बहुत धार्मिकता और आध्यात्मिकता के अंश है भी, वहाँ उनके आचरण में दम्भ, ईर्ष्या, द्वेष, पाखण्ड आदि दुष्प्रवत्तियाँ दृष्टिगोचर हो रही है। ऐसी विषम दुखद स्थिति में अंजनी नंदन आंजनेय की साधना, आराधना परमावश्यक है, जिससे सबका कल्याण हो सके।

1 – बाल्मीकि रामायण उत्तर 40/23,24,25

अध्याय - षष्ठ

षष्ठ अध्याय

हिन्दी राम काव्य मे आंजनेय भक्ति से तुलसी की उपलब्धि

श्री राम जैसे स्थावर जंगात्मक जगत मे सर्वत्र व्याप्त है वैसे ही रामचरित भी किसी न किसी रुप मे सर्वत्र प्रसिद्ध है। रामचरित के विषय में आर्ष ग्रन्थ के रुप में बाल्मीकीय रामायण, अध्यात्म रामायण, आनन्द रामायण, अद्भुत रामायण, भुसुण्डि रामायण, रामचरित मानस सर्वाधिक मान्य है।रामचरित मानस केवल भारत ही में नहीं, अपितु वैदेशिक संस्कृति में भी भगवान श्री राम के मंगलमय पावन चरित्र के अनेक आयाम भरे पडे है। रामचरित मानस के रचयिता तुलसीदास को जो विशिष्ट उपाधि सर्वाधिक रुप से मिली उसके मूल मे अंजनी नन्दन आंजनेय की भक्ति का प्रतिफल है।

(क) तुलसीदास की काव्योपलब्धि –

भारतीय जीवन मे राम नाम उसी प्रकार अनुस्यूत है जिस प्रकार दुग्ध मे धवलता। सन्त हदय सदा से धर्म आदर्श और चरित्र के त्रिपथगा मूलोत्सव भगवान श्री राम को स्वीकार करता चला आया है। श्री राम के आदर्श चरित्र द्वारा ही उक्त तीनो विशेषताओ की उपलब्धि सम्भव होती है। भगवान श्री राम आदर्श मर्यादा के साक्षात विग्रहवान है। मानव जीवन की सुख शान्ति एवं समृद्धि का आगार बनाने के लिए जिन शास्वत मर्यादाओ के पालन तथा अंगीकरण की आवश्यकता है। भगवान श्री राम उनके समष्टिगत मूर्तिरुप है।

समस्त भारतीय जनमानस के लिए समान आदर्श के रुप मे भगवान श्री राम को उत्तर से दक्षिण तक सबसे उन्मुक्त कंठ से स्वीकार किया है। उत्तर मे गुरुगोविन्द सिंह जी ने कथा लिखी है, पूर्व में कृत्तिवास रामायण लिखी गयी है। महाराष्ट्र मे भावार्थ रामायण चलती है, तथा हिन्दी मे गोस्वामी तुलसीदास की रामायण रामचरित मानस है। लेकिन यह एक ऐसी रामायण है जो सम्पूर्ण भारत के जन जन मे समाहित है। अन्य किसी रामायण का उतना प्रचार प्रसार नही है, जितना रामचरित मानस का यह अनुपम उपलब्धि केवल हिन्दी राम काव्य की ही नही अपितु समूचे भारतीय वाड्मय की एक अनूठी देन है। जिसका श्रेय कविकुल भूषण भगवान राम के चरणारविन्दो के पराग के लोलुप भौरे गोस्वामी तुलसीदास जी को जाता है। वैसे उन्होने रामचरित मानस के अतिरिक्त और भी अन्य रचनाए की है। लेकिन रामचरित मानस उनका सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ है।

कहा जाता है कि जब काशी के पण्डितो ने ग्रन्थ की श्रेष्ठता पर सन्देह व्यक्त किया, तो विश्वनाथ मन्दिर मे सभी वेद शास्त्रो के नीचे रामचरित मानस को रखा गया, और मन्दिर के दरवाजो को बन्द कर ताला लगा दिया गया। प्रातः काल धर्म सभा के सभी सदस्यो एवं पण्डितो के समक्ष जब ताला खोला गया तो रामचरित मानस को सभी ग्रन्थो के उपर पाया गया। इसी घटना से काशी के सारे पण्डित गोस्वामी जी की इस काव्योपलब्धि का लोहा मानने लगे, और रामचरित मानस को श्रेष्ठता की सर्वोत्तम प्रमाणिकता भी दी गयी। कहा जाता है कि गोस्वामी जी की कवित्व शक्ति का स्फुरण काशी मे भी एक ब्राहाण के घर मे हुयी थी और वही से उन्होने सर्वप्रथम संस्कृत रचना प्रारम्भ की।

किंवदन्ती है, कि भगवान शंकर ने स्वपन मे श्री गोस्वामी जी को अपनी भाषा में काव्य रचना का आदेश दिया था। और कहा था, कि संस्कृत के क्लिष्ट के भँवरजाल मे मत पडो, मेरे

आर्शीवाद से तुम्हारी अपनी भाषा मे रंचित कविता सामवेद की तरह सफल होगी। शंकर जी के आदेशानुसार गोस्वामी जी अयोध्या मे जाकर रहने लगे। संम्वत 1631 मे उस वर्ष चैत्र शुक्ल पक्ष की नवमी के दिन वही योग आ गया जो त्रेता युग मे राम जन्म के समय था। उस दिन प्रातः काल हनुमान जी ने प्रकट होकर तुलसीदास जी का अभिषेक किया। शिव, पार्वती, गणेश, सरस्वती, नारद और शेष ने भी आर्शीवाद दिया। तत्पश्चात तुलसीदास जी ने रामचरित मानस की रचना प्रारम्भ की। दो वर्ष सात माह छब्बीस दिन मे यह अमर ग्रन्थ रामचरित मानस सम्पूर्ण हुआ। तदन्तर 1680 मे दोहावली 1682 मे पार्वती मंगल तथा विनय पत्रिका, राम लला नहछु ,वैराग्य संदीपनी, कवितावली, हनुमान वाहुक आदि भी लिखी और प्रकृष्टतम काव्योपलब्धि प्राप्त कर भगवान भूत भावन की कृपा से ध्रुव तारे की भक्ति हिन्दी काव्य साहित्य के मुक्ताकाश मे अव्यस्थित हो गये।

जो अनुराग भरी दृष्टि से श्री राम को निहारते है और उन्हे अनुग्रह भरी दृष्टि से श्री राम जी निहारते है, उनका जीवन धन्य है। गोस्वामी जी का कथन है, कि यह उपलब्धि मुझे हनुमान जी की प्रेरणा और भगवान

शंकर के आर्शीवाद से ही प्राप्त हुयी है। वे कहते है कि राम नाम की मणि के समान ऐसा प्रकाश है जिसे प्रज्वलित करने के लिए तेल बत्ती और दिया की आवश्यकता नही है। वह भगवत कृपामय स्वयं प्रकाशमान है। जो न कभी बुझता है, और न कभी मन्द होता है। इसलिये राम नाम रुपी मणि को जिह्वा मे रखो, जिससे भीतर अन्तःकरण मे तथा भौतिक जगह मे दोनो जगह आनन्द की प्राप्ति हो। राम नाम प्रकाशक होने के साथ–साथ एक संबल मंत्र भी है। जो दुःखो को दूर करने की चरम सामर्थ्य रखता है। इसी महामंत्र और परम प्रकाश को अपने ह्रदय मे धारण कर निर्विवाद रुप से सत्य है।

राम काव्य मे रामचरित मानस के अतिरिक्त गोस्वामी जी के शेष ग्यारह ग्रन्थ कम महत्वपूर्ण नही है। रामलला नहछू और पार्वती मंगलवास करके स्त्रियो के लिए लिखे गये थे। वे विवाहादि कार्यो मे गाये जाने योग्य सुन्दर ललित एवं माधुर्य गुण से युक्त पद है। वरवै रामायण गोस्वामी जी की प्रौढ़ रचना है। और काव्य दृष्टि से बहुत उच्चकोटि की है। परन्तु वर्तमान समय मे इसके बहुत कम छन्द उपलब्ध है। रामाज्ञा प्रश्नावली कहा जाता है एक ही दिन मे तैयार किया गया था। और गोस्वामी जी ने एक विशेष प्रसंग उपस्थित होने पर अपने मित्र गंगाराम ज्योतिषी के लिये लिखा था। यह ग्रन्थ ज्योतिष सम्बन्धी विचार के लिये है। यद्यपि राम कथा इसमे पूरी आ गयी है। यह प्रथम चार ग्रन्थो की अपेक्षा आकार मे बडा है, परन्तु कविता कोई विशेष महत्वपूर्ण नही थी। इसके कुछ दोहे रामचरित मानस मे मिलते है। वैराग्य संदीपनी बहुत छोटी परन्तु बहुत उत्तम पुस्तक है। इसमे गोस्वामी जी ने गुरु के लक्षण, सन्त के लक्षण, शान्ति का महत्व, राग द्वैष का परित्याग आदि की बाते लिखी है। जब हम देखते है भक्ति अथवा वैराग्य विषयक शास्त्र ग्रन्थ लिखने की अपार क्षमता रखते हुये भी उन्होने वैराग्य संदीपनी जैसा छोटा और अधूरा ग्रन्थ ही लिख छोडा है। इससे ऐसा ज्ञात होता है; कि या तो उनका यह वृहद ग्रन्थ अप्राप्य है या तो उन्होने ऐसे रीति ग्रन्थो के रुखेपन का अनुभव कर यह शैली ही त्याग दी और पौराणिको के अनुसार भक्ति ज्ञान और वैराग्य के तत्वो को हरि कथा मे

लपेट कर ही जनमानस के सामने रखना अधिक उपयुक्त समझा। मेरी दृष्टि में दूसरा पक्ष अधिक
तथ्यपूर्ण है, ऐसा मै मानती हूँ।

राम गीतावली, कृष्ण गीतावली, कवितावली और दोहावली भी एक उत्तम श्रेणी के ग्रन्थ
है, ऐसा आभास होता है। यदि वे स्वतंत्र रुप से लिखे भी गये हो तो उनमे और विशेष कर बहुत कुछ
काट छाँट की गयी और समय समय पर लिखे गये फुटकर छन्दो का समावेश कर दिया गया है। राम
गीतावली मे सीता निर्वासन के उल्लेख के साथ ही उसका एक बड़ा सुन्दर कारण भी दिया गया है,
गोस्वामी जी कहते है उस समय रामचन्द्र जी अपने पिता दशरथ की शेष आयु भोग रहे थे। इसलिये
सीता निर्वासन आवश्यक था। रामचरित मानस के राजा राम तो अपनी शक्ति के साथ "गिरा अर्थ जल
बीचि सम कहियत भिन्न न भिन्न " है। इसलिए वहाँ निर्वासन परलोक गमन आदि का विषय ही नही
है। कृष्ण गीतावली मे निर्गुण उपासना और विराट उपासना के बदले सगुण साकार द्विभुज रुप उपासना
की पुष्टि की गयी है। कवितावली के तो कई कवित्य बहुत सुन्दर है। दोहावली मे फुटकर दोहे बहुत
है। और उनमे अधिकांश तथा अत्यन्त भावपूर्ण है। कुछ विशिष्ट दोहे जो तुलसी मत पर भी पर्याप्त
प्रकाश डाल रहे है।[1] विनय पत्रिका भी गोस्वामी जी की प्रौढ़ रचना है। और रामचरित मानस के बाद
लिखी गयी है। क्या काव्य और क्या भक्ति भावना सभी दृष्टियो मे यह ग्रन्थ अपूर्व है। इसके अनेकानेक
पद याद करने योग्य है। विनय पत्रिका के 58वे पद मे गोस्वामी जी मोह को रावण प्रवृत्ति को लंका
बताया है। 91वें पद मे जीव के वास्तविक तत्व पर अच्छा प्रकाश डाला गया है। 135वें पद को ध्यान से
पढा जाये तो यह विदित हो जाएगा कि गोस्वामी जी भगवान शिव कृष्ण और राम मे कोई भेद नही
मानते। 136वें पद तो सिद्धान्त की दृष्टि से उत्तम है। 138वाँ पद तो भक्तो का सर्वस्व है। 162वे सन्त
स्वभाव की बडी

1— हिम निरगुन नैननि सगुन रसना राम सुनाम।
मनहुँ पुरत सम्पुट लसै तुलसी ललित ललाम।।
सगुन ध्यान उचि सरसि नहि निरगुन मतते दूरि।
तुलसी सुमिरहु राम को नाम सजीवनि मूरि।।
मोर—मोर सब कहँ कहसि तू को कहुँ निज नाम।
कै चुप साधिहि सुनि समुझि कै तुलसी जपु राम।।
जे जन रुखे विषय रस चिकने राम सनेह।
तुलसी ते प्रिय राम को कानन बसहि कि गेह।।
कै तोहि लागहि राम प्रिय कै तू प्रभु प्रिय होहि।
दुइ मँह रुचै जो सुगम सोकीजे तुलसी तोहि।।
प्रीति राम सो नीति पथ चलिय रागरस जीति।
तुलसी सन्तन के मते इतै भगत की रीति।। (तुलसी ग्रन्थावली भाग— 2)

सुन्दर मीमांसा है। 203वाँ पद भी अपने ढंग का निराला है। इसमें श्री कृष्ण और भगवान राम का ऐक्य है। 268वें नं० का तो पूरा पद ही कंठस्थ करने के साथ – साथ ध्यातव्य।[1]

गोस्वामी जी का सबसे महत्वपूर्ण ग्रन्थ रामचरित मानस है। इस ग्रन्थ की प्रशंसा मे जितना भी कुछ कहा जाय लिखा जाय कम है। क्या भाषा, क्या भाव, क्या सिद्धान्त, क्या रस परिषद, क्या प्रबन्ध चातुरी, क्या साधुमत, क्या लोकमत, क्या अतीत तथा क्या भविष्य पथ प्रर्दशन जिस दृष्टि से भी देखा जाए अति महत्वपूर्ण और अपूर्व ग्रन्थ है। सरलता तो इस ग्रन्थ की अपनी एक विशिष्ट विशिष्टता है। कि एक अशिक्षित व्यक्ति इसकी पंक्तियाँ सुनकर मुग्ध हो जाता है।और गम्भीरता ऐसी कि बड़े–बड़े विद्वान भी इसकी चौपाइयो के चमत्कार पर विचार करते हुये चक्कर खा जाते है। लोकोत्तर आनन्द देनें के लिए यह अनूठा काव्य ग्रन्थ है। परम शान्ति देने के लिए यह अनूठा भक्ति ग्रन्थ है। और समाज संस्कार के यह अनूठा नीति ग्रन्थ है। राम कथा प्रेमियो को यह सर्वस्व ही है। गरीब की झोपडी से लेकर महाराजाओ के महलो तक यह ग्रन्थ पूजा प्रतिष्ठा को प्राप्त करता है। इस ग्रन्थ कल्पद्रुम ने लाखो व्यक्तियो को परम शान्ति दी है। और करोड़ो को दिव्य आनन्द प्रदान किया है। तुलसीदास जी की काव्योपलब्धि की महत्वता का प्रधान आधार यही ग्रन्थ है, जिसके गौरव के साथ तुलसीदास जी का गौरव अभिन्न रुप से सम्बद्ध है। मैक्की साहब ने अपनी भूमिका मे लिखा है कि "गोस्वामी तुलसीदास जी के ग्रन्थो मे भक्ति का जो उच्च और विशुद्ध भाव आता है, उससे बढ़कर और कही नही दिखायी देता।"[2]

---

1 – तुम अपनायो जनिहौ जब मन फिर परिहै,
जेहि सुझाव विषयन लागो तेहि सजह नाथ सो नेह छाड़ि छल करिहै।
सुत की प्रीति प्रतीति मीत की नृप जो डर डरिहै।
अपनो सो स्वारथ स्वामी जो चहुँ विधि,
चातक ज्यो एक टेक ते न टरिहै।
हरषि है न अति आदरे निदरे न जरि मरिहै।
हानि–लाभ दुख सुख सबै समचित,
हित अनहित कलिकुचाल परिहरिहै।
प्रभुगुनि सुनि मन हरिषिहै, नीर नयननि ढ़रिहै।
तुलसीदास भयो राम को विश्वास,
प्रेम लखि आनन्द उमंगि उर भरिहै।
(विनय पत्रिका 331/268)

2 – "दि रामायण आफ तुलसीदास आर दि बाइबिल आफ नार्दर्न इंडिया"
{डा० जे० एम० मैक्की साहब भूमिका पृष्ठ 86}

बहुभाषा विज्ञ श्री ग्रियर्सन महोदय के कथनानुसार कि "तुलसी के समान आधुनिक काल मे अन्य ग्रन्थकार नही हुआ।"[1] भारत मे तुलसीकृत रामायण का स्थान सम्पूर्ण रामकाव्य हिन्दी साहित्य मे सर्वोपरि है, उसके प्रभाव का अति रंजित वर्णन नही हो सकता।[2] महात्मा गाँधी ने भी अपने विचारो को व्यक्त करते हुये कहा था कि तुलसीदास की रामायण मुझे अत्यन्त प्रिय है और उसे मै अद्वितीय ग्रन्थ मानता हूँ।

ख–तुलसीदास की लौकिक उपलब्धि –

कलिपावनावतार श्री गोस्वामी जी ने राम काव्य में प्रभु के नाम, रुप, लीला और धाम इन चारो विग्रहो को समान रुप से कलिकल्माष जन्म अमंगल के विनाशक और भगवद् प्रीति रुप परम मांगल्य के संपादक की संज्ञा प्रदान की है, यथा– "मंगल भवन अमंगल हारी'। "उमा सहित जेहि जपत पुरारी।" तथा "मंगल करनि कलिमल हरनि तुलसी कथा रघुनाथ की। " तुलसीदास जी की अपनी अभिव्यक्ति है, कि मेरे रामकाव्य मे और कोई गुण हो न हो, किन्तु जगत प्रसिद्ध महान गुण यह है, कि इसमे श्री राम का अत्यन्त उदार पावन तथा वेद पुराणादि का सार सर्वस्व नाम बार – बार कीर्तित हुआ है। यह श्री राम नाम समस्त मंगल का आलय है। तथा अमंगल का हरण करता है, जो लौकिक जगत के लिए अत्यन्त गुणकारी और मेरी सबसे श्रेष्ठ लौकिक उपलब्धि कही जा सकती है।

गोस्वामी जी ने प्रभु के लिए तमाम शिक्षाएं अपने रामकाव्य के द्वारा दी है यथा – माता –पिता की सेवा करना, गुरु भक्ति, नम्रता, सत्संग, पति पत्नी को सुखी रखने की चेष्टा, प्रजापालन, इतिहासादि का ज्ञान। इसी तरह वन प्रसंग में जटायु का उद्धार, शबरी सत्कार, धर्म विरूद्ध आचरण करने वाले बालि का बध आदि के द्वारा छुआछूत ऊँचनीच का भेदभाव आदि बुराइयो को समाप्त करने की सीख, श्री राम के आचरण के माध्यम से तुलसी ने अपने राम काव्य के द्वारा समाज को प्रदान की है। यद्यपि इसके पहले अनेक सन्तो ने राम कथा का बखान किया है, जिसमे नरसी मेहता, गुरू नानक मुस्लिम सन्त दादू, रज्जब दरिया साहब, पलतू दास, कबीरदास, मीराबाई प्रमुख है। इन कवियो के द्वारा ही लौकिक जगत् को बहुत कुछ सीख प्रदान की गई है। लेकिन जितना स्पष्ट सहज, सरल रूप से तुलसी ने सबको अपने राम काव्य की ओर आकर्षित किया उतना अन्य किसी से नही हो सका।

तुलसीदास जी इस लौकिक जगत मे प्रभु स्मरण की महिमा का वर्णन करते हुये कहते है, कि प्रभु के नाम स्मरण के साथ – साथ प्रार्थना की भी अनुपम महिमा है। प्रार्थना का अर्थ है, जीवात्मा का परमात्मा के साथ, भक्त का भगवान के साथ सक्रिय लगाव, अनन्य भक्ति एवं प्रेममय सम्बन्ध।

1– इण्डियन एण्टीक्वेरी 1893, पृष्ठ 85 {ग्रियर्सन}

2 – एनसाइक्लोपीडिया आफ रेलीजन एण्ड एथिक्स 1921, पृष्ठ 471

सच्ची प्रार्थना के समय दम्भ, मोह, छल, कपट आदि दोष अपने आप दूर हो जाते है। और प्राणी इस संसार की निस्सारता से दूर हटकर कुछ समय के लिए भगवद् भक्ति मे लीन हो जाता है। इसलिए भगवान नाम का स्मरण, कीर्तन और प्रार्थना शुद्ध हदय और निष्काम भाव से तनमय होकर किया जाना श्रेष्ठ उपाय है। ऐसी स्थिति मे साधक भगवान की अहैतुकी कृपामयी भक्ति का पूर्ण अवलम्बन प्राप्त कर लेता है, और उसका जीवन सफल हो जाता है। तुलसीदास की सहानुभूति स्वभावतः दरिद्रो और दुखियो के प्रति थी। वह उच्च वर्ग की समीपता ज्यादा पसंद नही करते थे। यदि ऐसा होता तो वह भी केशव की भॉति किसी राजदरबार मे उच्च सम्मान से विभूषित होते है। यही कारण है कि वे बड़े ही करूण और पश्चाताप पूर्ण शब्दो मे समाज की दुर्दशा का चित्रांकन किया है। वे कहते है कि इस लौकिक जगत में मनुष्य इतना गिर गया है, कि वह केवल भरण – पोषण की ही चिंता मे रहता है। और इसके लिए धर्म – अधर्म ही नही करता, बेटा बेटी तक बेचने को तैयार रहता है।[1] ऐसे पतितो की स्थिति यह है कि वह हरिश्चन्द्र और दधीचि जैसे महान् व्यक्तियो को भी गाली देते है, और अपने स्वार्थ साधन मे रत रहते है। यदि हम रामचरित मानस या विनय पत्रिका अथवा कवितावली के उत्तरकाण्ड को गम्भीरता से देखे तो पता चलेगा इस लौकिक जगत के लिए ग्रहस्थ धर्म और वैराग्य का जैसा वैज्ञानिक चित्र इन्होने अंकित किया है, वैसा कोई कवि नही कर सका। इससे सिद्ध होता है, कि उन्होने ग्रहस्थ जीवन के उतार चढाव देखे थे। ऐसा प्रतीत होता है, कि चित्रकूट मे उनके ज्ञान चक्षु खुले थे। विनय पत्रिका मे उन्होने अपने मन से कहा ऐ मन चेत और चित्रकूट चल। ऐसे कलि प्रभावित समय से जहॉ कल्याण पथ लुप्त है। और मोह माया बल बढ रहा है। राम पद अंकित पुण्य भूमि चित्रकूट की छटा का अवलोकन कर वह वन विहार राम का विहार स्थल है।[2] तुलसीदास की सम्मति में यदि राम से सच्चा स्नेह चाहिये, तो प्रेम पूर्वक चित्रकूट में निवास करना चाहिये। इसका कारण यह है, कि व्यर्थ वन पर्वतो पर भटका, बिना अग्नि के जला, परन्तु चित्रकूट जाने पर ही कलियुग की कुचाल का दर्शन हो सका, और समस्त प्रकार के लौकिक दुखो का विनाश हो गया।[3]

---

1 – ऊँचे नीचे करम धरम अधरम करि पेट पचत बेचत बेटा बेटी की।
तुलसी बुझाइ एक राम घनश्याम ही ते आगि बडवागिते वही है आग पेट की।।
(कवितावली, उत्तरकाण्ड छन्द 99)

2 – अब चित चेति चित्रकूटहि चलु
कोपित कलि लोपित मंगल मगु विलसित बढ़त मोह माया मलु।
भुमि विलोकि राम पद अंकित बन विलोकु रघुबर बिहार थलु।।
(विनय पत्रिका छन्द 24)

3 – अनिगिनत गिरि कानन फिर्‌यो बिनु आगि जर्‌यो हो।
चित्रकूट गये हो लखी कलि की कुचालि सब अब अपडरनि डर्‌यो हो।।
(विनय पत्रिका छन्द 264)

महात्मा तुलसीदास जी ने अपने जीवन मे नाना प्रकार के लौकिक, भौतिक दैनिक सभी कठिनाइयो को झेला था। ऐसा उनके विविध ग्रन्थो के अध्ययन से पता चलता है। फिर भी उन्होने पर्याप्त यश अर्जित किया। जो तुलसी वन की घास की भाँति थे। वे भगवान राम का नाम जपने के कारण तुलसीदास हो गये थे। दैन्य आत्म ग्लानि और आत्म विश्वास के साथ – साथ काव्य और भक्ति के क्षेत्र में उतरने वाले महात्मा तुलसीदास जी ने राम के समक्ष अवश्य अपनी हीनता दिखायी है। परन्तु वे दुष्टो और खलो के सामने वेद विदित मार्गो से हटकर चलने वालो से हार कर कभी भी आत्म सर्मपण नही किया। जैसा कि एक बार दिल्ली के बादशाह के बुलाने पर गोस्वामी जी राजदरबार मे उपस्थित हुये थे। कि बादशाह ने कहा कि आप कोई चमत्कार दिखाइये, इस पर गोस्वामी जी ने कही कि मै कोई चमत्कार नही जानता। बादशाह ने खीझकर उंन्हे कैद कर लिया। जेल मे जाते ही – "ऐसी तोहि न बूझिये हनुमान हठीले" की रचना की। फिर क्या था ? बानरो ने बडा उत्पात किया।महल मे कोहराम मच गया, बादशाह को बड़ी चोट आयी। फिर तो गोस्वामी जी को तुरन्त जेल से छोड़ दिया गया और तमाम अनुनय विनय करके उनसे अपराध क्षमा कराया गया। तत्पश्चात बादशाह ने उन्हे बड़े सम्मान के साथ विदा किया।

एक भुलई नाम का कलवार था। वह भक्ति पथ और गोस्वामी जी की निन्दा किया करता था। उसकी मृत्यु हो गई, लोग उसे शमशान घाट ले गये, उसकी रोती हुई स्त्री आयी और गोस्वामी जी को प्रणाम किया। गोस्वामी जी के मुँह से सैभाग्यवती होने का आर्शीवाद निकल गया। जब उसने अपने पति की दशा बतलाई तब तुलसीदास जी ने उसके शव को अपने पास मँगवा लिया। और राम नाम स्मरण करके उसके मुँह में चरणामृत देकर जीवित कर दिया। सभी उपस्थित लोगो ने गोस्वामी जी के चरणो को पकड़ लिया उसी दिन से गोस्वामी जी ने बाहर न बैठने का नियम ले लिया। इसी प्रकार गोस्वामी जी के सम्बन्ध में एक कथा और आती है। तीन बालक बड़े ही पुण्यात्मा थे। वे प्रतिदिन गोस्वामी जी के दर्शन के लिए आते थे। गोस्वामी जी उनका प्रेम पहचानते थे। वे केवल उन्हे दर्शन देने के लिए बाहर निकलते और फिर अन्दर चले जाते। जिन्हे दर्शन नही मिलता वे अप्रसन्न थे, और गोस्वामी जी पर पक्षपात का आरोप लगाते थे। एक दिन गोस्वामी जी ने उनका महत्व सब लोगो के सामने प्रकट किया। उन बालको के आने पर भी वह बाहर नही निकले। गोस्वामी जी का दर्शन न मिलने पर उन तीनो बालको ने अपने शरीर त्याग दिये। गोस्वामी जी बाहर निकले और सबके सामने भगवान का चरणामृत पिलाकर उन्हे जीवनदान दिया। इस प्रकार लौकिक जगत् मे भगवान राम की कृपा से अभूतपूर्व लौकिक उपलब्धि प्राप्त हुयी। तुलसीदास जी कहते है इसमे मेरा कोई श्रेय नही है। परमात्मा के स्वरूप में अतिशय तन्मयता हो जाने के कारण अपनेपन का कुछ मान नही रहता। जगत का सम्बन्ध छूट जाता है। देह का सम्बन्ध छूट जाता है। मन और बुद्धि की वृन्तिया संकल्प रहित हो जाती है। तथा देह मे रहते हुये भी देह के गुण का मान नही रहता। इस प्रकार परमात्मा की कृपा से लोगो को विश्वास न होने वाले भी कार्य भगवान के प्रेम भक्ति के भक्तो के द्वारा अनायास ही सिद्ध हो जाते है। और सामान्य लोगो के मन की भ्रम की गॉठ स्वतः ही खुल जाती है। अपनी प्रार्थना

सभा मे गाँधी जी ने कहा था कि "राम नाम खास व्यक्तियो के लिये नही होता, मन को एकाग्र कर राम नाम स्मरण करने मात्र से समस्त लौकिक दुख तिरोहित हो जाते है।"

रामचरित मानस से आकृष्ट हो कवीन्द्र, रवीन्द्र ने राम काव्य के वैशिष्ट का प्रतिपादन करते हुये कहा है, कि इसमें आदर्श ग्रहस्थ जीवन, सामाजिक जीवन, धार्मिक जीवन, राजनैतिक जीवन व्यतीत करने का मार्ग का विस्तृत वर्णन है। हिमगिरि के समान समन्वय यदि उदान्त व्यापक आदर्शो एवं सागर के समान गम्भीर विचारो का समन्वय यदि एक साथ कही मिलता है, तो तुलसी के राम काव्य में जो लौकिक जगत् हेतु उत्कृष्ट आचार संहिता है।

ग – परलौकिक उपलब्धि – –

भगवान श्री राम सत् स्वरूप है, चित् स्वरूप है और आनन्द स्वरूप है। इसीलिए उनका प्राकट्य भी सत् स्वरूप है, चित् स्वरूप है और आनन्द स्वरूप भी होता है। गोस्वामी जी ने इसी सच्चिदानन्द स्वरूप का आत्मदर्शन कर इस भौतिक जगत के भँवर जाल से निकल परमात्म तत्व के समीप्य को प्राप्त कर लिया।

जैसा कि गोसाई रचित एवं अन्याय ग्रन्थो किवंदन्तियो से ज्ञात होता है, कि गोस्वामी जी का प्रारम्भिक जीवन काल अत्यन्त कष्ट के दौर से गुजरा। इसके बाद संसारिक जीवन मे प्रवेश करने पर कामशक्ति की अतिरंजिता, पत्नी व्यामोह, पत्नी की फटकार एवं संसारिक त्याग आदि परन्तु इतना सब होने के बाद इतना महान गौरव प्राप्त कर लेना परमात्मा की कृपा के सिवाय और संभव नही है। यदि परमात्मा की कृपा नही होती तो तुलसीदास जैसे संसारी व्यक्ति राम के परमात्मतत्व के लौकिक अलौकिक एवं दिव्याति दिव्य लीलाओ का काव्यीकरण करते हुये राम भक्ति सुर सरिता नही बना सकते थे। भगवान श्री राम का निर्मल यशोगान समस्त पापो का नाश करने वाला है। वह इतना व्यापक है, कि दिग्गजो का श्यामल शरीर उज्जवल हो जाता है। इस यश का गान करते हुये बड़े–बड़े ऋषि मुनि देवता एवं पृथ्वी के राजागण अपने कमिनीय किरीटो से उनके चरण कमलो की सेवा करते है। तो मै (तुलसी) भी उन्ही रघुवंशो शिरोमणि भगवान श्री राम की शरण ग्रहण क्यो न करू। कहते है, कि कोढ हो जाने पर तुलसी ने हनुमान जी की प्रार्थना की। हनुमान जी प्रकट हुये, तुलसी ने अपना सारा कष्ट कह सुनाया। उस पर हनुमान जी ने कहा कि तुम विनय पत्रिका की रचना करो। सब ठीक हो जाएगा और वह हुआ भी। इस प्रकार अनेकानेक कष्टो से छुटकारा दिलाने वाला तथा सायुज्य मुक्ति प्रदाज्ञत्ता राम का परम सुन्दर नाम है।

संसार मे ऐसा कोई पाप नही है, जिसका राम नाम स्मरण करने से नाश न हो जाए। राम नाम मुक्ता फल के समान है। जिसका तीनो लोको में प्रकाश हो रहा है। इस मुक्ता फल को सज्जन रूपी हंस चुगते है। दुष्ट काग और बगुले नही चुग सकते। तुलसीदास जी कहते है, कि राम नाम शुभ चिन्तामणि के समान है। जो धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चारो पदार्थो को देने वाली है। इसकी महिमा स्वयं राम ही जानते है अन्य कोई नही। आगे विश्लेषण करते हुये कहते है, कि [illegible] नारायण रूप आकार से महाविष्णु, मंकार से महाशम्भु हुये। राम नाम के अन्दर ब्रह्म, जीव और तीनो

लोक है। क्षितिज, बीज, नक्षत्र, आकाश, नगर, ग्रह आदि सब राम नाम में ही अनुस्यूत है। जैसे एक जड़ को सींचने से ड़ाल पत्ते तीनो हरे हो जाते है। उसी प्रकार राम नाम के ध्यान से सम्पूर्ण सृष्टि का ध्यान हो जाता है। ऐसा विचार कर जो प्राणी राम नाम का उच्चारण करता है, उसके सभी अशुभ कर्म जल जाते है। राम नाम ही ज्ञान विज्ञान का मूल आधार एवं सुख का बीज तथा परलौकिक प्राप्ति का सुगम साधन है।

यद्यपि कृपा भगवान में रहने वाली शाश्वत स्वतः स्फूर्ति अहैतुकी शक्ति है। तथा वह कृ पा रूपी शक्ति अपने को अभिव्यक्त करने में या क्रियाशील होने के लिये किसी अन्य उत्तेजक या प्रेरक कारण की अपेक्षा नही करती, तथापि भगवान की सर्व भाव से सर्वात्मा शरणगति अनन्य भाव से स्मरण एवं कर्म भगवद् नुग्रहरूप मन्दिर के कपाट को खोल देने के अमोह साधन है। तुलसीदास जी कहते है, कि यह संसार नश्वर है, और पारलौकिक शान्ति प्रदान करने के लिये कृपा रूपी हवन कुण्ड में, जीव रूपी शाकल्य की आहुति देनी पडती है। इस प्रकार ईश्वर को सर्वागं रूप से समर्पण करते ही साधक कर्म फलो से विमुख हो जाता है। एवं उन कर्म फलो के प्रेरक कारण कामना, ममता एवं अहम् के मूल भी सूख जाते है। परिणाम यह होता है, कि जीव के कर्म बन्धन समाप्त हो जाते है। जैसे घास के बहुत से ढेर को एक छोटी सी चिंगारी भस्मसात् कर देती है, वैसे ही भगवद् कृपा का लेश मात्र जन्म– जन्मान्तर के कर्मो को नष्ट करने मे समर्थ हैं। तथा समस्त प्रकार के संसारिक बन्धनो से मुक्त कर पारलौकिक यात्रा को सफल बनाने मे पूर्ण सक्षम है। इससे ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पित होने मे ही जीवन की परिपूर्णता है। जब जीव अपनी बुद्धि, हृदय, मन एवं प्राण को पूर्णतया भगवद्कृपा के प्रति उन्मुक्त कर देता है, तब भगवद्कृपा अवतरित होकर उसमे दिव्य ज्ञान प्रेम शान्ति पवित्रता ज्योति तथा शक्ति भरकर उसको दिव्य बना देती है। जैसे प्रकाश की किरण क्षण भर मे ही कोठरी के सम्पूर्ण अंधकार को नष्ट कर देती है तथा उसे आलोकित कर देती हो। वैसे ही श्री राम कृपा पारलौकिक मुक्ति क्षण भर मे ही प्रारब्ध कर्मो को नष्ट कर भक्त के जीवन को ईश्वरीय ज्योति से भरपूर कर देती है। प्रसिद्ध मनोविज्ञान वेन्ता एवं दर्शन का जी० एस० ग्रीस ने अपनी पुस्तक मे लिखा है, कि ' इस नश्वर संसार मे जब भी कोई व्यक्ति पूर्ण आत्माहुति देता है। अपनी आत्मा को भगवद् प्रेम की ज्वाला में मिला देता है तब जो विस्फाट होता है उसी का नाम अनुग्रह है। इस धरती पर आहुति की गई कोई भी आत्माहुति कभी व्यर्थ नही जाती ।[1]"

"In this world of dust and din whenever anybody has a given complete Atmahuti Merging his self in the flame of love dinine there is an explosion which is grace. No true Atmahuti on earth can ever be in vein ."

Survival theory of God P.g. 240 by G.S.Grace

तुलसी का मत है, कि इस जीवन में भी हम शरीर और प्राण की सारी शक्तियो का उपयोग नही कर पाते है। अधिकतर मन प्राण और शरीर में से किसी एक या दो से तादात्म्य स्थापित कर उनके नियम अन्य पर आरोपित करते रहते है। फलस्वरूप हम जीवन की वास्तविक रचना के विषय मे न जानते हुये जीवन की आचार्य पद्धति ज्ञान और आनन्द की अवहेलना करते हुये अपने कर्म संकल्प और चिन्तन को इस संसार के विषय रूपी अज्ञान के हाथो में सौपकर इच्छाओ को भूलकर प्रयत्न और असफलताओ के साम्राज्य में लुढ़कते रहते है। अपने शुद्ध स्वरूप को न देखकर जगत के प्रति आश्चर्य चकित होते रहते है। कृपा भगवान का प्रेम है, जो जड़–चेतन जो सब पर बरस रहा है। इसी के माध्यम से जीव परम सत्य और चेतना की ओर अग्रसर होने लगा। इसके पूर्व यहॉ की प्रत्येक वस्तु ग्रहन और जड़ता मे निमग्न थी। संसार मे किसी से कुछ नही मॉगना चाहिये। यदि मॉगना ही हो तो जानकी नाथ श्री रामचन्द्र जी से मन मे ही मॉगो जिनसे मॉगते ही याचकता ;दरिद्रता,कामनाद्ध जल जाती है, जो बरबस जगत् को जला रही है। विभीषण की दशा का विचार करक देखे और अन्जनी नन्दन आन्जनेय का स्मरण करे। इस प्रकार तुलसीदास जी कहते है, कि दरिद्रता रूपी दोष को जलने के लिये दवानल की भॉति और करोड़ो संकटो को काटने के लिये कृपाण रूप श्री राम चन्द्र जी का नाम स्मरण ही श्रेयस्कर है।[1] पुत्र, कलत्र, घर, मित्र, परिवार इन महाकुसमाज समझना चाहिये। जो नर देह सबकी ममता त्याग कर समता धारण कर संत सभा में बैठकर सतसंग का लाभ नही लेता वह नर देह ही बेकार है। इस प्रकार तुलसीदास जी कहते है, कि ऐ मूढ़ नर अपने परलोक को न बिगाड़। लालची श्वान की तरह इधर–उधर मत भटक। केवल राम का भजन ही तुझे पारलौकिक मुक्ति प्रदान करेगा। कृषि को सफलता के लिए जैसे किसान का पुरूषार्थ एवं दैव कृपा के रूप में समय पर आकाश से दृष्टि दोनो आवश्यक है वैसे ही ईश्वरानुग्रह की सिद्धि के लिए भी जीव का भक्ति योग तप धर्माचरणादि एवं भगवान की कृपा दोनो का होना आवश्यक है। तभी पारलौकिक सुगति भी सम्भव है। पूर्ण श्रद्धा विश्वास शरणागति दीनता सच्चाई समर्पण प्रेम एवं गुरू निष्ठा होने पर जीवन मे पग–पग पर

---

1 – जग जाचिअ कोउ न जाचिअ जौ जिय जाचिअ जानकी जानहि रे।
जेहि जाचत जाचकता जरि जाइ जो जारति जोर जहानहि रे।।
गति देखु विचारि विभीषन की अरू आनु हिऍं हनुमानहि रे।
तुलसी! भजु दारिद–दोष–दवानल संकट–कोटि कृपानहि रे।।
सुत दार अगारू सखा परिवारू बिलोकु कुसमा जहि रे।
सबकी ममता तजि कै समता सजि संत सभा न बिराजहि रे।।
नर देह कहा करि देखु बिचारू बिगारू गॅवार न काजहि रे।
जन ड़ोलहि लोलुप कुकउ ज्यो तुलसी भजु कोसलराजहि रे।।
(कवितावली उत्तरकांण्ड 101,28,30)

ईश्वरानुग्रह के चमत्कार दिखाई देते है। करूणामय भगवान की करूणा का अनुभव कर जीव इस आसार संसार से पार हो जाएगा। यह निश्चित है केवल दृढ़ आस्था की आवश्कता है।

हिन्दी राम काव्य मानव जीवन को दिव्य उपदेश देकर अक्षय अविनाशी अखण्ड आनन्द स्वरूप परमात्मा को प्राप्त कराने वाला तथा मानव को अपने स्वरुप, अपने कर्तव्य, अकर्तव्य तथा मानवता के स्वरूप का पूर्ण ज्ञान कराकर एलौकिक तथा पारलौकिक परम कल्याण प्राप्ति का सुंदर सोपान है।

घ – हिन्दी राम काव्य में मोक्ष हेतुक राम और आञ्जनेय भक्ति –

अनेक प्रकार की ज्ञान विज्ञान की वार्ताओ और मंत्र विस्तार से दूर रहकर श्री शंकर जी के हदय धाम में शोभापाने वाले श्यामल शरीर भगवान श्री राम का भजन ही श्रेयस्कर है। जिस समय संसार में दुराचार, दुर्विचार परितः प्रसार होने लगता है। अहिंसा, सत्स, असत्तेय, धर्म, न्याय आदि मानवौचित सद्गुणो का अपमान होने लगता है, दम्भ का ही साम्राज्य तथा वेदशास्त्रोक्त वर्णाश्रम धर्म का विलोप होने लगता है। दैत्य दानवो का धरा पर साम्राज्य हो जाता है। सत्पुरूष अनीति से उद्विग्न हो उठते है। उस समय सर्वपालक भगवान किसी रूप में प्रकट होकर श्रुति सेतु का पालन करते और मनोहर मंगलमय परमपवित्र चरित्रो का विस्तार करके प्राणियो के लिये मोक्ष वर्णन मार्ग प्रशस्त कर देते है।

अभिज्ञो का मत है, यदि भगवान का विशुद्ध सत्वमय परम मनोहर मधुर स्वरूप प्रकट न होता तो अदृश्य, अग्र, अव्यपदेय, परमब्रम्ह के साक्षातकार की बात ही जगत से समाप्त हो जाती है। भगवान की मधुर मूर्ति एवं चरित्रो के मन के आशक्त हो जाने पर उसकी निर्मलता और एकाग्रता सहज में सिद्ध हो जाती है। निर्मल एवं एकाग्रचित ही भगवान के अचिन्त्य रूप के चिन्तन में समर्थ होता है। जैसे अन्जन द्वारा शुद्ध नेत्र से सूक्ष्म वस्तु का परिज्ञान सुगमता से हो जाता है। वैसे ही भगवान के चरित्र एवं उनके मधुर स्वरूप के परिशीलन से निर्मल होकर चित्त सूक्ष्म से सूक्ष्म भगवान के रहस्यो को समझ लेता है। महर्षि वशिष्ठ का जीवन तो राममय था। वे सदा उनकी भक्ति उपासना में डूबे रहते थे। उन्होने भगवान के प्रति अपनी अनन्य भक्ति जताकर सबको भक्ति करने का उपदेश दिया, क्योकि उनकी भक्ति का साधन सुगम और सरल था। उन्होने अपने हदय की बात अपने आराध्य के सामने खोलकर रख दी और यह स्पष्ट कह दिया कि प्रभु कर्म काण्ड आदि अन्य साधनो से साधक का अज्ञान जनित अभ्यन्तर मन का अन्धकार दूर नही होता। आपके चरणो की अत्यान्तिक, अनुरागात्मिका भक्ति ही हदय ग्रन्थि को फोड़कर मोक्ष के द्वार का दर्शन करा सकती है1।

---

1 – छूटहि मल कि मलहि के धोये।

घृत की पाव कोई बारि बिलोये।।

प्रेम भगत जल बिनु रघुराई। अभिअन्तर मल कबहूँ कि जाइ।। रामचरित मानस 7 / 49 / 5–6

श्री राम सकल जग प्रकाशक प्रेरक प्रवर्तक है। 'ईश्वर' पद से वाच्य माया सम्बन्ध से रहित इन्द्रियातीत मनोतीत बागतीत परमतत्व है। उनकी मोक्ष हेतुक कृपा तभी होती है। जब प्राणी उनमें आशक्त हो जाते है। तनिक भी दोष दृष्टि डालने पर से भक्त भी भगवान को नही पा सकता। राम तत्व सीता सिद्ध है। राम नाम साधन है, और श्री हनुमान जी साध्य है। राम तत्व की खोज करते समय साधक को साधना से विचलित करने के लिए काम, क्रोध आदि रूपी दैन्य दानवों का समूह कटिबद्ध रहता है, पर राम कृपा से सभी दुष्टों पर सभी बाधाओं पर विजय पाकर साधक राम तत्व सीता की गवेषणा में सफलता प्राप्त कर लेते है। "राम का नाम रूपी साधन साक्षात् मोक्ष का द्वार है। इसीलिए उनकी शक्ति का आश्रय लेकर एहिलौकिकता से उठकर पारलौकिकता को सवॉर लेना चाहिए।[1]" राम परमेश्वर है। उनमें प्रकृत धर्म कैसे हो सकते है। अलौकिक शक्ति से सम्पन्न राम प्राकृत धर्मों का आश्रय केवल लीला के लिए लेते है। लीला के श्रवण, कीर्तन, स्मरण द्वारा जीवों का कल्याण करते है। इसीलिए सम्पूर्ण प्राणियों को हनुमान प्रभु नाम में लीन होकर तनमयता के साथ प्रभु के गणों का श्रवण, मनन, चिन्तन करना श्रेयस्कर है। यही जीवन को सद्गति मोक्ष दिलाता है। "दुर्बोध आत्मतत्व सामान्य जीवों को बतलाकर उनको मोक्ष देने के लिए भगवान ने शरीर धारण किया।" (भागवत 10/87/21) अखण्ड ऐश्वर्य, अखण्ड धर्म, अखण्ड श्री, अखण्ड ज्ञान, अखण्ड वैराग्य तथा उत्पत्ति, विनाश भूत मात्रों की आने जाने की स्थिति विद्या और अविद्या ये सब जिसमें हो जाए और इन पर जिसका पूर्ण नियंत्रण हो वही भगवान हो सकता है। यह सब प्रभु राम में है। मिट्टी भी वही है, कुम्हार भी वही है। डोरा भी वही है, चाक भी वही है। डंडा भी वही है। अणु–अणु में राम ही रम रहा है, क्योकि राम मात्र वही इस जगत के अभिन्न निमित्त एवं उपादान करण है।[2] प्रभु श्री राम प्रमाण बल से काम न लेकर प्रमेय बल से ही काम लेते है। जीवों का साधन की अपेक्षा न रखकर अपनी ओर से ही सद्गति मोक्ष आदि देते है। भगवान के अवतार का आसाधारण कारण यही है, कि जीवों को उनकी क्षमता के आधार पर नही अपितु अपनी कृपा शक्ति से ही मोक्ष आदि प्रदान करना सामान्य तुच्छ से तुच्छ प्राणियों का परम कल्याण हो उसके लिये भगवान अवतार ग्रहण करते है। गणिका, गीध, अजामिल, शबरी, केवट आदि उसके ज्वलंत उदाहरण है।

---

1 – साधन धाम मोक्ष कर द्वारा।
पाय न जेहि परलोक सवॉरा।।
राम चरित मानस 7/56/10

2 – उत्पतिं च विनाशं च भूतानामागति गतिम्।
वेन्ति विद्यामिविद्या च वाच्यों भगवनिति।।
बाल्मीकि रामायण अयोध्याकांण्ड 37/32

कहा जाता है, कि भगवान किसी सामान्य जीव के गर्भ में देशकाल नगर, स्थान में कैसे आ सकते है। लेकिन ऐसा नही। जिस प्रकार जीवो के उद्धार के लिये पापियो के पाप के नाश के लिये गंगा के उपर बैकुण्ठ, कैलाश, स्वर्ग, हिमालय आदि से नीचे उतर कर भूलोक में हम सबके बीच आयी, उसी प्रकार परमात्मा श्री राम का लोकाहितार्थ श्री साकेतादि से नीचे अयोध्या में आना एक अवतार है। और उसके माध्यम से निरीह प्राणियो को मोक्ष प्रदान करना उनकी महान कृपा दृष्टि है। वे सर्वव्यापक है, उनकी व्यापकता अनंत है। वे आकाश की तरह सर्वव्याप्त है।[1] राम लीला के अनुपम रसिक श्री हनुमान जी है। वे भगवद् कथामृत पान से कभी नही तृप्त होते है।

कहा जाता है आज भी गन्धमाद्य पर्वत पर कदली वन में गांधर्व एवं अप्सराओं द्वारा राम लीला का गान श्रवण अवलोकन कर वे आनन्द विभोर रहते है। इतना ही नही जहॉ जहॉ राम कथा होती है, वहॉ वहॉ नत्मस्तक हो हॉथ जोड़कर कथामृत का पान करते रहते है। अन्जनी नन्दन आन्जनेय इसी वृन्त के आश्रम में लीन रहते है, इसीलिये उन्हे परमशक्ति की संज्ञा से अभिहित किया जाता है।

परमात्मा सगुण निर्गुण से अतीत है। उनका भजन करने वाला भी निर्गुण मोक्ष पद महानिर्वाण में स्वस्थ होता है। द्वैताद्वैत विलक्षण राम साक्षात् विष्णु अथवा उन महान परम परमेश्वर का भजन भक्ति भी जीव मात्र के लिये श्रेयस्कर है। भगवान परम ब्रम्ह राम का स्वरूप दुर्गेय है। राग बुद्धि से परे है, वाणी से अवर्णनीय है। उनका स्वरूप उन्ही की कृपा से भजनीय है, सेवनीय और चिन्तनीय है, अन्य किसी तरह नही। तत्वतः परमात्मा राम का स्वरूप साक्षात् राम है, और उस स्वरूप के तात्विक चिन्तन श्री हनुमान जी है, उन्होने अपना जीवन राम के सेवा के लिये ही धारण किया है। इसी प्रकार चित के समस्त दोषो के लय हो जाने पर राग, द्वेष, भय आदि के निर्मूल हो जाने पर शुद्ध चितमय भक्ति का उदय होता है। और यह भक्ति साधन भक्ति आदि की अपेक्षा उज्जवल होती है। क्योकि इसमें कोई कामना नही रहती है। इसीलिये इसे पराभक्ति सिद्ध या विशुद्ध भक्ति कहते है। तथा फिर यह कभी बाधित नही होती भक्त सदा इस भक्ति में लीन हो जाता है। और सर्वथा कृतार्थ हो जाता है। ऐसी स्थिति में समीप्य सालोक्य, सारूपय, सामुज्य आदि सभी पद मुक्तिपद उसके लिये किंकर के समान हो जाते है, ऐसी भक्ति की मुक्ति अनुचरी सी बन जाती है।

1– हरि अनंत हरि कथा अनन्ता।
कहहि सुनहि बहु बिधि बहु संता।।
राम चरित मानस 1–140–5
सत्यं ज्ञान मनन्तं ब्रम्ह तैन्तरीय उपनिषद् 2–1
रमन्ते योगिनोअनन्ते नित्यानन्दे चिदात्मनि।
इतिराम पदेनासौ परं ब्रम्हाभिधीयते।।
रामपूर्व तापिनी 1–6

श्री राम चन्द्र जी की भक्ति ही मोक्ष देनेवाली है, शुद्ध वुद्ध परमात्मा स्वरूप बालि विदीर्ण कर्ता विशुद्ध ज्ञान विग्रह, रघुनाथ रावण संहारक, वैकुण्ठनाथ, विष्णुरूप, यज्ञ स्वरूप, यज्ञ भोक्ता, योग स्वरूप, योगियो द्वारा द्वेष परमानन्द स्वरूप, शंकर प्रिय जानकी बल्लभ, भक्त वत्सल इन नामों का ध्यान स्मरण जो करता है, उसके हदय में भगवान श्री राम की मोक्ष हेतुक भक्ति सदा निवास करती है। और समूचे संसार में आदरणीय बनकर सुख पूर्वक बहुत समय तक जीवित रहता है। तथा जीवन के अन्त समय में उसे सीता और लक्ष्मण के साथ साक्षात् श्री राम ह्रदय में प्रत्यक्ष दर्शन देकर मोक्ष प्रदान कर देते है। भगवान राम की भक्ति ही साक्षात् मोक्ष का विग्रह है इसमें कोई सन्देह नही है। धर्म के परम आदर्श स्वरूप भगवान राम से हमें प्रेरणा मिलती है, कि जीवन को श्रद्धाभक्ति एवं पवित्र प्रेम की भावना से ओत प्रोत कर साथ ही उसके पावन चरित्र से शिक्षा ग्रहण कर तद्नुरूप व्यवहार कर हमें जीवन को सफल बनाना चाहिए।

उपसंहार –

इस प्रकार तुलसी के पूर्ववर्ती राम-काव्यों को देखकर निभ्रन्ति रूप से यह कहा जा सकता है, कि तुलसी के बाद उसका विकास अवरूद्ध नही हुआ। भाव एवं भाषा की दृष्टि से ये काव्य पर्याप्त समृद्ध है।

राम जन्म के अनेक कारणो की कल्पना, उनकी बाल पौगण्ड लीलाओ के वर्णन के साथ राम स्वर्गारोहण तक की कथा विभिन्न काव्यो में विन्यस्त है। भक्ति एवं अवतार की भावना के युक्त राम काव्यो में भी अनेक मौलिकताए दिखाई देती है। जिसका विकास उत्तरोत्तर समृद्धि होता गया भक्ति आवरण से हीन राम काव्य समाज में समादर को नही प्राप्त कर सके कथा क्रम में मौलिकता नवीन घटनाओ की दृष्टि से राम चन्द्रिका अवध विलास, राम विनोद, राम रसायन, साकेत सन्त, वैदेही वनवास, उर्मिला, कैकेयी, संशय की एक रात एवं अरूण रामायण उल्लेख काव्य है।

अवधी, ब्रज एवं खड़ी बोली में लिखे गये काव्य भाषा, शब्द भण्डार, काव्य गुण, अलंकार एवं छन्द की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है। मध्य युग में जहाँ व्याकरण का आभाव था फिर भी भाषा में वैविध्य है, प्रवाहमयता है। लयात्मकता है। श्रुति मधुरता एवं कोमलकान्त पदावली के लिए ध्वनि वर्ण योजना का आश्रय लिया गया है।

सांराश यह है कि राम कथा वर्णन के साथ नवीन एवं मौलिक घटनाओ के सृजन अप्राकृतिक तत्वो के परिहार, उपेक्षित पात्रो के साथ अन्य पात्रो का मनोवैज्ञानिक विकास तथा भक्ति के क्षेत्र में न्यून से न्यून भक्त को समान आदर सेवा भाव तथा उसकी भक्ति की पराकाष्ठा का विषद् वर्णन राम काव्यो में सर्वत्र मिलता है। भक्तवर अन्जनी नन्दन आन्जनेय सम्पूर्ण राम काव्य के केन्द्रीय धुरी के रूप में आख्यायित है। प्रायः सभी कवियो ने हनुमान जी की भक्ति को उत्कृष्टतम् रूप की संज्ञा देते हुए स्वीकार किया है। परन्तु वर्तमान छायावाद एवं प्रगतिवाद युग में कलात्मकता, साहित्यिकता और स्वतन्त्र आत्माभिव्यक्ति अधिकार भावना के परिणाम स्वरूप भाषा में अतिशय मसृणता एवं अर्न्तमुखी प्रवृत्तियाँ आ गई थी, जिससे पात्रगत शब्दावली का विलोपन होने लगा था। परन्तु तुलसी के राम काव्य में हनुमान जी विशिष्टतम चरित्र चित्रणो में से एक है। हनुमान जी तुलसी के राम काव्य के वह पात्र है, जिसके द्वारा सम्पूर्ण काव्य जीवन्तता को प्राप्त करता है।

अतुलित शब्द सम्पदा सटीक मुहावरो के प्रयोग तन्त्र विधान कोमल कान्त एवं श्रुति मधुर पदावदी ध्वनि वर्ण योजना प्रयोग वैविध्य की दृष्टि से तुलसी परवर्ती राम काव्यो में राम चन्द्रिका, अवध विलास, राम रसार्णव, राम विनोद, कवित्त रामायण, ध्यान मंजरी, राम की शक्ति पूजा के साथ साथ कवितावली, दोहावली, गीतावली; विनय पत्रिका, राम चरित मानस आदि उल्लेख काव्य है।

परिशिष्ट

सहायक सामग्री

संस्कृत :–

वेद	:	ऋग्वेद, अथर्ववेद, यजुर्वेद
ब्राह्मण	:	ऐतरेय, सतपथ, जैन उपनिषद, ब्राह्मण
उपनिषद	:	वृहदारण्यक, रामपूर्व, रामोत्तर, कठोपनिषद, श्वेताश्वेतोपनिषद
आरण्यक	:	तैत्तरीय, वृहदारण्यक
पुराण	:	हरिवंश, पद्मपुराण, ब्रह्म पुराण, विष्णु पुराण, स्कन्द पुराण, नारद पुराण, वाराह पुराण
संहिताएँ	:	हनुमत्संहिता, अगस्त्य संहिता, अष्टाध्यायी, आनन्द रामायण, काव्यादर्श, अध्यात्म रामायण, नारद भक्ति सूत्र, बाल्मीकि रामायण, काव्यालंकार सूत्र, महाभारत, नारद पांचरात्र, शाण्डिल्य भक्तिसूत्र, भक्ति मीमांसा, साहित्य दर्पण, तत्त्वदीप, श्रीमद्भागवत, प्रतिभा विज्ञान, चन्द्रालोक, शाण्डिल्य भाष्यसूत्र, श्रीमद्भगवद्गीता, ब्रह्मसूत्र, बुद्ध चरित्र, बेदसार शिवस्तव, दशरूपक, अश्वघोष, रामचरित मानस, हनुमान्नाटक।

हिन्दी :–

सन्त गोस्वामी तुलसीदास	:	रामचरित मानस, विनय पत्रिका, कवितावली, गीतावली, दोहावली, हनुमान बाहुक, रामाज्ञा प्रश्नावली, रामललानहछू, पार्वती मंगल, जानकी मंगल, वरवै रामायण, वैराग्य संदीपनी, हनुमान चालीसा।
डॉ० अमरपाल सिंह	:	तुलसी पूर्व राम साहित्य
अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"	:	वैदेही वनवास
आचार्य रामचन्द्र शुक्ल	:	गोस्वामी तुलसीदास (सप्तम संस्करण)
केशवदास	:	रामचन्द्रिका, कविप्रिया
डा० गंगाधर त्रिपाठी	:	अध्यात्म चिन्तन
डॉ० गार्गी गुप्त	:	रामचन्द्रिका का विशिष्ट अध्ययन
डॉ० जी०डी०कार्ल	:	अध्यात्म और दर्शन का सूक्ष्म निरूपण
पं० जनार्दन जी झा	:	हनुमत गुण गाथा संग्रह

झामदास : रामर्णव रामायण (अप्रकाशित)

नरेश मेहता : संशय की एक रात

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' : उर्मिला

बल्देव प्रसाद मिश्र : रामराज्य

बनारसी दास जैन : प्राकृत प्रवेशिका

भवानी लाल : अद्‌भुत रामायण

डॉ0 भागीरथ मिश्र : हिन्दी काव्य शास्त्र का इतिहास

मधुसूदन : रामाश्वमेघ

महाराज विश्वनाथ सिंह : बाल रामायण (अप्रकाशित)

मैथिलीशरण गुप्त : पंचवटी, साकेत

याकोबी : डास रामायण

राम गुलाम द्विवेदी : कवित्त रामायण

रसिक बिहारी : राम रसायन

रघुवीर शरण मिश्र : भूमिजा

रामनाथ ज्योतिषी : राम चन्द्रोदय

लाल दास : अवध विलास (अप्रकाशित)

डॉ0 शिवकुमार शर्मा : हिन्दी साहित्य युग और प्रवृत्तियाँ

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' : राम की भक्ति/पूजा, पंचवटी प्रसंग

डॉ0 सरयू प्रसाद अग्रवाल : हिन्दी साहित्य कोष

सन्त श्री हरखाराम जी : भक्तमाल

तुलसी ग्रन्थावली, वेदान्तसार, गीतावली, सिद्धान्त तिलक, मानस मार्तण्ड, मानस पीयूष, हनुमान चालीसा, वाराह पुराण, मथुरा महात्म्य आदि।

मानस पीयूष - लंका काण्ड

धर्मपथ, इन्द्रिरापति।